राजभाषा भारती

अक्तूबर 1981—मार्च '82 संयुक्तांक अंक 15-16

परिचर्चा

राजभाषा के सन्दर्भ में द्विभाषिकता

समस्याएं

और

समाधान

राजभाषा
विभाग
गृह मंत्रालय, भारत सरकार

सिद्धे शब्दार्थ सम्बन्धे लोकतः
अर्थ प्रयुक्ते शब्दप्रयोगे
शास्त्रेण धर्मनियमः
यथा लौकिक वैदिकेषु ।

—महाभाष्य (पस्पशा) पर वार्तिक

(लोक अथवा समाज द्वारा किसी विशेष शब्द का जिस अर्थ में प्रयोग किया जाता है वही अर्थ उस शब्द का सिद्ध अथवा प्रामाणिक अर्थ बन जाता है और फिर शब्दार्थ-प्रयोग के बाद शास्त्र द्वारा उसी को मान्यता दे दी जाती है । यह नियम लौकिक और वैदिक भाषाओं पर समान रूप से लागू होता है ।)

राजभाषा भारती

राजभाषा विभाग की त्रैमासिकी

वर्ष–5, अंक–15-16 (सरल और सुबोध भाषा का मुखपत्र) अक्तूबर 1981–मार्च '82

संपादक
राजमणि तिवारी

□

उप संपादक
रंगनाथ त्रिपाठी राकेश

□

पत्र व्यवहार का पता :
संपादक, राजभाषा भारती,
राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय,
लोकनायक भवन (प्रथम तल)
खान मार्केट, नई दिल्ली-110003

□

फोन : 698617, 617807

□

पत्रिका में प्रकाशित लेखों की अभिव्यक्ति से राजभाषा विभाग का सहमत होना अनिवार्य नहीं है ।

□

(निःशुल्क वितरण के लिए)

विषय-सूची

पृष्ठ संख्या

कुछ अपनी . . . कुछ आपकी . . . 2

1. राजभाषा हिन्दी के विकास की समस्या और साहित्यकार —डॉ० विजयेन्द्र स्नातक 5
2. विधि के क्षेत्र में राजभाषा का प्रयोग : —डॉ० मुरलीधर चतुर्वेदी 8
3. परिचर्चा : राजभाषा के संदर्भ में द्विभाषिकता : समस्याएँ और समाधान 11
   (1) —डॉ० गोपाल शर्मा
   (2) —डॉ० रवीन्द्र नाथ श्रीवास्तव
   (3) —डॉ० कैलाशचन्द्र भाटिया
   (4) —श्री ब्रज किशोर शर्मा
   (5) —डॉ० रवीन्द्र भ्रमर
   (6) —डॉ० न० व० पाटिल
   (7) —डॉ० एन० ई० विश्वनाथ अय्यर
   (8) —श्री राजकृष्ण बंसल
4. राजभाषा का आधुनिकीकरण . —डॉ० रमेश कुंतल मेघ 23
5. त्रिभाषा सूत्र के कार्यान्वयन में नागरी की भूमिका —डॉ० पांडुरंग राव 26
6. राजर्षि टंडन और राजभाषा हिन्दी . —राजमणि तिवारी 29
7. सर्व भारतीय साहित्य : शिखर की तलाश–2 (बांग्ला) —रंगनाथ राकेश 31
8. भाषा बहता नीर . . . (1) श्री कुबेर नाथ राय 34
   (2) कुछ उदाहरण
9. हिन्दी सलाहकार समितियों की बैठकें—कुछ प्रमुख निर्णय 38
   (1) गृह मंत्रालय . . .
   (2) उद्योग मंत्रालय . .
   (3) सूचना और प्रसारण मंत्रालय .
10. विविधा 45
    (1) भारतीय भाषाओं के संबंध में हिन्दी पुस्तकों का प्रसार
    (2) मैसूर में आयोजित दक्षिणी भाषाओं और भाषा वैज्ञानिकों का तृतीय अंतर्राष्ट्रीय सम्मेलन
    (3) फीजी की राजभाषा और हिन्दी . .
    (4) विभिन्न देशों में हिन्दी . .
11. बढ़ते कदम 50
12. समीक्षा 57
13. राजभाषा विभाग का वर्ष 1982-83 का कार्यक्रम 61
14. अतीत के झरोखे से . . . . तृतीय कवर पृष्ठ

कुछ अपनी

'राजभाषा भारती' के वर्तमान अंक के साथ हम पांचवे वर्ष में प्रवेश कर रहे हैं। इस पत्रिका के सम्बन्ध में समय-समय पर पाठकों ने जो विचार और सुझाव भेजे हैं, उनसे हमारा उत्साह बढ़ा है और हम इसकी परिधि, बढ़ाने के लिए निरन्तर प्रयत्नशील हैं। अब इसमें विचार प्रधान राजभाषा संबंधी लेखों के अतिरिक्त साहित्यिक लेखों को भी शामिल करने का प्रयास किया जा रहा है। जागरूक पाठक राजभाषा के विविध पहलुओं पर विभिन्न विद्वानों की सम्मतियों और विचारों से परिचित होने के लिए सदैव लालायित रहते हैं। अतः हमने इस अंक के लिए विशिष्ट विद्वानों से न केवल सामान्य विषयों पर लेख आमंत्रित किए थे, बल्कि "राजभाषा हिन्दी के संदर्भ में द्विभाषिकता: समस्याएं और समाधान" विषय पर परिचर्चा में सम्मिलित होने के लिए भी उनसे अनुरोध किया था। परिणाम स्वरूप हमें कई उच्च कोटि के विचारकों, भाषा-वैज्ञानिकों, प्रशासकों, प्राध्यापकों आदि के विचार प्राप्त हुए हैं, जिससे इस समस्या पर व्यापक प्रकाश पड़ता है। यह द्विभाषिकता चाहे हिन्दी और अंग्रेजी के संबंध में हो अथवा हिन्दी और प्रादेशिक भाषाओं के प्रसंग में, यह एक ऐसी व्यवस्था है, जिसके दीर्घकाल तक चलते रहने की संभावना है। इस द्विभाषिकता के कारण यद्यपि कई प्रकार की प्रशासनिक, आर्थिक और व्यावहारिक कठिनाइयां आती हैं, किन्तु देश की वर्तमान अवस्था में यही सर्वोत्तम उपाय प्रतीत होता है। डा० गोपाल शर्मा, डा० रवीन्द्र नाथ श्रीवास्तव, डा० रवीन्द्र भ्रमर, श्री ब्रज किशोर शर्मा, डा० एन० ई० विश्वनाथ अय्यर इत्यादि विद्वानों ने इस समस्या की परतों को एक-एक करके उठाया है और इससे संबंधित समस्याओं को पाठकों के सम्मुख रखने का प्रयास किया है।

ऐसा नहीं है कि द्विभाषिक व्यवस्था की समस्या केवल आधुनिक युग में ही प्रचलित हो। इसका प्रचलन तो हमारी देशी रियासतों में पहले से ही रहा है। 'अतीत के झरोखे' के अन्तर्गत आप देखेंगे कि हमारे देशी नरेशों के शासन काल में सरकारी दस्तावेज प्रायः हिन्दी और फारसी में जारी किए जाते थे। जो बात उस समय हिन्दी और फारसी के लिए सही थी, वही आज हिन्दी और अंग्रेजी के लिए भी मौजू दिखाई पड़ती है। हो सकता है, इस परिचर्चा से सभी वर्गों के पाठकों का समाधान न हो पाये, अतः आशा है कि दूसरे लेखक भी हमें अपने विचार लिखकर भेजेंगे, जिससे इसके सम्बन्ध में व्यापक राष्ट्रीय दृष्टिकोण तैयार हो सके।

राजभाषा हिन्दी का विकास अब केवल सरकारी कार्यालयों में काम करने वाले अधिकारियों, कर्मचारियों और प्रशासकों तक ही सीमित नहीं है, बल्कि प्रबुद्ध एवं कृती साहित्यकारों ने भी इस क्षेत्र में साहित्यिक रचना करने के लिए अपना उत्तरदायित्व स्वीकार किया है। इस दृष्टि से डा० विजयेन्द्र स्नातक, डा० रमेश कुन्तल मेघ, श्री कुबेर नाथ राय के लेख बहुत ही प्रेरणादायी हैं। 'भाषा बहता नीर' नामक लेख में श्री कुबेर नाथ राय ने लिखा है कि "हिन्दी की भूमिका आज बहुत बड़ी हो गयी है। उसमें आज हम वही काम करते हैं, जो कभी संस्कृत में करते थे और आज एक खंडित रूप में ही सही अंग्रेजी भी कर रही है। हिन्दी को सम्पूर्ण ज्ञान-विज्ञान का वाहन बनना है और उसके अन्दर वैसी ही आन्तरिक ऋद्धि-सिद्धि लानी है, जो भारत जैसे विशाल देश की राष्ट्रभाषा के लिए अपेक्षित है।"

त्रिभाषा सूत्र के कार्यान्वयन से हिन्दी के व्यापक प्रचार, प्रसार और देश भर में उसके फैलने की कल्पना की गई थी। किन्तु अभी तक अपेक्षित लक्ष्य प्राप्त नहीं हो पाया है। डा० पाण्डुरंग राव ने नागरी लिपि के माध्यम से इस सूत्र के सफल कार्यान्वयन के लिए नये सुझाव प्रस्तुत किए हैं, जो इस उलझी समस्या को सुलझाने में बहुत उपयोगी होंगे। राजर्षि पुरुषोत्तम दास टण्डन जन्मशती समारोह के संदर्भ में उनकी हिन्दी की सेवाओं के पुण्य स्मरण स्वरूप उनके संबंध में एक लेख इसमें शामिल किया जा रहा है। इसी प्रकार 'सर्वभारतीय साहित्य : शिखर की तलाश' में इस बार बंगाल के मनीषी साहित्यकार श्री ताराशंकर बंद्योपाध्याय का विशेष परिचय देने का प्रयास किया गया है। डा० मुरलीधर चतुर्वेदी ने विधि के क्षेत्र में राजभाषा हिन्दी के प्रयोग की संभावनाओं आदि के बारे में अपना गहन गंभीर विवेचन प्रस्तुत किया है।

हमारी हिन्दी सलाहकार समितियों में राजभाषा हिन्दी के विविध आयामों/पक्षों पर निरन्तर चर्चा चलती रहती है, जिसमें न केवल मंत्रालयों/विभाग की समस्याओं पर विचार होता है, अपितु अखिल-भारतीय स्तर की समस्याओं पर भी विशिष्ट सदस्य अपने विचार व्यक्त करते हैं। इस अंक में गृह मंत्रालय, उद्योग मंत्रालय तथा सूचना और प्रसारण मंत्रालय की हिन्दी सलाहकार समितियों के कुछ प्रमुख निर्णय आपके सम्मुख प्रस्तुत किए जा रहे हैं। देश भर में फैले अन्य कार्यालयों, उद्यमों और निगमों के कार्य-कलापों से भी हम पहले की भांति आपको अवगत रखना चाहते हैं, जिसकी झांकी आपको इस अंक में मिलेगी।

—संपादक

कुछ आपकी

यह अंक मुद्रण-आकलन और विषय चयन की दृष्टि से महत्वपूर्ण है। 'भाषा और राष्ट्रीय एकीकरण' शीर्षक परि-चर्चा बहुत ही उपयोगी और ज्ञानवर्धक है । भारत की भाषा-समस्या तथा उसके समाधान और राजभाषा के रूप में हिन्दी की स्थिति के संदर्भ में राजभाषा भारती जो संतुलित भूमिका अदा कर रही है, उसकी सराहना मैं हृदय से करता हूं। इस प्रशंसनीय प्रयास के लिए मेरी हार्दिक बधाई ।

—डा० विमल, अध्यक्ष
बिहार लोक सेवा आयोग, पटना

राजभाषा भारती का 14वां अंक प्राप्त हुआ । इस अंक की सामग्री बहुत उपयोगी है, विशेष तौर पर भाषा और राष्ट्रीय एकीकरण संबंधी परिचर्चा। अन्य लेख भी ज्ञान-वर्धक हैं । छपाई-सफाई राजभाषा विभाग के गौरव के अनुरूप है ।

इस सुन्दर अंक के प्रकाशन के लिए मेरी बधाई स्वीकार करें। इस प्रकाशन से राजभाषा के संबंध में जो प्रगति हो रही है उसका तो पता चलता ही है, महात्मा गांधी सन् 1921 में राजभाषा के बारे में क्या सोचते थे, उसकी भी जानकारी मिलती है ।

—जगदीश प्रसाद चतुर्वेदी
55, काकानगर, नई दिल्ली-3

प्रस्तुत अंक में आपने पठनीय, संग्रहणीय और प्रेरणास्पद सामग्री द्वारा राष्ट्रभाषा हिन्दी के अतीत और वर्तमान की प्रगति की झांकी प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। 'राजभाषा भारती' जिस व्यापक भाषायी परिवेश को लेकर चल रही है उससे जिज्ञासु पाठकों को सदैव परितुष्टि मिलती रहेगी ।

—प्रभात शास्त्री, प्रधान मंत्री
हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग

हिन्दी से संबंधित संवैधानिक व्यवस्थाओं का क्रियान्वयन करने में तथा हिन्दी को प्रोत्साहन देने की दिशा में यह पत्रिका अत्यन्त उपयोगी सामग्री जुटा रही है । मेरा यह सुझाव है कि हिन्दी भाषी राज्यों में ग्रामीण क्षेत्रों में स्थानीय स्तर पर समस्त कार्य हिन्दी में हो रहा है, इस बात की पुष्टि संबंधी सूचनाएं, सुगमतापूर्वक चल रही संस्थाओं, की वार्ताएं स्थानीय प्रशासन की सफलताएं, हिन्दी भाषा के प्रयोग में एकरूपता आदि पर एक स्थायी स्तम्भ के रूप में इस पत्रिका में सामग्री जुटाई जाये जिससे हिन्दी के प्रगामी प्रयोग को बढ़ाने के लिए यह पत्रिका मनोबल बढ़ाकर सहायक व उपयोगी सिद्ध हो ।

—डा० नारायण प्रसाद शर्मा, उप-निदेशक,
भारतीय राष्ट्रीय सहकारी संघ, पंचशील मार्ग, नई दिल्ली

'राजभाषा भारती' का 14वां अंक मिला । इसकी साजसज्जा तो पहले से ही अच्छी रही है। अब सामग्री पहले से भी अधिक उपयोगी आ रही है। श्री जयनारायण जी तिवारी तथा मनुजजी की भेंट वार्ता काफी अच्छा लेख है । इसमें श्री तिवारी जी ने अनुभवपूर्ण एवं सुलझे हुए विचार प्रस्तुत किए हैं । भाषा और राष्ट्रीय एकीकरण में अनेक विद्वानों एवं साहित्यकारों के जो विचार रखे गये हैं वे बड़े ही उपयोगी तथा प्रभावशाली हैं । हिन्दी की सरकारी गतिविधियों के साथ अन्य संस्थाओं की गतिविधियों की जानकारी तथा चित्र प्रकाशित कर अपने इस पत्रिका को और महत्वपूर्ण बना दिया है । इससे गैर हिन्दी प्रदेशों की सामान्य जनता हिन्दी में कितनी रुचि ले रही है, इसकी जानकारी सभी को हो जाती है ।

—हरि शंकर
हिन्दी शिक्षक कार्यालय, महाराजा बिल्डिंग
125, गिरगाँव रोड, बम्बई, 4

इस अंक में विशेष आकर्षण का केन्द्र 'भाषा और राष्ट्रीय एकीकरण' विषय को लेकर अनेक सुविख्यात विद्वानों द्वारा की गई परिचर्चा है जिसमें एक नवीन दृष्टिकोण की झलक मिलती है। इसके अतिरिक्त और लेख भी उपयोगी है, विशेष-तया डा० रामचन्द्र तिवारी का लेख "भारतीय भाषाओं में हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं का स्थान," हिन्दी प्रेमियों के उत्साह को बढ़ाता है ।

निष्कर्षतः यह कहा जा सकता है कि यह अंक अत्यन्त प्रशंसनीय है और इसे सुन्दर बनाने में किया गया प्रयास भी सराहनीय है ।

—मदन लाल शर्मा
हिन्दी अधिकारी, पूर्ति और पुनर्वास मंत्रालय,
पुनर्वास विभाग, जैसलमेर हाउस, नई दिल्ली,

इस पत्रिका के कलेवर/मजमून में कुछ परिवर्तन करके निःसन्देह आपने अवश्य ही इसे नया रूप देने की कोशिश की है । यद्यपि शायद अभी इसमें काफी कुछ और करना होगा । 'परिचर्चा' और 'भाषा बहता नीर' स्तम्भ एक अच्छी शुरुआत है ।

इस प्रकार के नवीनतम रूप वाला अंक प्रस्तुत करने के लिए हार्दिक बधाई ।

—मंगत राम धस्माना, हिन्दी अधिकारी
गंगा बेसिन जल संसाधन संगठन, नई दिल्ली

राजभाषा भारती का जुलाई-सितम्बर, अंक-14 प्राप्त हुआ। इसे एक ही बैठक में सांगोपांग पढ़ गया। उत्तरोत्तर इसके बढ़ते हुए स्तर, विषय विभिन्नता और आकर्षक सज्जा को देख मन प्रफुल्ल हो उठता है, यही कारण है कि अब इसकी बड़ी व्यग्रता से प्रतीक्षा रहती है।

दो नये स्तम्भ 'भाषा बहता नीर' और 'अतीत के झरोखे से', भी उल्लेखनीय हैं। निःसंदेह इन स्तम्भों से पत्र की रोचकता एवं पठनीयता में अभिवृद्धि हुई है। 'सर्व भारतीय साहित्य शिखर की तलाश' के अन्तर्गत भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार की आद्योपांत सूची तथा पुरस्कृत कृतियों पर लेखमाला शुरू करने के लिए बधाई। राकेश जी का यह प्रयास श्लाघनीय एवं स्तुत्य है। डॉ० रामचन्द्र तिवारी जी का लेख 'भारतीय भाषाओं में हिन्दी पत्र-पत्रिकाओं का स्थान', तो गागर में सागर जैसा है।

—भगवान दास बोपट, हिन्दी विभाग
हैदराबाद विश्वविद्यालय, गोल्डन थ्रेशोल्ड, हैदराबाद-1

यह अंक वास्तव में बहुत आकर्षक बन पड़ा है और इसमें शामिल नए स्तम्भ, परिचर्चा, भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार, भाषा बहता नीर, अतीत के झरोखे से अति सामयिक, रुचिकर एवं ज्ञानवर्धक है।

—जीवन लता जैन, हिन्दी अधिकारी,
कैनरा बैंक, हनुमान रोड, नई दिल्ली

राजभाषा भारती में प्रकाशित सभी सामग्री अत्यंत उपयोगी है। इससे भारत सरकार की राजभाषा नीति और विभिन्न मंत्रालयों/संगठनों/निगमों व निकायों में राजभाषा की प्रगति की स्पष्ट झलक मिलती है। आपका एवं राजभाषा विभाग का यह कदम अत्यन्त सराहनीय है।

—पदमादत्त मिश्रा
नेशनल हाइड्रोइलैक्ट्रिक पावर कारपोरेशन
नेहरू प्लेस, नई दिल्ली।

हिन्दी के विकास, प्रचार और प्रसार की दृष्टि से और राजभाषा के रूप में उसके दायित्व की दृष्टि से 'राजभाषा भारती' के अंकों का स्वरूप निरन्तर निखर रहा है। अंक संग्रहणीय होते जा रहे हैं।

आपका और आपके सहयोगियों का काम उत्तरोत्तर सार्थक हो, यही कामना है।

—जीवन नायक, भूतपूर्व प्रधान संपादक
केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, नई दिल्ली

अंग्रेज इस समय देश को छोड़कर चले गए लेकिन अंग्रेजियत भारतीयों पर अभी भी लदी हुई है। "राजभाषा भारती" की हिन्दी सरल, सुबोध और स्वाभाविक है। भारत सरकार की राजभाषा नीति और विभिन्न मंत्रालयों/कार्यालयों विभागों में इसकी प्रगति की जानकारी के लिए इस पत्रिका को पढ़ने की नितांत जरूरत है। यह पत्रिका हिन्दी के प्रति लोगों की जागरूकता बढ़ा रही है।

—कृष्ण कान्त मिश्र, इलाहाबाद

'राजभाषा भारती' का 14 वां अंक प्राप्त हुआ। वास्तव में यह अंक पठनीय ही नहीं बल्कि संग्रहणीय भी बन पड़ा है। इसमें अनेक विद्वानों के सामयिक लेख प्रकाशित हुए हैं जिसमें हिन्दी को प्रोत्साहन मिला है। यह प्रयास प्रशंसनीय है। आप तथा आपके सहयोगी इस सारयुक्त विशेषांक को प्रकाशित करने के लिए धन्यवाद के पात्र हैं।

—नन्द कुमार शर्मा, लैफ्टिनेंट कमांडर,
पूर्ति अधिकारी, कलकत्ता।

"राजभाषा भारती" का जुलाई-सितम्बर अंक सम्पूर्ण पढ़ गया। राजभाषा एवं राष्ट्र-भाषा संबंधित विविध विषय एवं विचार अपने में अत्यन्त मूल्यवान हैं। कुछ महत्वपूर्ण रचनाएं हैं:—परिचर्चा: भाषा और राष्ट्रीय एकीकरण, सर्व भारतीय साहित्य: शिखर की तलाश, राष्ट्रभाषा और हिन्दी और भाषा बहता नीर। इन रचनाओं में विषय और विचार की गंभीरता के साथ ही राष्ट्रभाषा की गरिमा और राष्ट्रीय एकता की भावना भी अभिव्यंजित हुई है, इनके माध्यम से राजभाषाओं और राष्ट्रभाषा हिन्दी में एक अद्भुत निकटता की स्थिति उत्पन्न होगी जिससे हमारी एकता और सुदृढ़ होगी। विभिन्न राज्यों और नगरों में राजभाषा के विकास के लिए किये जाने वाले प्रयासों के विवरण भी अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होंगे। इनसे विभिन्न राज्य अपनी-अपनी भाषा विकसित कर राज्य के कार्यों में उसका उपयोग करेंगे।

—लाल बहादुर सिंह, सचिव,
बंगीय हिन्दी परिषद, कलकत्ता।

राजभाषा भारती के पिछले दो अंक (13-14) पढ़कर लगा कि पत्रिका नई दिशा पकड़ रही है। जहां यह अनुभूति की गहराइयों में पहुंच रही है वहीं आकर्षक एवं आदर्श मानदण्डों की ऊंचाइयों की ओर भी उन्मुख हो उठी है। परिचर्चा, भाषा और राष्ट्रीय एकीकरण तथा सर्व भारतीय साहित्य; शिखर की तलाश जैसे लेखों से पत्रिका राजभाषा की प्रगति की विवरणिका मात्र न रह कर अपने आंचल में बौद्धिक एवं पठनीय उपादानों को भी समेटने लगी है। मेरा सुझाव है कि इसमें राजभाषा हिन्दी के प्रशिक्षण पक्ष पर भी निबंधों का समावेश किया जाए। भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार लेखमाला को आगे जारी रखा जाएगा, ऐसी मुझे आशा है।

—चन्द्रपाल शर्मा, हिन्दी प्राध्यापक
हिन्दी शिक्षण योजना, नई दिल्ली

(शेष पृष्ठ 10 पर)

राजभाषा हिन्दी के विकास की समस्या और साहित्यकार

डा० विजयेन्द्र स्नातक
भूतपूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय

हिन्दी-भाषा के विकास में साहित्यक के कर्तव्य और दायित्व का प्रश्न हिन्दी के राजभाषा रूप में प्रतिष्ठित होने के कारण विचारणीय हो गया है। भाषा-विकास का दायित्व यों तो सर्जक साहित्यकार वहन करते ही हैं किन्तु हमारे देश में स्वतन्त्रता-प्राप्ति के बाद राष्ट्रभाषा हिन्दी की स्थिति में जो परिवर्तन आया है, वह एक नये दायित्व से संबंध रखता है। **रचनात्मक साहित्य से सम्बद्ध अनेकानेक समस्याओं में आज हिन्दी के साहित्यकार के समक्ष भाषा के व्यापक विकास की समस्या भी ज्वलन्त रूप से उपस्थित हो गई है।** यह ठीक है कि विचारों का वाहन या अभिव्यक्ति का माध्यम होने के कारण भाषा का स्थान भाव और विचार की तुलना में गौण है किन्तु समसामयिक परिस्थितियों में हिन्दी भाषा की समस्या उतनी उपेक्षणीय नहीं है जितनी कि उच्चस्तरीय साहित्यिक चिन्तन में अब तक मानी जाती रही है।

हिन्दी भाषा के विकास के प्रश्न को अब हम केवल प्रचार या आन्दोलन तक ही सीमित बनाकर नहीं छोड़ सकते। उच्चत्तर साहित्यिक कथ्य को भव्यतर भाषा का माध्यम अभिप्रेत होता है, यह बात और कोई जाने या न जाने, किन्तु सर्जक साहित्यकार अवश्य जानता है। अब तक हिन्दी के विकास की योजनाएं प्रचार-सभाओं, सम्मेलनों या परीक्षा-संस्थाओं द्वारा प्रस्तुत होती रही हैं इसलिए कृती साहित्यकारों का उसमें सक्रिय योग नहीं रहा। लेकिन आज हिन्दी की स्थिति इतनी बदल गयी है कि हम उसके विकास का दायित्व केवल प्रचार-संस्थाओं और सम्मेलनों पर सौंपकर आश्वस्त नहीं हो सकते। **हिन्दी को सक्षम, समृद्ध और गतिशील बनाने के लिए सर्जक साहित्यकार को उसके बाह्य एवं आभ्यन्तर विकास में सक्रिय योग देना होगा। साहित्यकार का यह योगदान आनुषंगिक न होकर प्रमुख होगा,** तभी हम हिन्दी का सार्वभौम रूप स्थिर कर सकेंगे।

सामान्यतः किसी भी भाषा के विकास में उसके प्रयोक्ताओं का हाथ रहता है। शिक्षित और अशिक्षित दोनों वर्ग के व्यक्ति भाषा को विकसित करने में योग देते हैं। जो रचनाकार नहीं हैं और भाषा का केवल दैनन्दिन व्यवहार करते हैं वे भी भाषा को एक सीमा-मर्यादा में विकसित करते हैं। लोक साहित्य की रचना में इस वर्ग का हाथ रहता है। कभी-कभी इस वर्ग में विलक्षण प्रतिभाएं जन्म लेती हैं जिनकी वाणी को परवर्ती काल में साहित्य की संज्ञा भी मिल जाती है। कबीर इस वर्ग की श्रेष्ठतम विभूति हैं। किन्तु इस लेख में मैं शिक्षित वर्ग का प्रतिनिधित्व करने वाले साहित्यकार के दायित्व पर ही विचार व्यक्त करना चाहता हूं। सर्जक साहित्यकार भाषा को सामान्य संकेत-ग्रह या अभिधेयार्थ से आगे लाक्षणिकता एवं ध्वन्यात्मकता के सूक्ष्म स्तरों तक पहुंचाता है। भाषा के माध्यम से जटिल तथा दुर्बोध मनोभावों को सम्प्रेष्य और सुबोध बनाता है। उसका दायित्व भाषा-विकास के संदर्भ में बोलचाल की भाषा के दैनन्दिन प्रयोग करने वालों से कहीं गुरुतर होता है। **भाषा के संदर्भ में कृती साहित्यकार वह है जो नये शब्द, नये मुहावरे, नूतन भंगिमा और विच्छित्ति देकर अभिव्यक्ति को पुष्ट, प्रांजल और परिष्कृत बनाता है। जिस प्रकार रचना कर्म के साथ साहित्याकार का दायित्व जुड़ा होता है उसी प्रकार माध्यम (भाषा) के दायित्व से भी वह सहज रूप से सम्पृक्त है। अविकसित माध्यम से विकसित एवं गतिशील साहित्य की सृष्टि कैसे संभव हो सकती है।**

अब तक हिन्दी का सर्जक साहित्यकार हिन्दी-भाषी जनता को लक्ष्य बना कर रचना करता रहा है किन्तु अब हिन्दी के पाठक उत्पन्न हो रहे हैं। उनकी परिधि में पहुंचकर हिन्दी भाषा को अपने रूप सौष्ठव में कुछ परिवर्तन लाना होगा। सुबोध और सहज अभिव्यक्ति की क्षमता उत्पन्न करनी होगी। विकास की यह दिशा कृती साहित्यकार ही खोलेंगे और इसके लिए उन्हें प्रादेशिक भाषाओं से आदान भी करना होगा। केवल प्रदान का एक तरफा मार्ग (वन वे ट्रफिक) अपर्याप्त रहेगा। **इस प्रसंग में यह भी स्मरण रहे कि वह दिन दूर नहीं जब अहिन्दी भाषी विद्वान हिन्दी के साहित्कारों की पंक्ति में बैठेंगे और उनकी अभिव्यंजना शैली से हिन्दी के विकास का नया मार्ग उन्मुक्त होगा। दक्षिण तथा पूर्वांचल की भाषाओं की शब्दावली और भंगिमा से हिन्दी के कोश और शैली में सौष्ठव उत्पन्न होगा और यत्किंचित् व्याकरण में परिवर्तन भी। ऐसे समय शुद्धतावादी दृष्टि को जड़भाव से पकड़ कर चलना कुछ कठिन हो जाएगा। साहित्य सर्जकों का यह दायित्व है कि वे हिन्दी के इस संक्रान्ति काल में जब हिन्दी सार्वदेशिक भाषा का रूप ग्रहण कर रही है व्याकरण और शैली में स्थिरता के उपाय ढूंढ़े और स्वस्थ विकास को दृढ़ता से पकड़े रहें।**

हिन्दी भाषा के विकास के संदर्भ में कुछ वाह्य प्रभावों का उल्लेख करना भी मैं आवश्यक समझता हूं। हिन्दी के नवलेखन पर अंग्रेजी का प्रभाव शनैः शनैः बढ़ रहा है। कुछ पुराने लेखक आक्रोश की वाणी में नवलेखन के साहित्य को "कार्बन कापी" कहकर भी पुकारते हैं। मैं कार्बन कापी कहने का खतरा नहीं उठाना चाहता किन्तु इतना अवश्य कहना चाहता हूं कि भाषा विकास के क्रम में जीवन्त भाषाओं में आदान-प्रदान चलना स्वाभाविक है किन्तु शब्द-भण्डार, मुहावरे, लोकोक्ति तथा वाक्यविन्यास में आदान करते समय हिन्दी की नसर्गिक प्रकृति का ध्यान रखना साहित्यकार का कर्तव्य है। प्रत्येक भाषा की अपनी प्रकृति होती है, विकास की दिशा खोलते समय उसकी प्रकृति की रक्षा अनिवार्य होनी चाहिए। यदि विदेशी भाषाओं के शब्द, मुहावरे, लोकोक्तियां केवल अनूदित होकर प्रस्तुत कि जाते हैं और भाषा की मूल प्रकृति में समाहित नहीं होते तो उनसे भाषा विकास की आशा करना व्यथ है। इसी प्रकार अप्रस्तुत विधान और प्रतीक का प्रश्न है। प्रतीकों का रूपान्तरण तो कभी-कभी इतना जटिल और दुर्बोध बन जाता है कि उसके द्वारा अभीष्ट चित्र पाठक के मन में उभरता ही नहीं। प्रतीकों की अपनी एक सांस्कृतिक और साहित्यिक पीठिका तथा परिवेश होता है। एक विशेष परिवेश में, विशेष संस्कारों और सीमाओं में उनकी सृष्टि होती है। कभी-कभी वे जातीय, देशीय या भौगोलिक आधार पर स्वीकृत किए जाते हैं। अतः उनका प्रयोग करने वाले को देखना चाहिए कि हमारी भाषा में प्रयुक्त होकर वे उन्हीं संदर्भों को उभार कर इच्छित अभिव्यक्ति में सहायक होंगे या नहीं। अर्थ बोध ही अभिव्यक्ति की पहली शर्त है। यदि कैक्टस का प्रतीकात्मक अर्थ पाठक के मन में पूरा अर्थ ध्वनित नहीं करता तो प्रयोग निष्फल जायगा। अतः सर्जक साहित्यकार हिन्दी के विकास के साथ इस तथ्य को अपनी दृष्टि से ओझल न करें। मैं उन शब्दों, मुहावरों और प्रतीकों का समर्थन और स्वागत करता हूं जो हिन्दी की अभिव्यंजना में सहज रूप से समा गये हैं और अभिव्यक्ति में सौन्दर्य के साथ चारुत्व का विकास करने में समथ हैं।

नयी पीढ़ी के साहित्यकार रूपान्तरण की पद्धति को अपनाते समय एक विशेष तर्क प्रस्तुत करते हैं। उनका कहना है कि हिन्दी में नवीन साहित्य-विधाओं के विस्तार के लिए यह आवश्यक है कि नये शब्द, नये प्रतीक, नये मुहावरे और नूतन बिम्ब विन्यास ग्रहण किए जायें। भाषा को सम्प्रेषणीय बनाने और नयी भंगिमा और विच्छित्ति के लिए नूतन शब्द विधान सदा होता रहा है। मेरा आग्रह है कि अर्थ-बोध की शर्त साहित्यकार के सामने रहे तो कोई भी रूपान्तरण अग्राह्य नहीं बन सकता। नये लेखक बार-बार यह कहते हैं कि पुराने शब्दभंडार से हमारा काम नहीं चलता। पुराने शब्दों के साथ इतनी रूढ़ियां लिपटी हुई हैं कि नये भावबोध के लिए उन्हें प्रयुक्त करने से भ्रम की सृष्टि होती है। इसलिए नूतन भावबोध एवं सम्प्रेषण के लिए नये शब्द गढ़ना हमारे लिए अपरिहार्य हो गया है। लेकिन **प्रश्न तो यह है कि जिस भावबोध को प्रेषणीय बनाने के लिए हम नूतन शब्द तथा प्रतीक का विधान करते हैं वह भाषा को चक्करदार और क्लिष्ट बनाकर अर्थातीत तो नहीं कर देता।** मैंने ऐसे अनेक रूपान्तरित वाक्यखंड नई समीक्षा में पढ़े हैं जिनमें भाव का विपर्यास होकर रह गया है, भाव अभिव्यक्त नहीं हुआ। उदाहरण देकर ऐसी विपर्यस्त रचनाओं का यहां उल्लेख नहीं करना चाहता। मैं तो केवल यही कहना चाहता हूं कि प्रस्तुत संदर्भ में हिन्दी के विकास के प्रयत्नों में इस विपर्यस्त शैली पर साहित्यकार को ध्यान देना चाहिए। अगर अपना लिखा, खुद आप ही समझे तो क्या समझे—का ध्यान साहित्यकार को रहे तो रूपान्तरण का प्रभाव भाषा के लिए घातक नहीं होगा। रूपान्तरण भाषा को समृद्ध करने का शक्तिशाली उपाय भी है। नव-लेखन द्वारा यह समृद्धि हिन्दी को सुलभ हुई है यह मानने में किसी को संकोच नहीं होना चाहिए।

हिन्दी का साहित्यकार अभी तक नागरिक जीवन तक ही अपने को सीमित रखकर लिखता रहा है। कथा-साहित्य को छोड़कर अन्य किसी विधा में नगर से बाहर साहित्यकार की दृष्टि नहीं गई। प्रेमचन्द ने मध्यवर्गीय ग्रामीण समाज को अपने कथा साहित्य में स्थान दिया था, फलतः उनका साहित्य व्यापक स्वीकृति का अधिकारी हुआ। साथ ही भाषा का विकास पदावली, मुहावरे, लोकोक्ति तथा प्रतीक सभी स्तरों में भिन्न रूप में संभव हुआ। हिन्दी को विकसित करने के लिए साहित्यकार को अपना क्षेत्र-विस्तार करना होगा। कथा साहित्य में इसीलिए नय शब्द और मुहावरे दृष्टिगत होते हैं कि उनका क्षेत्र गांव और कस्बे तक फैला हुआ है। काव्य, नाटक, समीक्षा, निबन्ध आदि विधाओं में नागरिक आभिजात्य वर्ग को ही हमारे हिन्दी के लेखक पकड़े हुए हैं। आभिजात्य वर्ग तक मर्यादित कर देना साहित्य विकास, भाषा विकास और राष्ट्र-विकास के लिए कभी काम्य नहीं हो सकता। हिन्दी के जागरूक साहित्यकार को उन प्रदेशों, जातियों, कबीलों और वर्गों को अपने साहित्य में स्थान देना चाहिए जो हिन्दी भाषी होकर भी हिन्दी-साहित्यकार के लिए अनचीन्हे और अस्पृश्य बने हुए हैं। भाषा की समृद्धि के लिए कल-कारखानों, खेत-खलिहानों, बन्दरगाहों, कोयले की खानों, और नवनिर्माणों में जुटे हुए लोगों के जीवन को अंकित करना होगा। आदिवासियों और जरायमपेशा जातियों की शब्दावली से परिचय प्राप्त करने से ही उनकी जीवन गति का वर्णन करना संभव है। हिन्दी के विकास के लिए ये समस्त प्रयोग हमारे साहित्यकार को जब स्वीकार होंगे तभी भाषा-विकास के नये आयाम उपलब्ध होंगे। नगर के अभिजात्य वर्ग से चिपटे रहने के कारण भाषा में लालित्य भले ही आया हो किन्तु व्यापकता नहीं आई। तत्सम पदावली का प्राचुर्य होता रहा तद्भव शब्दों की सहज स्वाभाविक छटा से हम वंचित होते रहे। प्रयोग-वादी कवियों ने इस ओर ध्यान दिया था किन्तु उनका

शब्द-संधान कृत्रिम था। उन्होंने तद्भव शब्दों की खोज उन संदर्भों और परिवेशों से नहीं की थी जो हमारे जाने-पहचाने थे। प्रयोग के लिए भदेस शब्दावली का नमूना दिखाकर वे अपने कर्त्तव्य की इतिश्री समझ बैठे थे। वस्तुत: तद्भव शब्दावली का रहस्य स्वाभाविकता और सरलता में है। 'आग जल रही है' के स्थान पर 'अग्नि प्रज्वलित हो रही है', 'प्यास से गला सूख रहा है' के स्थान पर 'तृषा से कंठ शुष्क हो रहा है' कहना भाषा के सहज विकास को अवरुद्ध करना है। द्विवेदी युग में तत्सम शब्दों का प्रचलन व्यापक स्तर पर हुआ। छायावादी कवियों ने उसे और अधिक वर्चस्व प्रदान कर समृद्ध किया। इस प्रक्रिया से हिन्दी जन-साधारण से दूर एक विशिष्ट शिक्षित वर्ग तक सीमित होती गई। आज इस तत्सम प्रधान पुनरावृत्ति से हमें बचना चाहिए।

भाषा के सन्दर्भ में हिन्दी के साहित्यकार के सामने हिन्दी के परिनिष्ठित रूप को समृद्ध करने का दायित्व ही मुख्य दायित्व है। खड़ी बोली हिन्दी ही आज हिन्दी की परिनिष्ठित भाषा बन गई है। राजभाषा के रूप में इसी को संविधान में स्वीकृत किया गया है अत: भाषा के विकास के संदर्भ में इस मूल लक्ष्य से भटकना नहीं चाहिए। लक्ष्यभेद करने के लिए मछली की आंख को ही लक्ष्य बनाना होगा। पेड़, शाखा, पत्ती और मछली के समूचे शरीर को नहीं। हमारी जनपदीय बोलियां बड़ी मधुर और आकर्षक हैं। हम उन्हें दैनन्दिन बोलचाल में काम में लाते हैं किन्तु राजभाषा के रूप में उन्हें प्रतिष्ठित करने का कभी आग्रह नहीं करते। जनपदीय बोलियों को पठन-पाठन, या सामूहिक रूप से सार्वजनिक लेखन में प्रयोग की छूट हम नहीं दे सकते। अवधी, भोजपुरी, बुन्देली, मैथिली, राजस्थानी और ब्रजभाषा का प्रयोग घर के वातावरण में सहज रूप में होता है। वक्ता और श्रोता का दायरा वहां सीमित है अत: मातृभाषा के सहज संस्कार के कारण वह बोधगम्य है, सार्वजनिक प्रयोग में यह बात नहीं होती। राजस्थानी, मैथिली, भोजपुरी, बुन्देली, ब्रज, अवधी आदि हमारी हिन्दी की विभाषाएं या बोलियां हैं जिनसे हिन्दी में शब्द, पदावली, मुहावरे, लोकोक्तियां और अर्थच्छवियां हिन्दी में आती हैं। हम उन्हें ग्रहण करते रहें किन्तु इन जनपदीय बोलियों के हिन्दी से पृथक्करण के लिए आन्दोलन करना बन्द कर दें। हिन्दी के विकास के लिए अब विकेन्द्रीकरण अत्यन्त घातक होगा। हिन्दी को सार्वदेशिक भाषा के रूप में ग्रहण करने वाले दक्षिण भारत और पूर्वी भारत के निवासी इन बोलियों को न तो समझ सकेंगे और न हिन्दी का यह प्रतिनिधि रूप ही होगा। आज भी हम देखते हैं कि आंचलिक भंगिमा से संयुक्त रचना एक जनपद तक ही समादृत हो पाती है उनका पठन-पाठन व्यापक स्तर पर नहीं होता। जनपदीय बोलियों के विकास के कारण यदि खड़ी बोली हिन्दी को हानि पहुंचती है तो उसे छोड़ देना ही सार्वजनिक राष्ट्रहित में कल्याणकारी होगा। **अपनी बोली का मोह किसे नहीं होता किन्तु राजभाषा के रूप में यदि किसी भाषा का सार्वभौम रूपमें विकास करना है तो साहित्यकारों को परिनिष्ठित भाषा की समृद्धि के ही उपाय काम में लाने चाहिए।** जनपदीय बोलियों के मोह में फंसकर भ्रमित होने की आवश्यकता नहीं है। स्मरण रहे कि "एकै साधै सब सधै, सब साधै सब जाय।"

साहित्यकार की सृजनात्मक प्रतिभा की सर्जन सीमा-मर्यादाओं से बाहर भी हिन्दी के विकास के लिए कार्य आवश्यक है किन्तु मैं उसका दायित्व सर्जक साहित्यकार पर नहीं डालना चाहता। साहित्येतर विषयों का हिन्दी भाषा में अभाव है। मानविकी के विषयों के अतिरिक्त ज्ञान, विज्ञान और प्राविधिक विषयों के ग्रंथों का निर्माण हिन्दी में होना है किन्तु यह कार्य-क्षेत्र सर्जक साहित्यकार का नहीं है। इस क्षेत्र में साहित्यकार केवल एक ही कार्य कर सकता है और वह कार्य है ज्ञान-विज्ञान की नव-निर्मित पारिभाषिक शब्दावली का यथास्थान अपनी ललित रचनाओं में ग्रहण। यह ठीक है कि ललित रचनाओं में पारिभाषिक शब्दावली के लिए न्यूनावकाश होता है फिर भी ऐसे स्थल और संदर्भ आ ही जाते हैं जहां रचनाकार इस शब्दावली का प्रयोग कर सकता है। हिन्दी के विकास में यह प्रक्रिया लाभकारी सिद्ध होगी और पारिभाषिक पदावली से सामान्य पाठक का भी यत्किंचित परिचय हो सकेगा।

साहित्यकार भाषा-विकास और भाषा-संस्कार दोनों कार्यों के लिए सचेत रहता है। उसके दायित्व में ये दोनों कर्म समाविष्ट हैं। हिन्दी के राजभाषा रूप में स्वीकृत होने पर भाषा विकास के दायित्व को प्राथमिकता मिले तो कदाचित् हिन्दी को सार्वभौम बनाने में योगदान मिले। साहित्यकार उन समस्त उपायों को काम में लाना प्रारम्भ करे जिनसे भाषा में गति और प्रवाह उत्पन्न हो, भाषा सुबोध, सर्वजन सुलभ और आकर्षक बन सके। भाषा को जीवन्त बनाने के लिए हिन्दी के साहित्यकार को आज पहले की अपेक्षा अधिक जागरूक होने की आवश्यकता है। **रचनात्मक साहित्य केवल जीवंत भाषा में ही जीवित रहता है, कृत्रिम और क्लिष्ट भाषा में नहीं। जो भाषा जनमानस के साथ तादात्म्य नहीं करती, अपने-आप मृत होकर मंच से तिरोहित हो जाती है। हमें अपनी भाषा को विश्व मंच पर आरूढ़ करने के लिए सक्षम और समृद्ध बनाना है। अत: यह कार्य प्रशासन या प्रशासनिक संस्थाओं पर नहीं छोड़ा जा सकता। लेखक कवि, नाटककार और उपन्यासकार इस दिशा में राष्ट्र भाषा के निर्माण का दायित्व ग्रहण करें तो राष्ट्रभाषा की लोकप्रियता में अधिकाधिक वृद्धि संभव होगी।**

विधि के क्षेत्र में राजभाषा का प्रयोग : संभावनाएं और सीमायें

—डा० मुरलीधर चतुर्वेदी
विधि प्राध्यापक, तिलकधारी स्नातकोत्तर महाविद्यालय, जौनपुर

भारत महामानवता का एक महासमुद्र है। अनेक जातियां और प्रजातियां, विभिन्न धर्मावलम्बी और भाषा-भाषी समुदाय इस महासागर की लहरों के साथ समवेत और समन्वित होते रहते हैं, परन्तु फिर भी, अपना पृथक् सामाजिक, सांस्कृतिक और राजनैतिक अस्तित्व बनाये रखने की स्पृहा में आकर इन लहरों को उद्वेलित भी करते रहते हैं, जिसके परिणामस्वरूप समूचा राष्ट्र भाषा, जातीयता, धार्मिकता और क्षेत्रीयता के चक्रवात में पड़कर अशान्त-सा हो जाया करता है। इस स्थिति के परिणामस्वरूप यह राष्ट्र अनेकानेक समस्याओं और तद्जनित तनावों से संत्रस्त रहता है। यहां की संघवादी व्यवस्था भी इससे प्रभावित होती रहती है, क्योंकि संकीर्णता की यह भावना अनेक भाषायी और सांस्कृतिक-वर्गों को एक सूत्र में पिरोने में विफल रही है। इस तरह की समस्या किसी भी अन्य संघीय-व्यवस्था में नहीं पाई जाती। भारत की भाषायी-समस्या भी अपने ढंग की एक विशिष्ट-समस्या है। भारत को अपनी इस समस्या के निराकरण के लिए स्वयं ही किसी ऐसे हल की खोज करनी होगी, जो इस देश की भावनात्मक एकता के अनुकूल हो।

राष्ट्र का समूचा जीवन विधि द्वारा विनियमित होता है और विधि की जितनी भी अवधारणाएं अभी तक विकसित हो सकी हैं, उनमें विधि का तात्पर्य उस प्रमाण से है, जिसे किसी प्राधिकारी ने किसी ऐसे समुदाय के लिए प्रस्थापित किया है, जिसे वह समुदाय अपने लिए बाध्यकारी मानता है और वह प्राधिकारी ऐसी शक्तियों से परिपूर्ण है, जिसके प्रयोग से वह सामान्य प्रतिमानों अथवा नियमों का निर्माण कर सकता है, तथा विभिन्न प्रकार की अनुशास्तियों द्वारा उनका प्रवर्तन करा सकता है। दूसरे शब्दों में, विधि नियमों का एक ऐसा निकाय अथवा पुंज है, जिसे कोई समुदाय अपने कल्याण के लिए आवश्यक मानता है, और उसके प्रवर्तन के लिए एक विशिष्ट तंत्र की स्थापना करता है। मानव-जीवन के विनियमन के लिए बनाई गई ऐसी विधि यदि जन-मानस की भाषा में नहीं है, तो वह न्यायकारी नहीं हो सकती। **वह विधि अन्धी है, जिसमें न्याय नहीं है, और यदि न्याय जनता की भाषा में नहीं दिया गया है, तो विधि-सम्मत होते हुए भी वह एक पंगु-न्याय है, ठीक उसी प्रकार, जैसा कि हाथ-पैर विहीन मनुष्य भी एक मनुष्य है।** राष्ट्रीय-जीवन को राष्ट्र की उस राजभाषा के माध्यम से विनियमित करना, उसी में न्याय प्रदान करना, तथा सारी समस्याओं का निराकरण करना, जिसमें कि कोटि-कोटि जन-मानस अपनी अभिव्यक्ति देखता और पाता है, एक युग-पुकार है। अतः इस सन्दर्भ में तथा भारत की भाषायी समस्या के सन्दर्भ में इस बात का अनुसंधान करना आवश्यक है कि विधि के क्षेत्र में राजभाषा का प्रयोग किस रूप में, किस सीमा तक और किस संभावना तक किया जा सकता है।

भारत में 'इन्डो आर्यन' और 'द्रावीड़ियन' दो मुख्य भाषायी परिवार हैं। इन्डो-आर्यन भाषाओं की संख्या 11 है और इन सबकी व्युत्पत्ति संस्कृत से हुई है। भारत की 75 प्रतिशत जनता अपनी भावनाओं की अभिव्यक्ति इन्हीं भाषाओं के माध्यम से करती है। इसमें हिन्दी बोलने वालों की संख्या 42 प्रतिशत से भी अधिक है। द्रावीड़ियन-परिवार की भाषाएं (दक्षिण भारत में) लगभग 25 प्रतिशत जनता द्वारा बोली जाती हैं। दोनों वर्गों की ये भाषाएं, यद्यपि, मूलतः एक दूसरे से पृथक् हैं, परन्तु दोनों में कुछ समानता भी है। इसका कारण यह है कि इनमें से एक भाषा-परिवार तो संस्कृत से उत्पन्न हुआ है, जबकि दूसरा इससे बहुत अधिक प्रभावित हुआ है। ब्रिटिश शासन काल में इनमें से किसी भी भाषा को कोई महत्वपूर्ण स्थान नहीं प्राप्त था, क्योंकि अंग्रेजी सम्पूर्ण राष्ट्र की शिक्षा, परीक्षा और प्रशासन की भाषा के रूप में प्रचलित हो गई थी। यह भाषा, यद्यपि, अखिल भारतीय स्तर पर अभिजात वर्ग के विचारों के आदान-प्रदान की भाषा तो बन गई थी, परन्तु वह भारत की जन-भाषा नहीं बन सकी थी। जब भारत स्वतंत्र हुआ, तो देश में अंग्रेजी को राज-भाषा के रूप में बनाये रखना असंगत सा लगा। **संविधान-निर्माता भारत को एक संप्रभुता सम्पन्न लोकतंत्रात्मक गणराज्य के रूप में देखना चाहते थे। अत: उनके लिए यह आवश्यक हो गया कि राष्ट्र का सरकारी कार्यकलाप जनता की भाषा में संपादित किया जाय। संविधान में इस के लिए यह व्यवस्था की गई कि प्रत्येक राज्य अपना सरकारी कामकाज अपनी भाषा में करने का निर्णय कर सकते हैं और संघ सरकार का कामकाज एक निश्चित योजना के अनुसार हिन्दी में सम्पादित किया जा सकेगा।** संविधान का अनुच्छेद 343 यह उद्घोषित करता है कि संघ की राजभाषा हिन्दी और लिपि देवनागरी होगी। वह यह भी उद्घोषित करता है कि संघ के राजकीय प्रयोजनों

के लिए प्रयोग होने वाले अंकों का रूप भारतीय अंकों का अन्तर्राष्ट्रीय रूप होगा। संविधान के अनुच्छेद 351 में हिन्दी-भाषा के विकास के लिए यह निदेश दिया गया है कि संघ का यह कर्तव्य होगा कि वह हिन्दी भाषा के प्रसार, उसकी वृद्धि और उसके विकास को सुनिश्चित करे, ताकि वह भारत की सामासिक संस्कृति के सब तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके, तथा उसकी आत्मीयता में हस्तक्षेप किये बिना 'हिन्दुस्थानी' और अष्टम्-अनुसूची में उल्लिखित अन्य भारतीय भाषाओं के रूप, शैली और पदावलि को आत्मसात करते हुए तथा जहां तक आवश्यक या वांछनीय हो, वहां उसके शब्द-भंडार के लिए मुख्यतः संस्कृत से तथा गौणतः अन्य भाषाओं से शब्द ग्रहण करते हुए उसकी समृद्धि भी सुनिश्चित करे। इस प्रकार, संविधान के ये प्रावधान राजभाषा हिन्दी का स्वरूप तो प्रस्तुत करते ही हैं, ये संविधान निर्माताओं की उन आशाओं, आकांक्षाओं और उनके उन स्वप्नों का भी दर्शन कराते हैं, जो उन्होंने राजभाषा के रूप में हिन्दी को प्रतिष्ठित करने के लिए देखा और सोचा था।

उच्चतम न्यायालय और उच्च-न्यायालयों तथा विधेयकों, अधिनियमों आदि में प्रयुक्त होने वाली भाषा के सन्दर्भ में, अन्य बातों के अतिरिक्त, संविधान के अनुच्छेद 348(1) में यह व्यवस्था की गई है कि जब तक संसद कोई दूसरी व्यवस्था न करे, तब तक उच्चतम न्यायालय और उच्च-न्यायालयों की समस्त कार्यवाहियां अंग्रेजी भाषा में होंगी, तथा संघ और राज्यों के समस्त विधेयक, अधिनियम, अध्यादेश आदि के प्राधिकृत पाठ अंग्रेजी भाषा में होंगे। इस अनुच्छेद के खण्ड (2) में यह भी उपबन्ध किया गया है कि राष्ट्रपति की पूर्व सम्मति से किसी राज्य का राज्यपाल हिन्दी-भाषा का या उस राज्य में राजकीय प्रयोजन के लिए प्रयुक्त होने वाली किसी अन्य भाषा का प्रयोग उस राज्य के उच्च न्यायालय की कार्यवाहियों के लिए प्राधिकृत कर सकता है। इसके अतिरिक्त राजभाषा (संशोधन) अधिनियम, 1967 की धारा 7 द्वारा यह व्यवस्था भी कर दी गई है कि किसी राज्य के राज्यपाल राष्ट्रपति की पूर्व सम्मति से उस राज्य के उच्च न्यायालय द्वारा किये गये किसी निर्णय, डिक्री अथवा आदेश के लिए अंग्रेजी भाषा के अतिरिक्त हिन्दी अथवा राज्य की राज भाषा के प्रयोग को प्राधिकृत कर सकता है और जहां कहीं ऐसा किया जायेगा, वहां हिन्दी आदि के पाठ के साथ-साथ अंग्रेजी भाषा में उसका अनुवाद भी दिया जायेगा। इस संशोधन अधिनियम के प्राधिकार से उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, राजस्थान और बिहार के राज्यपालों ने अपने-अपने राज्यों में स्थित उच्च-न्यायालयों में हिन्दी के प्रयोग के लिए राष्ट्रपति से अनुमति ले ली है।

संविधान और राजभाषा अधिनियम के अन्तर्गत, इस प्रकार, विधान पालिका और न्याय पालिका के स्तर पर अंग्रेजी भाषा के अतिरिक्त हिन्दी अथवा राज्य की राजभाषा के अबाध-प्रयोग का रास्ता खोल दिया गया है। परन्तु, जहां तक संघ की राजभाषा का सम्बन्ध है, उस सन्दर्भ में राजभाषा (संशोधन) अधिनियम, 1967 की धारा 3 के अनुसार: (1) संघ के जिन सरकारी-प्रयोजनों के लिए 26 जनवरी 1965 से पूर्व अंग्रेजी का प्रयोग किया जा रहा था, उन सभी के लिए, और (2) संसद में कार्य निष्पादन के लिए 26 जनवरी, 1965 के बाद भी हिन्दी के अतिरिक्त अंग्रेजी का प्रयोग जारी रहेगा। धारा 3 के इस मुख्य प्रावधान के साथ एक बड़ी सशक्त-परिसीमा यह लगाई गई है कि संघ द्वारा संपादित होने वाले इन कार्यों के साथ अंग्रेजी का प्रयोग तब तक होता रहेगा, जब तक इस व्यवस्था को समाप्त करने के लिए हिन्दी को राजभाषा के रूप में न अपनाने वाले राज्यों के विधान मंडलों द्वारा संकल्प पारित न कर दिये जायें, और उसके बाद संसद का प्रत्येक सदन भी ऐसा ही संकल्प पारित न कर दे। **राजभाषा (संशोधन) अधिनियम, 1967, इस प्रकार, हिन्दी को जहां संघ की राजभाषा का दर्जा प्रदान करता है, वहीं वह इसे अहिन्दी भाषी विधान-मण्डलों की दया का पात्र भी बना देता है।**

भारत की राष्ट्रीय एकता और अखंडता को बनाये रखने के लिए भी अंग्रेजी को अभी एक लम्बे समय तक उच्चतम न्यायालय और उच्च-न्यायालयों की भाषा के रूप में बना रहना है। समय का यह विस्तार उस सीमा तक जा सकता है, जब तक अखिल भारतीय स्तर पर हिन्दी प्रतिष्ठित नहीं कर दी जाती। इसलिए, यह आवश्यक है कि चाहे भले ही राज्य-विधान पालिकायें विभिन्न-क्षेत्रीय-भाषाओं को राजभाषा के रूप में स्वीकार कर लें, विधि की भाषा सारे देश में एक रहनी चाहिए, और इस रूप में हिन्दी को ही प्रतिस्थापित करने के लिए योजना-बद्ध ढंग से कार्य किया जाना चाहिए। क्षेत्रीय-भाषाओं के प्रतिनिधियों को बैठकर यह निश्चित करना चाहिए कि केन्द्रीय-स्तर पर अंग्रेजी का स्थान हिन्दी किस गति से ले। क्षेत्रीय भाषाओं के शब्दों और पदावलियों को भविष्य में हिन्दी में अपनाया जाना चाहिए।

विधि के क्षेत्र में जहां तक अध्ययन और अध्यापन का प्रश्न है, वह समूचे उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बिहार और राजस्थान के विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों में व्याख्यान और परीक्षा के क्षेत्र में हिन्दी के माध्यम से सम्पन्न किया जा रहा है। इन राज्यों में अंग्रेजी के माध्यम से यह कार्य अत्यन्त कम मात्रा में हो रहा है। विधि की अनेक शाखाओं में हिन्दी के मानक ग्रन्थ भी तैयार हो चुके हैं। हिन्दी में मानक और गौरव-ग्रन्थों के प्रकाशन में भारत-सरकार का विधि, न्याय और कम्पनी कार्य मंत्रालय तथा कुछ गैर सरकारी प्रकाशक प्रशंसनीय कार्य कर रहे हैं। भारत सरकार का विधि, न्याय और कम्पनी कार्य मंत्रालय 'उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका' और 'उच्च-न्यायालय निर्णय पत्रिका' का नियमित प्रकाशन कर विधि के क्षेत्र में एक बहुत बड़ी कमी को पूरा कर रहा है। कुछ विद्वान प्रोफेसर, न्यायाधीश

और अधिवक्ता भी पुस्तकों के लेखन-कार्य में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। गैर-सरकारी स्तर पर हिन्दी भाषा में प्रकाशित विधि की सर्वश्रेष्ठ पुस्तकों पर भारत सरकार का विधि, न्याय और कम्पनी कार्य-मंत्रालय प्रति वर्ष 10,000 रुपए का और अन्य कई प्रोत्साहन पुरस्कार भी दे रहा है। परन्तु, यह सब केवल हिन्दी-भाषी क्षेत्रों तक ही हो रहा है। अहिन्दी भाषी क्षेत्र या तो अपनी क्षेत्रीय-भाषाओं में विधान-निर्माण, न्याय-निर्णयन और अध्ययन-अध्यापन का कार्य सम्पादित कर रहे हैं, अथवा वे अंग्रेजी की ही गोद में पड़े हुए हैं। विधि के क्षेत्र में राजभाषा हिन्दी का अखिल भारतीय स्वरूप उभरने में अभी विलम्ब-सा लगता है। भारत के उच्चतम न्यायालय ने यद्यपि, **आर० आर० दलवाई बनाम तमिलनाडु** [(1977) 2 उम० नि० प० 1114] तथा **भारत संघ बनाम मुरासोली मारान,** [(1978) 1 उम० नि०प० 193] के वादों में हिन्दी को भारत की राजभाषा के रूप में महत्व प्रदान किया है, और इसके विरोध में किये जाने वाले आन्दोलनों और इसके प्रशिक्षण की व्यवस्था को चुनौती देने वाली प्रवृत्तियों की निन्दा की है, फिर भी, राष्ट्र का बौद्धिक जनवर्ग इसे उस रूप में अभी नहीं स्वीकार कर पाया है, जिस रूप में अंग्रेजी को स्वीकार करने में वह गौरव और गर्व का अनुभव करता है।

भाषा के सन्दर्भ में राष्ट्र अभी संक्रमण काल से गुजर रहा है। विधि, विज्ञान, तकनीकी और चिकित्सा के क्षेत्र में हिन्दी को लाने और अंग्रेजी को हटाने में हमें **"प्रतीक्षा करो और देखो"** की नीति पर चलना होगा। हिन्दी तो समूचे भारत की एक सम्पर्क-भाषा बन चुकी है, अंग्रेजी और क्षेत्रीय भाषायें तो कुछ लोगों की भाषा हैं। भारत ने चूंकि लोकतंत्र की व्यवस्था को स्वीकार किया है, इसलिए, एक न एक दिन जनता की भाषा हिन्दी अपना पद ग्रहण कर ही लेगी। इतना ही नहीं महात्मा गांधी, दयानन्द सरस्वती और आचार्य विनोबा भावे जैसे महापुरुष और उनके जैसे राष्ट्रभक्त स्वयं आगे बढ़कर इसे विधि के क्षेत्र में भी अकेली राजभाषा के रूप में प्रतिष्ठापित करेंगे—ऐसी आशा है। □□□

(पृष्ठ 4 का शेष)

'राजभाषा भारती' की सामग्री आरम्भ से ही अपनी विशेषता के कारण सम्बन्ध अधिकारियों एवं हिन्दी एककों द्वारा सराही जाती रही है। प्रस्तुत अंक 14 (जुलाई सितम्बर, 1981) में ऐसे ही कुछ विशेष निबन्ध संकलित है। भाषा द्वारा राष्ट्रीय एकीकरण के आयोजन प्रचार सार्थक तो है ही, उत्तेजक एवं मनोरंजक भी। इस प्रकार डा० रामचन्द्र तिवारी का आलेख भी बहुत ही सूचनात्मक है।

कृपया आगामी अंकों में राजभाषा अधिनियम के नियमों एवं संकल्पों तथा राजभाषा विभाग द्वारा अनुमोदित/प्रस्तावित अनुच्छेदों की अद्यतन नियमावली भी प्रकाशित कर दिया करें। साथ ही, सम्बद्ध विषय पर प्रकाशित पुस्तक की सूचना एवं टिप्पणी भी।

—डा० रणजीत कुमार साहा, हिन्दी अधिकारी
हिन्दुस्तान कॉपर लिमिटेड, कलकत्ता।

"कुछ अपनी" से लेकर समस्त पत्रिका के संयोजित अवयव सराहना के पात्र हैं। इनमें अपनी मौलिकता तथा निर्भीकता है। श्री भागवत झा 'आजाद' के विचारों को तथा सशक्त क्रियान्विति जो हिन्दी के लिए अत्यावश्यक है, पढ़कर भावविभोर हो गया। काश! इसका अनुकरण केन्द्रीय सरकार के समस्त मंत्रालय तथा संलग्न और अधीनस्थ कार्यालय करते! वास्तव में हिन्दी की सेवा राष्ट्र की सबसे महानतम सेवा है। मैं श्री 'आजाद' के प्रति आभारी हूं।

परिचर्चा—'भाषा और राष्ट्रीय एकीकरण' पर सामयिक और राष्ट्रोपयोगी प्रतीत हुई तथा डॉ० परमेश्वर दीन शुक्ल का 'राष्ट्र भाषा और हिन्दी' नई चेतना देने में सक्रिय और सफल रहा है। इसके अतिरिक्त 'सर्व भारतीय साहित्य : शिखर की तलाश' भी प्रभावशाली निबंध है। श्री राकेश जी के लिए अभिनन्दन। शेष समस्त स्तम्भ और पत्रिका के अंश प्रशंसनीय हैं।

जानकी प्रसाद सोनी, स्नातकोत्तर शिक्षक
केन्द्रीय विश्वविद्यालय, शाहीबाग, अहमदाबाद-4 (गुजरात)।

□ □ □

परिचर्चा

राजभाषा के संबंध में द्विभाषिकता : समस्याएं और समाधान

(राजभाषा अधिनियम, 1963 की व्यवस्थाओं के अनुसार संघ सरकार के कामकाज में द्विभाषिकता की स्थिति चल रही है। इस अवस्था के अनुसार निर्धारित कागज-पत्रों तथा पत्रादि को द्विभाषिक रूप में जारी करना पड़ता है। ऐसी ही स्थिति राज्य सरकारों के कामकाज में भी चल रही है, जिसके कारण न केवल हिन्दी, बल्कि राज्यों की राजभाषाओं की भी यथोचित प्रगति नहीं हो पा रही है। कुछ विद्वानों का कहना है कि वर्तमान द्विभाषिक स्थिति के कारण, जिसमें अंग्रेजी प्रधान भाषा बनी हुई है और अन्य भारतीय राजभाषाएं अनुवाद के माध्यम से उसकी अनुगामिनी बन कर चल रही हैं, सरकारी काम करने में बहुत विलम्ब होता है। इतना ही नहीं इसमें अधिक धन खर्च होता है, अधिक परिश्रम करना पड़ता है और जनता तक सीधे पहुंचने का अपेक्षित लक्ष्य प्राप्त नहीं हो पाता। उनकी धारणा है कि इस व्यवस्था के कारण चिरकाल तक हिन्दी एवं अन्य राजभाषाओं के प्रयोग की संभावना नजर नहीं आती। दूसरी ओर इस नीति के समर्थकों का दावा है कि द्विभाषिकता के कारण ऐसी कोई कठिनाई नहीं आती, जिससे हिन्दी तथा प्रादेशिक भाषाओं का प्रचार-प्रसार न हो सके। उनका कहना है कि देश की वर्तमान परिस्थितियों में संघ सरकार के लिए यही सर्वोत्तम नीति है, क्योंकि इसके अनुसार सभी वर्गों के लोगों को साथ लेकर आगे बढ़ा जा सकता है। वर्तमान द्विभाषिक व्यवस्था के हानि-लाभ एवं उसकी समस्याओं तथा समाधानों से परिचित होने के लिए सभी उत्सुक रहते हैं, अतः इस विषय पर एक परिचर्चा का आयोजन किया गया है, जिसमें देश के विभिन्न भागों के वरिष्ठ विद्वानों ने अपने-अपने विचार व्यक्त किए हैं। प्रस्तुत हैं यहां उनके विचार
—संपादक)

(1) डा० गोपाल शर्मा

भू० पू० निदेशक, केन्द्रीय हिन्दी संस्थान, आगरा

भारत बहुत प्राचीनकाल से बहुधर्मी और बहुभाषी देश रहा है किन्तु अनेक भाषाओं में से संस्कृत, पालि, अर्धमागधी जैसी भाषाएं धर्मप्रवर्तकों या प्रचारकों के महत्व के कारण अधिक ऊपर उठीं। कालान्तर में संस्कृत का महत्व अधिक व्यापक होता गया और उसने इस विशाल देश में जनसमाज को, विविध प्रकार से, एक सूत्र में ग्रथित करने में प्रभावी भूमिका निभाई। इसका यह तात्पर्य नहीं कि अन्य भाषाएं सर्वथा दब गईं वरन् वे विशिष्ट प्रसगों में अपने भाषिक समुदाय में व्यवहार में आती रहीं परन्तु विस्तृत क्षेत्र में सम्प्रेषण की माध्यम नहीं बन पाईं। शासन ने उन्हें मान्यता प्रदान की। ईसा से कई शताब्दी पूर्व कौटिल्य ने राजा के लिए विजित प्रदेश की संस्कृति और भाषा से तादात्म्य स्थापित करने का विधान किया था। गुप्त शासनकाल से अंग्रेजों के शासनकाल तक तथा आज भी प्रशासन का कार्य प्रदेश स्तर और परिस्थिति की अनिवार्यताओं के अनुरूप अनेक भाषाओं एवं बोलियों में होता आ रहा है। यहां यह स्पष्ट करना आवश्यक है कि आधुनिक भाषा-विज्ञान में "द्विभाषिकता" शब्द का अभिप्राय 'बहुभाषिकता' ही होता है।

भारत की द्विभाषिकता मुख्यतः दो रूपों में सामने आती है। एक है धार्मिक, सांस्कृतिक, शास्त्रीय आदि क्षेत्रों से सम्बद्ध विचारों को व्यक्त करने के लिए भाषिक-व्यवहार में तत्सम रूपों या शाब्दिक विरासतों के रूप में, जो कि आज तक विद्यमान है। कई आधुनिक भाषाविज्ञानी इन्हें 'लोन' (उधार) कहकर वर्गीकृत करते हैं। यह भारतीय भाषाओं के प्रसंग में भ्रामक धारणा है। वास्तव में ये समन्वित भारतीय अर्थतंत्र (sementic system) में तैरते हुए हिमशैलों (ice bergs) के सतह से ऊपर दिखने वाले भाग हैं। ये विविध क्षेत्रों में एकात्म्य के समान भाषिक प्रतिफलन हैं। इस तरह की समजातिमत्ताओं (iso-ethenems) के ग्राफ न केवल भारत बल्कि दक्षिणपूर्व एशिया के कई क्षेत्रों तक खींचे जा सकते हैं।

दूसरा है दो या बहुभाषा व्यवहार—प्रसंग, परिस्थिति और आवश्यकता के फलस्वरूप। यह विभिन्न मात्रा और रूपों में पहले भी प्रचलित था (मृच्छकटिक का न्यायालय दृश्य) और आज भी है। स्थानीय परिस्थितियों के उदाहरण किसी राज्य के जिले या ताल्लुके की कचहरी में पाये जाने वाले भाषा-व्यवहार हैं। राष्ट्र की बहुभाषिक विस्तृत क्षेत्रीय सम्प्रेषण की आवश्यकताओं ने 'द्विभाषिकता' में हिन्दी को विशेष स्थान दिलाया है। आज की स्थिति में 'द्विभाषिकता' से प्रादेशिक भाषा (राज्य-भाषा) अंग्रेजी और हिन्दी अभिप्रेत है। शिक्षा के क्षेत्र में जो त्रिभाषा सूत्र की व्यवस्था है वही प्रादेशिक शासन और संघीय केन्द्र के लिए अपरिहार्य प्रतीत होती है।

राजभाषा अधिनियम 1963 की व्यवस्था के अनुसार संघ सरकार के काम-काज में असमान द्विभाषिकता की स्थिति चल रही है। यह आशा की जाती थी कि जैसे-जैसे समय बीतेगा हिन्दी

का प्रयोग उत्तरोत्तर बढ़ता जाएगा और अत्यंत आवश्यक और आनिवार्य होने पर ही अंग्रेजी में मूल प्रारूपण या टिप्पण आदि किया जाएगा। पर ऐसा नहीं हुआ। इसका कारण राजनैतिक कठिनाइयां हैं और उनसे भी अधिक प्रशासक वर्ग का हिन्दी के माध्यम से चिन्तन और अपने विचारों को व्यक्त करने का अनभ्यास और अक्षमता है। शिक्षा के दौरान जब तक हिन्दी या प्रादेशिक भाषाओं का विविध विषयक चिंतन-अध्ययन और लेखन में प्रयोग नहीं होगा तब तक इन्हें अनूदित भाषा के रूप में ही रहना होगा। ये द्वितीय स्थान से आगे नहीं बढ़ पायेंगी। आधुनिक प्रशासन की फैलती हुई परिधि और विकास-कार्यक्रमों में विज्ञान-प्रौद्योगिकी और आधुनिक आर्थिक-तंत्र की महत्तर भूमिका ने शिक्षा और प्रशासन, दोनों क्षेत्रों में अंग्रेजी को कायम रखा है क्योंकि इन विषयों की शब्दावली, मुहावरे और अभिव्यक्ति प्रणाली का विकास भारतीय भाषाओं में उतनी तेजी और व्यापकता से नहीं हो रहा है जितना कि प्रतियोगी भाषाओं में होना चाहिए। इसलिए कार्मिक (Personnel) प्रदान करने वाले स्रोतों में भारतीय भाषाओं की स्थिति मजबूत करना बहुत आवश्यक है। इसके अतिरिक्त निजी प्रतिष्ठानों में, जनता के बहुत बड़े शिक्षित और प्रबुद्ध वर्ग में हिन्दी के प्रयोग के प्रति कोई उत्साह नहीं है।

भाषा के क्षेत्र में काम करने वालों ने एक ऐसी स्थिति की कल्पना भी की थी कि जिसमें हिन्दी (प्रा०भा०) का अंग्रेजी शब्दों एवं अभिव्यक्तियों से मिला-जुला प्रयोग होगा जैसा कि आम सम्भाषणों में देखा जाता है। यह स्थिति कार्यालयों में हिन्दी के पूर्ण प्रयोग का एक सोपान हो सकती थी। परन्तु कार्यालयों में हिन्दी का मिश्रित प्रयोग भी नजर नहीं आता। सेवा में प्रवेशोत्तर प्रशिक्षण के बाद सामान्य प्रशासन में भी लोग हिन्दी का प्रयोग बहुत ही नगण्य परिमाण में करते हैं। मिश्रित भाषा का प्रयोग करने में प्रतिष्ठा गिरने का भय, संकोच उत्पन्न करता है। यदि विविध प्रशासनिक साहित्य भारतीय भाषाओं में यथावश्यक मात्रा में उपलब्ध हो गया होता अथवा जो उपलब्ध हो रहा है वह शब्द, मुहावरे और वाक्यसंरचना की दृष्टि से अंग्रेजी-पाठ का अनुगामी न होता तो प्रवेशोत्तर प्रशिक्षण, महत्वपूर्ण टिप्पण-प्रारूपण में कार्मिकों की हिम्मत और क्षमता बढ़ा सकता था। किन्तु इस सम्बन्ध में भी स्थिति संतोषजनक नहीं है। इसके अतिरिक्त केन्द्र को हिन्दी टाइपराइटर और आशुलिपिक पूरी मात्रा में नहीं मिल पाते। यही स्थिति प्रादेशिक (राज्य) सरकारों की भी है। तो कुल मिलाकर संघ-सरकार के स्तर पर हिन्दी को गौण स्थिति से उठाने के लिए कई आयामों में प्रयत्न करने होंगे। गणतंत्र का प्रशासन, भाषा-प्रयोग की दृष्टि से ही क्या अनेक दृष्टियों से व्ययसाध्य तो होता ही है। विश्व के अनेक बहुभाषी राज्य, यहां तक कि संयुक्त राष्ट्र संघ भी भाषा व्यवस्था पर बहुत खर्च करता है। कम से कम स्वतंत्रता के 32 वर्ष बाद तो सामान्य प्रशासन में 'भारतीय द्विभाषिकता' की जड़' जम जानी चाहिए थी। शासन दृढ़ निश्चयी होकर इस मामले में सक्रिय हो तो 'न ययौ न तस्थौ' की वर्तमान स्थिति में सुधार हो सकता है।

भारत आधुनिक तकनीकी, औद्योगिक और आर्थिक विकास के दौर से गुजर रहा है। इसमें जनता की छोटी आर्थिक और औद्योगिक इकाइयां भी भाग ले रही हैं। इनके फलस्वरूप अवसंरचना (Infra-structure) अथवा निर्माण के निचले स्तरों पर एवं बुनियादी साधन जुटाने के स्तरों पर भी किसी न किसी मात्रा में अंग्रेजी शब्द और अभिव्यक्तियां क्रमशः प्रचलित होती जा रही हैं। आम जनता की यह धारणा है और कुछ हद तक यह स्थिति वास्तविक भी है कि अंग्रेजी में लिखा हुआ पत्र उसकी मांग जल्दी पूरी करता है। हिन्दी पत्र का पहले अनुवाद होता है तब उस पर उच्चस्तरीय निर्णय होता है जिसमें काफी समय लग जाता है। सामान्य जन-जीवन अब उन अदृश्य आंतरिक ऊर्जाओं की ओर आस्था से जागरूक नहीं है जितना कि कठिनाइयों और खर्चे के बावजूद व्यावहारिक सुविधाओं की ओर प्रवृत्त हो रहा है। हालांकि सांस्कृतिक विघटन और छोटे ध्रुवीकरण राष्ट्र के जीवन में विकास की प्रक्रिया को बहुत आघात पहुंचा सकते हैं किन्तु इस ओर राष्ट्र के प्रबुद्ध वर्ग का विकास के उत्साह में ध्यान नहीं जा रहा है। बड़े पैमाने पर भारत में ऊपर से नीचे तक अर्थ-क्रियावादी दर्शन (Pragmatism) जड़ पकड़ता जा रहा है।

समय आ गया है कि हम हिन्दी (आ० भा०) को राजनैतिक और तात्कालिक सुविधाओं को आवश्यकता से अधिक महत्व देते हुए, उपेक्षा की दृष्टि से देखना छोड़ दें और भविष्यगामी सोद्देश्यता (Telcological view) अपनाकर उसे राष्ट्र के एकात्म्य और संगठन को मजबूत करने वाली शक्ति मानें। वर्तमान द्विभाषिकता के दौर में अंग्रेजी से समुचित लाभ उठाते हुए हमें हिन्दी और प्रादेशिक भाषाओं की स्थिति उत्तरोत्तर मजबूत करनी चाहिए। हिन्दी के साथ हिन्दी भाषियों को सम्पृक्त रूप से देखना अब उसी प्रकार ठीक नहीं है जिस प्रकार अंग्रेजी को ब्रिटेन के आम अंग्रेजी से सम्पृक्त करके देखना। आज की विविध, आधुनिक क्षेत्रों में प्रयुक्त हिन्दी, हिन्दी भाषियों के लिए भी अपरिचित और सीखने की भाषा बनती जा रही है। सामान्य अंग्रेजी भी विधि क्षेत्रीय अंग्रेजी की रूप-शैली गत विलक्षणता को, भूतपूर्व उपनिवेशों में उत्पन्न उसके नव परिवर्तित रूपों को अपनी भाषा मानने से हिचकिचाता है। इसलिए आज अमरीकन, जर्मकन, इण्डियन, अंग्रेजियन, अपनी अलग सत्ताएं कायम कर रही हैं। हिन्दी वैज्ञानिक और तकनीकी चिन्तन शैली के अनुरूप अभी अपरिपक्व रूप धारण कर रही है धीरे-धीरे प्रयोग से उसमें ठहराव और निखार आएगा। हिन्दी क्षेत्र के लोगों को भी विशेष मनोयोग से यत्नपूर्वक उसे सीखना होगा।

राज्य शासन में द्विभाषिकता

जो स्थिति संघ शासन में हिन्दी की है वही राज्य सरकारों में उनकी अपनी भाषाओं की है। उन्हें भी अपनी भाषा के प्रगामी प्रयोग में उन्हीं कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है जिनका हिन्दी के संबंध में संघ-सरकार को। ऐसा अनुभव होने लगा है कि केन्द्र के राजभाषा विभाग को राज्यों में भी सक्रिय भूमिका निभानी चाहिए। कार्यक्रम, सोपान, निर्धारण, विविध-प्रशिक्षण,

प्रशासनिक साहित्य निर्माण, तकनीकी साधनों की उपलब्धि आदि अनेक क्षेत्र हैं जिनमें केन्द्र और राज्य में परस्पर समन्वय स्थापित करना बहुत उपयोगी होगा।

केन्द्र में हिन्दी की स्थिति मज़बूत करने के लिए राज्यों को भी संघ से पत्र-व्यवहार में द्विभाषिकता अपनाने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। यदि राज्य सरकारें अपने राजभाषा अधिनियमों में सीमित और क्रमशः चुने हुए संघीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी के साथ या अतिरिक्त हिन्दी के भी प्रयोग का विधान कर लें तो केन्द्र और राज्य प्रशासन दोनों ही इस सांस्कृतिक नवजागरण में सहभागी बन सकते हैं। कुछ राज्यों ने ऐसा प्रावधान किया भी है जिससे दोनों को परस्पर चिंतन, आयोजन, भाषा और शब्दावली विकास के अनुभवों और दिशानिर्धारणों का लाभ मिल सकता है। केन्द्र की भूमिका यथासंभव समान पद-प्रशासन शब्दावली तथा अभिव्यक्तियों, प्रशिक्षण-व्यवस्थाओं एवं प्रशासनिक साहित्य के निर्माण संबंधी विविध अनुभवों को प्रस्तुत करने की हो सकती है। राज्य सरकारें अपने चिंतन और प्रयासों तथा व्यवस्थाओं (प्रयोग के क्षेत्रों की अग्रताओं के निर्धारण, नियम आदेश आदि) का लाभ केन्द्र को दे सकती है। बाधाओं, समाधानों पर सम्मिलित चर्चा की जा सकती है और राज्य तथा केन्द्र की राज भाषाओं, उपभाषाओं एवं बोलियों के प्रयोजन और क्षेत्रपरक नक्शे बनाकर उन पर व्यवस्थित तौर पर कार्य किया जा सकता है। इस विचार को आगे बढ़ाने के लिए केन्द्र और राज्यों का एक सम्मेलन आयोजित कर रायशमारी की जानी चाहिए। तत्पश्चात एक-एक राज्य से अलग-अलग विचार विनिमय के द्वारा आवश्यक कार्यक्रम तैयार कर उस पर अमल किया जा सकता है।

यह लेख भूमिका मात्र ही है। द्विभाषिकता के विविध आयामों के संबंध में विशिष्ट विद्वानों के विचार आमंत्रित किए गए हैं उनसे इस विषय की विशिष्ट समस्याओं और समाधानों पर विचार प्राप्त होंगे। आशा है इससे राजभाषा की प्रगति का मार्ग प्रशस्त होगा।

(2) डा० रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव

अध्यक्ष, भाषा विज्ञान, दिल्ली विश्व विद्यालय

भारत आदिकाल से बहुभाषिक और बहुसांस्कृतिक देश रहा है। यहां चार भाषाई परिवारों की विभिन्न भाषाएं, वर्षों से एक बृहत् परिवार के रूप में पनपती और विकसित होती रही हैं। यही कारण है कि सामाजिक स्तर पर भारतीय द्विभाषिकता, भाषाई क्षेत्र (linguistic area) की उस संकल्पना को सामने लाती है जिसमें भाषाई लक्षण, भाषाओं के परिवारिक संबंधों का अतिक्रमण करते हैं। वर्षों से चली आ रही सामाजिक द्विभाषिकता का ही यह परिणाम कहा जा सकता है कि द्रविड़ भाषाकुल के भाषाई लक्षण आर्य भाषाओं में और आर्यभाषा परिवार के भाषाई लक्षण द्रविड़कुल की भाषाओं में स्पष्टतः दिखलाई पड़ते हैं। इसी प्रकार आर्य भाषा और भोट-बर्मी से उत्पन्न भाषाई समानता इन दो भाषा परिवारों की भाषाओं में देखने को मिलती है। यह ठीक है कि विभिन्न भाषा परिवारों से संबद्ध भाषाओं के विकास का अपना अलग-अलग इतिहास है, पर यह भी उतना ही सच है कि उनके विकास में अन्य भाषा-परिवारों की भाषाओं का भी एक बहुत बड़ा हाथ रहा है। इस संदर्भ में निम्नलिखित तीन तथ्यों की ओर ध्यान देना आवश्यक है —

1—भारतीय द्विभाषिकता, भाषा व्यवहार की विसंगत परिणति न होकर उसकी सहज और सामान्य स्थिति है।

2—भारतीय द्विभाषिकता, समाज की सहज भाषाई संप्रेषण-व्यवस्था में बाधक नहीं बल्कि साधक रही है।

3—भारतीय द्विभाषिकता, सामाजिक सम्प्रेषण व्यवस्था की अपनी अनिवार्य आवश्यकता का केवल परिणाम ही नहीं अपितु वह सामाजिक संस्थानों (institutions) से समर्थित भी है।

यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि बहुभाषिक देश की सम्प्रेषण व्यवस्था अनिवार्यतः सम्पर्क भाषा को जन्म देती है। राष्ट्रीय सन्दर्भ में कभी इसका रूप **'राजभाषा'** को जन्म देता है और कभी **'राष्ट्रभाषा'** को। इन दो भाषाओं के प्रयोजन और सन्दर्भों में प्रायः हम भेद नहीं करते जिसके फलस्वरूप हम कई बार भाषाविवाद में अनावश्यक रूप से उलझ जाते हैं। ध्यान देने की बात है कि 'राजभाषा' का सम्बन्ध राष्ट्रीयता (nationalism) से रहता है, वह राष्ट्र को राजनैतिक और आर्थिक दृष्टि से एकसूत्रता में बांधने वाली प्रशासनिक प्रयोजनों की भाषा होती है। इसके लिए यह जरूरी नहीं है कि वह भाषा अपने देश की ही हो। इसके विपरीत 'राष्ट्रभाषा' का सम्बन्ध राष्ट्रवादिता (nationalism) के साथ रहता है; उसके पीछे जातीय संस्कार और 'ग्रेट ट्रेडिशन' की शक्ति काम करती है, और उसके सहारे देश अपनी सामाजिक और सांस्कृतिक अस्मिता ढूंढ़ा और स्थापित किया करता ह। जैसा कि फिशमैन ने अपने लेखों में दिखाने की कोशिश की है, प्रत्येक बहुभाषिक देश अपनी राष्ट्रीयता और राष्ट्रवादिता के द्वन्द्व का समाधान अपने ढंग से करता है। उदाहरण के लिए घाना और जाम्बिया ने राष्ट्रीयता की प्रवृत्ति से प्रेरित होकर उस भाषा को देश की राजभाषा का दर्जा दिया जो स्वतंत्रता-पूर्व विदेशी शासकों की भाषा थी। इज़रायल, थाईलैण्ड, सोमालिया, इथोपिया आदि ने राष्ट्रवादिता से अनुप्राणित होकर अन्तर-क्षेत्रीय स्तर पर फैली अपने देश की सम्पर्क भाषा को राष्ट्र-भाषा का दर्जा दिया। पर भारत, श्रीलंका, मलेशिया आदि देशों के सामने समस्या जटिल थी क्योंकि परम्परा अर्जित और संस्कृतिपुष्ट कई समुन्नत भाषाएं इन देशों में राष्ट्रभाषा की दावेदार बन कर आईं। इन देशों ने इसीलिए अपना दूसरा रास्ता अपनाया।

इसमें संदेह नहीं कि भारत की हर प्रमुख भाषा अपने क्षेत्रीय स्तर पर सम्पर्क भाषा के रूप में भी काम करती है पर अखिल भारतीय स्तर पर एक ओर हिन्दी-उर्दू और दूसरी ओर अंग्रेजी सापेक्षतया अधिक सक्षम भाषाएं हैं। भारत के द्विभाषी समाज

के 52.5 प्रतिशत व्यक्तियों की ये दूसरी भाषाएं हैं (हिन्दी-उर्दू—26.8 प्रतिशत और अंग्रेजी—25.7 प्रतिशत)। सपर्क भाषाई समुदाय के प्रति एक हजार व्यक्ति वर्ग पर 35 हिन्दी-उर्दू और 25 अंग्रेजी जानने वाले व्यक्ति हैं। किसी भी अन्य भाषा जानने वाले व्यक्तियों का अनुपात 10 या 10 से अधिक नहीं है। पिछली दोनों जनगणनाओं से स्पष्ट हो चुका है कि प्रायः सभी प्रमुख भाषाएं अपने क्षत्र से बाहर व्यवहार में आती हैं पर जैसा ऊपर संकेत दिया गया है व्यावहारिकता, प्रयोजन और प्रसार की दृष्टि से हिन्दी-उर्दू और अंग्रजी की स्थिति उनसे भिन्न है। इसने भी मातृभाषा के स्तर पर हिन्दी-उर्दू बोलने वालों की संख्या करोड़ में है जबकि अंग्रेजी बोलने वालों की संख्या दो लाख के आसपास है (और जिस प्रकार मातृभाषा के रूप मे संस्कृत बोलने वालों की संख्या सन्देह के साथ देखी जाती है उसी प्रकार अंग्रेजी की इस संख्या पर भी संदेह किया जाताहै।)

यहां हमें आधारभूत द्विभाषिकता और संभ्रांत द्विभाषिकता के भेद पर ध्यान देना उचित होगा। आधारभूत टाइप की द्विभाषिकता सामाजिक सम्प्रेषण व्यवस्था के उस स्तर से संबंध रखती है जो जनजीवन की अपनी दैनिक आवश्यकताओं का परिणाम होता है और जिसकी अपनी प्रवृत्ति सामान्यतः अवमिश्रित भाषा की ओर झुकी होती है। इस टाइप की द्विभाषिकता की जननी सामाजिक आवश्यकता का वह स्तर होता है जो न किसी औपचारिक भाषाशिक्षण की अपेक्षा रखता है और न ही किसी लिखित भाषा या साहित्यक मानदण्ड का। हम इसे अन्तर-राज्यीय बस अड्डों, रेलवे प्लेटफार्मों, विभिन्न धार्मिक स्थलों आदि पर सामान्य व्यवहार की भाषा के रूप में फलते-फूलते देख सकते हैं। यही कारण है कि अशिक्षित वर्ग के व्यक्तियों के भाषा व्यवहार में भी इस टाइप की द्विभाषिकता की जड़ें बड़ी गहराई तक, हम जमी हुई पाते हैं। इसके विपरीत संभ्रांत टाइप की द्विभाषिकता दो भाषाओं के मानक रूप में योग्यता की अपेक्षा रखती है। यह बहुत कुछ औपचारिक परिस्थितियों के बीच दूसरी भाषा के सीखने का परिणाम होता है। उदाहरण के लिए अगर आधारभूत टाइप की द्विभाषिकता हिन्दी प्रदेश से इतर क्षेत्रों की अवमिश्रित भाषा के रूप को जन्म देती है तो संभ्रांत टाइप की द्विभाषिकता को हम अखिल भारतीय स्तर पर सुनियोजित ढंग से प्रतिष्ठित की जाने वाली संस्कृत बहुल और मान-प्रतिष्ठा प्राप्त राजभाषा के रूप में विकसित होने वाली हिन्दी के रूप में देख सकते हैं।

राजभाषा अधिनियम, 1963 और उसके चार वर्ष बाद सन् 1967 में राजभाषा संशोधित अधिनियम ने हिन्दी और अंग्रेजी की द्विभाषिक प्रक्रिया को बढ़ावा दिया है। हिन्दी और अंग्रेजी की यह द्विभाषिकता संभ्रांत टाइप की थी और इसीलिए इसको साधने के लिए अनुवाद की प्रणाली को माध्यम बनाना पड़ा। सांविधिक तथा प्रशासनिक आवश्यकताओं के निर्वाह के लिए अनुवाद को एक महत्वपूर्ण उपाय माना गया। अंग्रेजी के शाब्दिक अनुवाद की कोशिश में हमने 'हियर इन आफ्टर', 'हियर टु फार', 'हियर बाई' के लिए क्रमशः "एतस्मिन पश्चात्' 'अधुनापर्यन्त', 'एतद्द्वारा' आदि व्याकरणिक शब्द भी ढाले। (अब इनको सरल रूप में लिखने की व्यवस्था की गई है—संपा०) व्याकरणिक शब्दों को इस प्रकार गढ़ने और निस्संकोच भाव से उनका प्रयोग करने के पीछे का रहस्य अब छिपा नहीं रहा। हम ऐसी द्विभाषिक स्थिति में जीना चाहते हैं जिसमें सोचें तो अंग्रेजी में पर लिखने की बाध्यता स्वीकार करें 'हिन्दी' में, हम अपनी अस्मिता बनाए रखें विदेशी संस्कृति के साथ, पर रोटी-रोजी के लिए जाएं अपनी भाषा के पास। भाषा ऐसे दुराव को भी कभी स्वीकार नहीं करती। जब हम सोचेंगे अंग्रेजी में और लिखेंगे अपनी भाषा में तब भाषा की जो संकर शैली उत्पन्न होगी, वह भाषा की प्रवृत्ति पर एक विद्रूप व्यंग के रूप में ही उभरेगी।

सरकार के साथ-साथ हमारे शिक्षाविद् भी यह भूल गए कि द्विभाषिकता की स्थिति अपने में कोई अच्छी या बुरी नहीं होती। राजभाषा अधिनियम ने संघ सरकार के कामकाज में हिन्दी-अंग्रेजी को द्विभाषिकता की स्थिति को भले ही बढ़ावा दिया हो, अन्ततः उसे भारतीय संविधान के अनुच्छेद 343 के सन्दर्भ में ही रखकर देखना होगा, जिसके अनुसार "संघ की राजभाषा हिन्दी और लिपि देवनागरी होगी" पर द्विभाषिकता भारतीय समाज की अपनी वास्तविकता है।' यह हम क्यों भूल जाते हैं कि राज्य स्तर पर प्रादेशिक भाषाओं और हिन्दी की द्विभाषिक स्थिति को आदिपर्यन्त बढ़ावा देना है। शिक्षा तंत्र में हमने द्विभाषिकता को त्रिभाषा सूत्र में बांधना चाहा—मातृभाषा और प्रादेशिक भाषा, प्रादेशिक भाषा और हिन्दी तथा हिन्दी और अंग्रेजी। हमें यह स्पष्ट कर लेना चाहिए कि भारतीय द्विभाषिकता न तो अलगाव (seggregation) के सिद्धांत पर आधारित हैं और न समीकरण (assimilation) के सिद्धांत पर। उसकी आधारशिला तो वस्तुतः समाकलन (integration) के सिद्धांत है। पर जिस ढंग से शिक्षातंत्र ने त्रिभाषा सूत्र को लागू किया उससे द्विभाषिकता या तो भाषा समुदायों के बीच अलगाव का कारण बनी अथवा समीकरण का। लक्ष्य तो यह था कि जिस प्रकार विदेशी शासन के दौरान 'अंग्रेजी' 'विदेशी' भाषा से 'द्वितीय' भाषा बनी, (ज्ञान-विज्ञान की माध्यम भाषा से चलकर एक खास वर्ग के लिए जातीय संस्कार, उसकी अस्मिता, उसके भाव-विचार का माध्यम भी बन गयी) हमारी स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद वह 'द्वितीय भाषा' का दर्जा छोड़कर ज्ञान-विज्ञान के साधक के रूप में फिर से 'विदेशी भाषा' तक सीमित हो जाए। पर गलत शिक्षा नीति ने ठीक उसके उल्टा प्रभाव डाला। इस नीति ने हमारी क्षेत्रीय भाषाओं को अनुवादकीय रूप देकर एक तरफ कृत्रिम बनाया, सामान्य व्यवहार से काटकर उसकी शक्ति को क्षीण किया और दूसरी तरफ अंग्रेजी की प्रभुता की जड़ों को और गहराई के साथ समाज में स्थापित किया।

शिक्षातंत्र से अपेक्षा तो यह थी कि हिन्दी और अन्य प्रादेशिक भाषाओं में वह ज्ञान-विज्ञान तथा मान-प्रतिष्ठा प्राप्त व्यावसायिक क्षेत्रों की माध्यम भाषा के रूप में बढ़ावा दे, उससे सम्बद्ध प्रयुक्तियां (registers) को विकसित करे, जनता के व्यवहारजन्य आचरण में उसके प्रयोग को मान दे, पर इस दिशा में कोई भी ठोस क़दम नहीं उठाया गया। हम आधारभूत

द्विभाषिकता के विरुद्ध जाकर एक और संभ्रांत टाइप की द्विभाषिकता को साधते रहे, दूसरी तरफ जनता से जुड़ने के बजाय अंग्रेजी वर्ग के समुदाय से अपनी अस्मिता जोड़ते रहे ।

(3) डा० कैलाशचन्द्र भाटिया

प्रोफेसर, हिन्दी तथा प्रादेशिक भाषाएं,
लालबहादुर शास्त्री राष्ट्रीय प्रशासन अकादमी, मसूरी

राजभाषा नियमों के अनुसार राजभाषा के संदर्भ में द्विभाषिकता की स्थिति है। इस द्विभाषिकता से अनेक समस्याएं उत्पन्न हो गई हैं। भर्ती का जहां तक प्रश्न है विभिन्न चयन बोर्डों तथा संघ लोक सेवा आयोग की स्पष्ट नीति यह है कि विभिन्न पदों/सेवाओं में बिना किसी भेदभाव के योग्यतम व्यक्ति का चुनाव हो। यदि और स्पष्ट कर दें तो कहा जा सकता है कि अहिन्दी भाषा-भाषियों को हिन्दी का सम्यक् या बिल्कुल ज्ञान न होने से चयन में बाधा नहीं आनी चाहिए, जब तक कि उस पद/सेवा के लिए 'हिन्दी' का ज्ञान अनिवार्य न हो। भर्ती के उपरान्त पदभार सम्हालने पर उसको राजभाषा नियमों के अनुसार काम करना होता है। ऐसी स्थिति में उक्त संदर्भ में प्रशिक्षण के दौरान 'भाषा-प्रशिक्षण' का महत्व स्वयं सिद्ध हो जाता है ।

सभी क्षेत्रों में अब प्रशिक्षण का महत्व स्वीकार किया जाने लगा है। भर्ती के पश्चात् वास्तविक स्थिति में क्या और किस प्रकार का कार्य करना होगा इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए ही प्रशिक्षण के दौरान प्रशिक्षणार्थियों को प्रशिक्षण दिया जाता है। यह मौलिक अन्तर है—सामान्य पढ़ाई तथा प्रशिक्षण में। पढ़ाई सामान्यतः एक ही प्रकार की होती है और उसके बाद परीक्षा में उत्तीर्ण होने पर डिप्लोमा या डिग्री दे दी जाती है जबकि प्रशिक्षण सेवाकाल की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर विशिष्ट सन्दर्भ में दिया जाता है। इस दृष्टि से सेवाकाल की भाषिक आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर प्रशिक्षण में भाषा-प्रशिक्षण को मोड़ दिया जाना चाहिए ।

'भाषा-प्रशिक्षण' को सामान्यतः दो भागों में बांटा जा सकता है :—

1. सामान्य और 2. वृत्तिक

सामान्य हिन्दी के प्रशिक्षण से पहले पूर्व परीक्षा के आधार पर क्षेत्र अथवा योग्यता के अनुसार वर्ग बनाये जाने चाहिए और अद्यतन विधियों से सभी वर्गों को समान स्तर पर लाया जाना चाहिए जिससे वृत्तिक पाठ्यक्रम सेवाकाल की आवश्यकताओं पर आधारित हो। सेवा के अनुसार 'रजिस्टर' (प्रयुक्ति) पद्धति अपनानी चाहिए। रजिस्टर या प्रयुक्ति से तात्पर्य है सभी भाषिक इकाइयां, शब्द-पदावली, पदबन्ध, वाक्यरचना, वाक्य-बंध आदि। पाठ्यक्रम में वे सभी रजिस्टर सम्मिलित किये जाएं जिनका अधिकाधिक प्रयोग होता है ।

सामान्यतः कक्षा में दिये जाने वाले प्रशिक्षण के अतिरिक्त अन्य दो पद्धतियां अधिक सहायक सिद्ध होती हैं :

(1) **स्वयंशिक्षण पद्धति** : इसके अन्तर्गत अधिगम (लर्निंग) पर विशेष बल दिया जाता है। फलतः प्रोग्राम्ड लर्निंग पद्धति पर आधारित बनाये गये प्रोग्राम विशेष योग देते हैं ।

(2.1) **गहनशिक्षण पद्धति** : जो शिक्षार्थी किसी भाषा के प्रति सर्वथा नये हैं उनके लिए यह पद्धति विशेष लाभदायक सिद्ध होती है। इसके अन्तर्गत 'भाषा प्रयोगशालाओं' से भी सहायता ली जा सकती है।

(2.2) **आटो ट्यूटर पद्धति** : बहु आयामी दृश्य-श्रव्य पद्धति से स्वयं शिक्षण के लिए प्रोग्राम तैयार किये जाते हैं। इसको ही **'टीचिंग मशीन'** कहते हैं।

भा^{2} (राजभाषा) के भाषा प्रशिक्षण में प्रशिक्षणार्थी की भा^{1} (मातृभाषा) के व्याघात का ध्यान रखना चाहिए। इस दृष्टि से प्रत्येक भिन्न मातृभाषा की कठिनाइयों का ध्यान रखना होता है। इस प्रकार का तुलनात्मक अध्ययन दो भाषाओं—लक्ष्य भाषा तथा आधार भाषा के सभी स्तरों पर—ध्वनि, अक्षर, पदबंध, उपवाक्य, वाक्य—हो सकता है । **आधार भाषा** (**भा^{1}**) तथा **लक्ष्यभाषा** (**भा^{2} तथा ^{3}**) में पारस्परिक संबंध दो दृष्टियां से विश्लेषित किये जा सकते हैं—समानता तथा असमानता। समानता पूर्णतः तथा आंशिक हो सकती है। यह भी संभव हो सकता है कि समानता कम, असमानता अधिक हो। शब्द के स्तर पर समानता होते हुए भी अर्थ में विभिन्नता हो सकती है। इस दृष्टि से प्रत्येक भिन्न आधार भाषा के संदर्भ में व्यतिरेकी अध्ययन पूर्ववत् तैयार होना चाहिए। लक्ष्यभाषा का पठन-पाठन इस प्रकार आयोजित किया जाए कि निम्नलिखित उद्देश्यों की पूर्ति की जा सके :

1. लक्ष्यभाषा की संरचना का पूरा-पूरा ज्ञान प्राप्त करना ।
2. लक्ष्यभाषा के शब्दभंडार से उत्तरोत्तर परिचित होना ।
3. लक्ष्यभाषा के वाक्यों को आशय सहित समझना ।
4. लक्ष्यभाषा को सही रूप में पढ़ने की क्षमता ।
5. अपनी बात एवं विचार की सही रूप में अभिव्यक्ति ।

नई परिस्थितियों में नये प्रकार से भाषा-प्रशिक्षण की व्यवस्था करनी होगी ।

(4) ब्रजकिशोर शर्मा

संयुक्त सचिव एवं प्रारूपकार, विधायी विभाग, नई दिल्ली

स्वतंत्रता प्राप्ति के पूर्व केन्द्र की राजभाषा अंग्रेजी थी। संविधान में हिन्दी को राजभाषा का स्थान दिया गया। यही नहीं संविधान के अनुच्छेद 120 और 210 में यह

स्पष्ट है कि विधान सभाओं में अंग्रेजी का स्थान हिन्दी और अन्य भारतीय भाषाएं पन्द्रह वर्ष की अवधि में ले लेंगी, यह उपबन्ध भी किया गया। न्यायालयों की भाषाओं के बारे में भी संविधान में इसी प्रकार के उपबन्ध रखे गए किन्तु इस दिशा में तैयारी करने में अधिक समय लगेगा—यह अनुमान करते हुए संविधान-सभा ने समय की कोई सीमा नियत नहीं की।

संविधान लागू किए जाने के समय सरकारी कार्यालयों में काम करने वाले सभी अधिकारियों और कर्मचारियों को हिन्दी का समुचित ज्ञान नहीं था, इसलिए एकाएक हिन्दी को राजभाषा बनाना सम्भव नहीं था। आशंका यह भी थी कि यदि हिन्दी को राजकाज में अनिवार्य कर दिया गया तो वे लोग जिनकी मातृभाषा हिन्दी नहीं है, सरकारी काम नहीं कर पाएंगें और साथ ही सरकारी नौकरियों से भी वंचित रह जाएंगें। इसीलिए द्विभाषिकता की नीति अपनाई गई। यह द्विभाषिकता एक सिद्धान्त है, अपने आप में कोई साध्य नहीं है। उद्देश्य यह था कि जो लोग अभी अंग्रेजी जानते हैं वे धीरे-धीरे सेवारत रहते हुए सरकारी खर्च पर, सरकारी सहायता से और सरकार के समय में हिन्दी सीख लेंगे और फिर धीरे-धीरे अपने कार्यालय का काम हिन्दी में करना शुरू कर देंगे। जो लोग हिन्दी जानते हैं उनसे यह अपेक्षा थी कि वे अपना काम प्रारम्भ से ही हिन्दी में करेंगे। यदि इस तरह से सही परिप्रेक्ष्य में और सही नीयत से काम किया गया होता तो पिछले बत्तीस वर्षों में यह स्थिति अवश्य आ जाती कि सभी कार्य हिन्दी में होने लगता। इसी परिवर्तन की आशा करते हुए संसद ने त्रिभाषा सूत्र संबंधी अपना संकल्प पारित किया था जसमें हिन्दी सीखना अनिवार्य था।

किन्तु अब द्विभाषिकता की पद्धति अपने संदर्भ से हट चुकी है। अब इसका अर्थ यह रह गया है कि जहां राज-भाषा-नियमों के अनुसार हिन्दी में पत्र भेजना अनिवार्य है वहां अंग्रेजी में उसका प्रारूप तैयार करके हिन्दी में अनुवाद करवा कर भेजा जाता है। द्विभाषिकता का यह अर्थ कभी नहीं था। यह भी देखने में आता है कि हिन्दी-भाषी राज्यों के हिन्दी मातृभाषा वाले कर्मचारी भी जो अपने राज्यों में रहते हुए हिन्दी में काम करते थे, केन्द्र में आते ही अंग्रेजी में काम करने लगते हैं। यही नहीं वे टिप्पणियां या पत्रों का मसौदा भी अंग्रेजी में ही तैयार करते हैं और हिन्दी अधिकारी से यह अपेक्षा करते हैं कि वे हिन्दी में उसका अनुवाद तैयार कर दें। द्विभाषिकता की नीति के अनुसार तो यह होना चाहिए था कि इस प्रकार के अधि-कारी अपना काम स्वयं हिन्दी में करते।

यही नहीं अभी तक यह भी देखने में आता है कि बड़े-बड़े महत्त्वपूर्ण प्रेस सम्मेलनों के लिए द्विभाषिकता की नीति के अनुरूप यांत्रिक व्यवस्था नहीं हो पाती है। होना तो यह चाहिए कि महत्त्वपूर्ण प्रेस सम्मेलनों में तत्काल अनुवाद की व्यवस्था हो और कान में यंत्र लगाकर हिन्दी-भाषा या स्थानीय भाषा, किसी में भी अनुवाद को सुना जा सके। किन्तु इतनी तकनीकी प्रगति के बावजूद न तो केन्द्रीय सरकार और न ही राज्य सरकारें इसकी व्यवस्था कर पाई हैं।

यदि हमें भारतीय भाषाओं को उनके सही स्थान पर बैठाना है तो द्विभाषिकता की नीति का सही अर्थों में पालन करना होगा और साथ ही शिक्षा के क्षेत्र में त्रिभाषा सूत्र को भी अमल में लाना होगा। आज स्थिति यह है कि न तो केन्द्र में द्विभाषिकता की नीति का पालन हो रहा है और न ही राज्यों में त्रिभाषा सूत्र पर अमल हो रहा है।

(5) —डा रवीन्द्र भ्रमर

रीडर, अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय

द्विभाषिकता के परिप्रेक्ष्य में राजभाषा हिन्दी की स्थिति मुझे असन्तोषजनक नहीं प्रतीत होती। व्यक्तिगत रूप से मेरी ऐसी कोई समस्या भी नहीं है जिसके कारण मैं असन्तोष का अनुभव करूं। मैं हिन्दी प्रदेश का निवासी हूं। हिन्दी क्षेत्र के एक केन्द्रीय विश्वविद्यालय में हिन्दी का अध्यापक हूं। हिन्दी का एक कवि और लेखक होने के नाते, यही भाषा मेरे व्यवहार, विवेक और व्यंजना का संस्कार-सुलभ माध्यम है। अतः मैं द्विभाषिकता अथवा त्रिभाषिकता के किसी ऐसे द्वन्द्व से ग्रस्त नहीं हूं जो मेरे लिए हिन्दी के दैनिक-सार्वजनिक प्रयोग में कोई व्यवधान उत्पन्न करे अथवा हिन्दी के प्रति मेरी-प्रतिबद्धता को कुछ शिथिल कर दे।

द्विभाषिकता का अभिप्राय अंग्रेजी बनाम हिन्दी की समस्या है। केन्द्रीय स्तर पर हिन्दी के विकल्प अथवा विपर्यय के रूप में अभी अंग्रेजी का व्यवहार करने की छूट है। यह छूट वस्तुतः उनके लिए है जिन्हें हिन्दी का यथेष्ट ज्ञान नहीं हो पाया है किन्तु प्रत्येक सरकारी कर्मचारी को हिन्दी का व्यावहारिक ज्ञान हो सके, इसके लिए सुनियोजित रूप से प्रयास भी किया जा रहा है। **केन्द्रीय गृह मंत्रालय से सम्बद्ध विभाग इस दिशा में निरन्तर प्रयत्नशील है और हिन्दी को सर्वग्राह्य तथा लोकप्रिय बनाने की दृष्टि से इसके विविध कार्यकलापों की सराहना की जानी चाहिए।** केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय और तकनीकी शब्दावली आयोग की भूमिका भी महत्त्वपूर्ण रही है। हिन्दी के लिए तकनीकी और पारिभाषिक शब्दावली के चयन एवं परिनिष्ठीकरण का कार्य मनोयोग पूर्वक कराया गया है। अहिन्दी भाषी क्षेत्रों में हिन्दी के विद्वानों को भेजकर, अहिन्दी क्षेत्र के हिन्दी-लेखकों के लिए कार्य-शिविरों का आयोजन करके तथा ऐसे लेखकों को पुरस्कृत करके हिन्दी के प्रति राष्ट्रीयस्तर पर एक रागात्मक चेतना उत्पन्न करने की चेष्टा की गई है और इस उद्देश्य की पूर्ति में सफलता

भी मिली है। ऐसी दशा में, मैं यह मानने को तैयार नहीं हूं कि अंगरेजी के विकल्प के कारण, राजभाषा हिन्दी की गति-प्रगति में कहीं से कोई बाधा उत्पन्न हुई है।

बाधा अथवा चिन्ता की एक स्थिति इस रूप में अवश्य दिखाई पड़ती है कि कुछ लोग अंगरेज़ी अथवा अंगरेजियत के मोह से ग्रस्त जान पड़ते हैं। इनमें से अधिकांश ऐसे हैं जो हिन्दी का काम चलाऊ ज्ञान होने के बावजूद, इसके प्रति अपनी अज्ञानता का ज्ञापन करने में गौरव अनुभव करते हैं। ये साहबी मनोवृत्ति के लोग हैं। कुछ लोग कुटिल राजनीतिक गति के भी हैं जो हिन्दी के प्रचार-प्रसार को महज़ इसलिए रोकना चाहते हैं कि राष्ट्र की एकता सुदृढ़ न होने पाये और विघटनवादी प्रवृत्तियां पनपती रहें। स्वाधीनता से पूर्व, राष्ट्रीय आन्दोलन के प्रहर में लोकमान्य तिलक, नेताजी सुभाषचन्द्र बोस, सरदार पटेल, रेहाना तैय्यबजी, केशवचन्द्र सेन इत्यादि नेताओं ने हिन्दी को राष्ट्रीय एकता के प्रबल सूत्र के रूप में अंगीकार करने की सिफ़ारिश की थी। महात्मा गांधी हिन्दी के प्रबल हिमायती थे। देश को मज़बूत और आज़ाद करने में हिन्दी ने अपनी महत्त्वपूर्ण भूमिका भी निभाई है। आज़ादी के बाद राजभाषा का पद प्राप्त कर लेने पर हिन्दी की भूमिका और भी प्रशस्त हुई है। किन्तु, विकल्प के रूप में, अंग्रेजी के प्रयोग की छूट तात्कालिक सुविधा के रूप म दी गई थी और वह भी केवल 'कुछ समय' के लिए। इस छूट की अवधि को फिर बढ़ा दिया गया किन्तु अभी भी कुछ स्तरों पर उपेक्षा की मनोवृत्ति परिलक्षित हो रही है। मेरा निश्चित मत है कि अंगरेजियत के जामे में पराधीनता के संस्कार अब अत्यन्त न्यून मात्रा में अवशिष्ट रह गए हैं और राजकीय स्तर पर भाषा के द्वैत को समाप्त करने का समय अब आ गया है।

अंगरेजी को उसके साहित्य और ज्ञान-विज्ञान की एक आधुनिक भाषा की परिधि में सीमित करने को हमारी प्रक्रिया अधिक तेज़ होनी चाहिए। वर्तमान सन्दर्भों में अंगरेजी का यही रूप उभर रहा है। हिन्दी के विकल्प के रूप में उसे बनाए रखने का कोई औचित्य भी नहीं है। जो भाषा जनता की ज़बान पर चढ़ गई है, जो पूरे देश के संस्कारों में ढल रही है, जनभाषा के रूप में वह हिन्दी ही जनतन्त्र की भाषा का सच्चा—प्रतिनिधित्व करती है। राजभाषा, राष्ट्रभाषा और सम्पर्क भाषा के रूप में उसी की स्थिति और स्थिरता श्रेयस्कर होगी। देश और उसकी जन-जनतांत्रिक अस्मिता हमारे लिए सर्वोपरि है। इसी भावना से प्रेरित होकर हिन्दी को किसी समुदाय अथवा क्षेत्र पर कभी थोपा नहीं गया और इसी निष्ठा के कारण हिन्दी से विमुख होने को छूट भी किसी को नहीं दी जानी चाहिए।

हिन्दी राष्ट्रीयता और जनतांत्रिकता की ऐसी कल्पलता है जो देश की धरती से जीवन-रस प्राप्त करने के कारण निरन्तर फैल और फूल रही है। द्विभाषिकता के परिप्रेक्ष्य में जो एक मुद्दा क्षेत्रीय भाषाओं का खड़ा होता है उससे भी हिन्दी का कोई टकराव नहीं है। स्वतंत्र भारत में समस्त क्षेत्रीय अथवा प्रादेशिक भाषाओं को उन क्षेत्रों में समान स्वीकृति प्रदान की गई है। प्रादेशिक सरकारों के काम उनकी अपनी भाषाओं में होने लगे है। शिक्षा के माध्यम के रूप में क्षेत्रीय भाषाओं को प्राथमिकता दी जा रही है। ऐसी स्थिति में हिन्दी उक्त अन्य भाषाओं का हक़ और हिस्सा कैसे छीनेगी, और क्यों छीनेगी? प्रादेशिक भाषाओं से हिन्दी को कोई स्पर्धा नहीं है। ब्रिटिश राज में, समूचे भारत में सम्पर्क भाषा के रूप में जो स्थान अंगरेज़ी का था; वही स्थान हिन्दी को दिया गया है। उस समय अंगरेजों ने प्रादेशिक भाषाओं को भी दबा रक्खा था। हिन्दी ऐसा नहीं करेगी—नहीं कर रही है। केन्द्रीय व्यवहार की भाषा (राजभाषा) के रूप में जैसे-जैसे हिन्दी का प्रयोग बढ़ रहा है, प्रादेशिक भाषाओं से उसकी घनिष्टता स्थापित हो रही है। संस्कृत-मूल से जुड़े रहने के कारण, हिन्दी तथा अधिकांश प्रादेशिक भाषाओं में परस्पर आदान-प्रदान की अनन्त सम्भावनाएं निहित हैं। शब्दावली, मुहावरे अथवा भावनात्मक, सांस्कृतिक परिप्रेक्ष्य में अंगरेज़ी से वैसा आदान-प्रदान सम्भव ही नहीं है। इस देश की भाषिक और सांस्कृतिक विरासत की समर्थ संवाहिका होने के कारण हिन्दी से प्रादेशिक भाषाओं को यथेष्ट लाभ होगा।

मेरी दृष्टि में, सैद्धांतिक और व्यावहारिक स्तर पर, सब मिलाकर स्वीकृति और स्वीकार की स्थिति है। इसे राजभाषा हिन्दी का बढ़ता हुआ प्रयोग और प्रसार की स्थिति कहा जा सकता है। इसके प्रति जो आशंकाएं थीं, इसकी सदाशयता के कारण वे धीरे-धीरे निर्मूल होती जा रही रही है। दक्षिण के तमिलनाडु में भी इसके प्रति सद्भावना विकसित हुई है। दक्षिण के कुछ अंचलों में अंगरेज़ी के प्रति जो एक व्यामोह था, वह अब दूर हो रहा है। अंगरेज़ी के स्थान पर हिन्दी की बेल फैल रही है। अहिन्दी भाषी प्रदेशों में हिन्दी के व्यवहार की प्रवृत्ति बढ़ी है और केन्द्रीय सरकार के विभिन्न विभागों में भी हिन्दी के प्रयोग पर बल दिया जा रहा है। विगत तीन दशकों में प्रशासकीय कार्यों के लिए हिन्दी में शब्द-निर्माण, टिप्पणी लेखन, टंकण, और मुद्रण इत्यादि का जो विकास हुआ है; हिन्दी भाषा और साहित्य की जो बहुमुखी प्रगति हुई है, उस सब से राजभाषा हिन्दी की स्थिति सुदृढ़ और उज्जवल प्रतीत होती है।

(6) डा० न० व० पाटिल

निदेशक, राजभाषा महाराष्ट्र राज्य, बम्बई

भूतपूर्व बम्बई राज्य में विधेयकों के अंग्रजी पाठ के साथ साथ मराठी और हिन्दी रूपान्तर राज्य विधानमंडल के सदनों में पेश करने की प्रथा थी। महाराष्ट्र राज्य बनने के बाद यह प्रथा चालू रखी गई है।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद 345 के अनुसार महाराष्ट्र सरकार ने मराठी को राजभाषा के रूप में अंगीकार किया है। राज्य के राजभाषा अधिनियम की धारा 3 में विधान मंडल के कामकाज में हिन्दी के प्रयोग के लिए उपबन्ध किया गया है। उक्त अधिनियम की धारा 4 में, कुछ ऐसे विशेष प्रयोजनों के लिए जिनका अधिसूचना द्वारा उल्लेख किया जाये, राजभाषा के रूप में हिन्दी का प्रयोग करने का उपबन्ध है। अतः महाराष्ट्र में मराठी के साथ-साथ विशिष्ट प्रयोजनों के लिए राजभाषा के रूप में हिन्दी का प्रयोग किया जा रहा है। संविधान के अनुच्छेद 346 की अपेक्षाओं के अनुसार महाराष्ट्र ने मध्यप्रदेश, उत्तर प्रदेश, राजस्थान, बिहार, गुजरात आदि राज्यों से हिन्दी में में पत्र-व्यवहार करने का करार किया है।

महाराष्ट्र में विधायी कामकाज का औसत 2,000 पृष्ठों के अनुवाद का कार्य होता है। राज्य विधान मंडल को अंग्रेजी के साथ-साथ विधेयकों, अध्यादेशों आदि का हिन्दी अनुवाद उपलब्ध कराया जाता है किन्तु इसके साथ यह भी ध्यान रखा जाता है कि आवश्यकता से अधिक हिन्दी प्रतियां न छापी जायें। विधान मंडल की आवश्यकतानुसार लगभग एक चौथाई प्रतियां हिन्दी में छापी जाती हैं। इस प्रकार लेखनसामग्री पर फालतू खर्च नहीं होता है बल्कि उतना ही खर्च किया जाता है जिससे विधायकों की आवश्यकता की पूर्ति हो जाये।

महाराष्ट्र में हिन्दी को अल्पसंख्यकों की भाषा के रूप में मान्यता दी गई है और राज्य तथा विभागीय मुख्यालयों में महाराष्ट्र सरकार द्वारा जारी की गई समस्त महत्त्वपूर्ण अधिसूचनाओं, नियमों, आदि का तत्काल अनुवाद करने की व्यवस्था है। **हिन्दी के प्रयोग से राजभाषा मराठी में न तो कोई बाधा पहुंचती है और न ही सरकारी कामकाज में कोई विलम्ब होता है। इसके अलावा इस सम्बन्ध में जो खर्च होता है उसके मुकाबले लाभ कहीं अधिक होता है।**

हम इस वास्तविकता को टाल नहीं सकते कि राजभाषा के रूप में अंग्रेजी की जड़ें उखड़ती चली जायेंगी और अंततोगत्वा इसके स्थान पर राज्यों में प्रादेशिक भाषाएं तथा केन्द्र में हिन्दी आरूढ़ होगी। अतः किसी भी राज्य में हिन्दी के अधिकाधिक प्रयोग से हिन्दी को योग्य स्थान पर पदारूढ़ करने में काफी मदद मिलेगी। इस राज्य में हिन्दी के विकास की दिशा में महाराष्ट्र समुचित भूमिका निभा रहा है।

(7) डा० एन० ई० विश्वनाथ अय्यर

भूतपूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, कोचीन विश्वविद्यालय

द्विभाषिक स्थिति के अनेक आयाम हैं। इन आयामों में से कुछ प्रमुख बातों का विवरण राजभाषा अधिनियम की धारा 3 (3) में दिया गया है, जिसमें यह बताया गया है कि 14 प्रकार के सरकारी प्रलेखों को अनिवार्यतः हिन्दी और अंग्रेजी दोनों में जारी किया जाना चाहिए। इन प्रलेखों में एक महत्वपूर्ण विषय है प्रशासनिक और अन्य रिपोर्टों को द्विभाषिक रूप में प्रकाशित करना, संसद में प्रस्तुत करना अथवा जनता के लिए प्रचारित करना।

पहले ऐसी रिपोर्टें अधिकतर प्रशासनिक कार्यों से ही संबंधित हुआ करती थीं, किन्तु जैसे-जैसे इस धारा के कार्यान्वयन पर जोर दिया गया है, वैसे-वैसे वैज्ञानिक संस्थानों की रिपोर्ट भी अंग्रेजी और हिन्दी, दोनों में तैयार की जाने लगी हैं। भारत का प्रशासन एक कल्याणकारी प्रशासन है। अत: इसने अनेक ऐसे उद्यम, उपक्रम आदि स्थापित किए हैं, जिनके द्वारा नयी प्रविधियों का प्रयोग करते हुए व्यापक स्तर पर उत्पादन तैयार किए जा रहे हैं। ऐसे अधिकांश उद्यम एवं उपक्रम भारत सरकार की सहायता से स्थापित किए गए हैं। अत: उन पर भी राजभाषा अधिनियम की धाराएं लागू होती हैं और उन्हें अपनी वार्षिक रिपोर्ट संसद में तथा जनता के लिए द्विभाषिक रूप में तैयार करनी होती है।

ऐसी रिपोर्टों का अनुवाद करते समय अनुवादकों के सामने विलक्षण कठिनाइयां आती हैं, क्योंकि इसमें अनेक ऐसे प्राविधिक एवं तकनीकी शब्दों का प्रयोग होता है जो अब तक सामान्यत: हिन्दी में प्रयुक्त नहीं होते थे और यदि कुछ शब्दों का प्रयोग पहले होता भी था तो दीर्घ काल के अप्रचलन के कारण अब उनका समझना कठिन हो गया है। ऐसी स्थिति में अनुवादक को ऐसी पद्धति का सहारा लेना पड़ता है, जिससे एक तरफ तो उसमें अंग्रेजी रिपोर्ट का अर्थ पूरी-पूरी तरह व्यक्त हो और दूसरी तरफ उसकी भाषा सहज और बोधगम्य हो सके। द्विभाषिक स्थिति के इस आयाम की तरफ अब तक अधिक ध्यान नहीं दिया गया था, किन्तु इस लेख में इस समस्या के विविध पहलुओं के उद्घाटित करने का प्रयास किया गया है।

ज्ञान-विज्ञान के प्रचार-प्रसार में लगे संस्थानों का प्रशासन टेढ़ा काम हुआ करता है। इनके अधिकारी आचार्य तथा वैज्ञानिकगण संस्थान के प्रमुख वैज्ञानिक ध्येय पर जोर देते हैं। प्रशासनिक अधिकारी नियमों और प्रविधियों के अंकुश से वैज्ञानिकों को नियंत्रित करने का यत्न करते हैं। कभी-कभी इससे मतभेद उत्पन्न हो जाता है। जहां वैज्ञानिकों के लिए अपने शोध-पत्रों में अनिवार्यता तकनीकी शब्दों का प्रयोग करना पड़ता है वहां प्रशासक अपने पत्र-व्यवहार में अपने क्षेत्र और कार्यविधियों से संबंधित शब्दों का प्रयोग करते हुए पत्राचार करते हैं।

किसी वैज्ञानिक को प्रशासनिक तथा भाषा में दक्षता प्राप्त करने के लिए विशेष प्रशिक्षण की जरूरत पड़ती है। इसी प्रकार प्रशासक को तकनीकी भाषा स्वयं नहीं आती, प्रयत्नपूर्वक सीखनी पड़ती है। किन्तु इन दोनों पहलुओं का अर्थात्

विज्ञान तथा प्रशासन की शब्दावली का प्रयोग एक ही जगह करने का मौका कभी-कभी आता है। इसका उदाहरण है वैज्ञानिक संस्थानों का प्रशासनिक प्रतिवेदन। वाणिज्य, उद्योग आदि क्षेत्रों के सार्वजनिक संस्थानों के प्रतिवेदन भी इसी कोटि में रखे जा सकते हैं।

प्रतिवेदनों के विभिन्न पाठक

वैज्ञानिक संस्थानों के प्रतिवेदन संस्थानों की निदेशक-समिति, व्यवस्थापिका समिति आदि के सदस्यों की सेवा में प्रस्तुत किये जाते हैं। ऐसे प्रतिवेदन हमारे देश की संसद में भी प्रस्तुत किए जाते हैं। वैज्ञानिक भी इन संस्थानों के कार्यकलाप में रुचि रखते हैं। अतः ग्राहकों की तीन कोटियां हैं। प्रथम कोटि विशेषज्ञ वैज्ञानिकों की है। द्वितीय कोटि उन शेयर धारियों और अन्य नागरिकों की है जो आर्थिक स्वार्थ की दृष्टि से इसे देखते हैं। वे वैज्ञानिक बारीकियों के विषय में कुछ नहीं जानते, या बहुत कम जानते हैं। तीसरी कोटि अर्ध-विशेषज्ञों की है जो अभ्यास व प्रतिभा के बल पर वैज्ञानिक बातों तथा प्रशासनिक प्रविधियों को थोड़ा-बहुत समझने की क्षमता रखते हैं। इनकी जानकारी और दिलचस्पी का क्षेत्र सीमित ही रहता है।

अंग्रेजी प्रतिवेदनों का हिन्दी में अनुवाद

जब अंग्रेजी में तैयार की गई वैज्ञानिक तथा प्रशासनिक सामग्री का अनुवाद हिन्दी में करने का प्रसंग आता है तब इसके विविध पाठक वर्गों की संतुष्ट करने की समस्या उठती है। खासकर एक वैज्ञानिक संस्थान का विस्तृत प्रशासनिक प्रतिवेदन अंग्रेजी से हिन्दी में अदिनूत करते समय कई समस्याओं से जूझना पड़ता है और इस दौरान कई रोचक अनुभव भी प्राप्त होते हैं। मैं यहां अपने अनुभव के आधार पर वैज्ञानिक-प्रशासनिक सामग्री के अनुवाद के कुछ पहलुओं पर प्रकाश डालने का प्रयास कर रहा हूं।

यहाँ भारत के एक प्रसिद्ध चिकित्सा-विज्ञान-संस्थान के प्रतिवेदन की चर्चा की जा रही है। वैसे, सामान्य रोगों की मामूली बातें बताने के लिए बोलचाल के हिन्दी शब्द काफी हैं। परन्तु इस संस्थान में पाश्चात्य में आविष्कृत नवीन से नवीन रोग-निदान-विधियों तथा उन रोगों के लिए आवश्यक नवीनतम शल्य चिकित्सा तकनीकों का सफल प्रयोग किया जाता है। पश्चिम में भी जो प्रविधियां और उनके बोधक शब्द अपेक्षाकृत अत्यन्त आधुनिक है उनके लिए बोलचाल के हिन्दी शब्दों को पर्याय मानना तर्क-संगत नहीं है।

चिकित्सा विज्ञान की नई शाखाएं

हमारे नगरों के अस्पतालों में पहले एक ही डाक्टर शरीर के सारे अंगों की बीमारियों का इलाज करते थे। छोटी-मोटी चीर-फाड़ वही करते थे, वही दांत भी उखाड़ते थे। बाद में दांतों के विशेषज्ञ अलग से बनने लगे। आंखों के अस्पताल खुले। नाक-कान-कंठ के विशेषज्ञों का उदय मानों एक युगान्तर था। पिछली अर्धशती में चिकित्सा-विज्ञान के सिद्धान्त-पक्ष और व्यवहार-पक्ष में कितनी ही शाखाएं विकसित हुई हैं। प्रत्येक चिकित्सा विज्ञान-विभाग विस्तार करता जा रहा है। विशेषज्ञ गहराइयों में बैठकर नये-नये तत्थों और औषधियों का आविष्कार करते जा रहे हैं। इसका एक उदाहरण न्यूरालॉजी के विकास में मिलता है। न्यूरालॉजी (तंत्रिका-विज्ञान) अपेक्षाकृत नया विज्ञान है। इसके विशेषज्ञों के अनुसंधानों के फलस्वरूप न्यूरो-केमिस्ट्री, न्यूरो-सर्जरी आदि का विकास हुआ है। एक्स-किरण के आविकार के बाद रेडियम-चिकित्सा विज्ञान का बहुमुखी विकास हुआ है। चूंकि इन विषयों की चर्चा प्राय: अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर होती है इसलिए अन्तर्राष्ट्रीय वैज्ञानिक शब्दावली इन विषयों के लिए अधिक प्रयुक्त होती है।

वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग के शब्द

हम जब इन वैज्ञानिक और तकनीकी शब्दों का अनुवाद हिन्दी में करना चाहते हैं तब समस्या उठती है कि हम किन शब्दों का प्रयोग करें। भारत सरकार के वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली आयोग ने इस क्षेत्र में महत्वपूर्ण कार्य किया है। आयोग ने विशेषज्ञ विद्वानों के सहयोग से वैज्ञानिक एवं तकनीकी शब्दावली का विशद संग्रह चार जिल्दों में प्रकाशित किया है। इस ग्रंथ में दिये हुए हिन्दी पर्याय काम दे सकते हैं। इन संग्रहों से भी सभी शब्दों के पर्याय नहीं मिल पाते ऐसे अभी अनेक जटिल शब्द हैं जो केवल विशेषज्ञों के तकनीकी पत्राचार में आते हैं। उन्हें हम अपवाद स्वरूप मान सकते हैं जो अत्यधिक जटिल नहीं हैं उनके विषय में उद्भावना-परक नीति अपनाना भी उचित होगा। अंग्रेजी शब्दों का प्रसंगोचित सूक्ष्म अर्थ ग्रहण करने के पश्चात् उस अर्थ के बोधक हिन्दी पर्यायों का पता लगाना और बाद में अंग्रेजी-हिन्दी - समस्तपद गढ़ना भी संभव है। किन्तु ऐसे प्रसंगों के बारे में अनवस्था और अव्यवस्था के दोषों से सावधान रहना चाहिए। विद्वानों के लोकप्रिय पर्यायों को स्वीकार करने के बदले यदि प्रत्येक अनुवादक अपनी सूझ के अनुसार वैज्ञानिक अंग्रेजी शब्दों का मनमाना अनुवाद करता जाये तो पर्यायों की बहुलता के कारण अनेकों कठिनाइयां पैदा हो सकती हैं। प्रमाणिकता की दृष्टि से भी पूरे देश के लिए एकरूप शब्दावली ही वांछनीय है।

संक्रान्तिकाल का उपाय

हिन्दी में मानक शब्दावली की स्वीकृति और प्रयोग ही चरम लक्ष्य है। तो भी संक्रान्तियुग में एक नई प्रविधि स्वीकार की जा सकती है। अभी आधुनिक चिकित्सा-विज्ञान का नया विकास हो रहा है। अतः विद्वानों द्वारा निर्मित या रूपांतरित हिन्दी तकनीकी शब्दों से हिन्दी-भाषी डाक्टर भी पूर्णत: परिचित नहीं हैं। अतः विशेष तकनीकी शब्दावली का प्रयोग करते समय प्रथम उल्लेख में

कोष्ठकों में मूल शब्द मूलभाषा में या सही रूप से लिप्यंतरित रूप में देना जरूरी लगता है। इस नीति से अनूदित शब्दों की मान्यता शीघ्र बढ़ सकती है और अनूदित हिन्दी शब्द जल्दी लोकप्रिय हो भी सकते हैं।

संस्कृत शब्दों का सशक्त स्रोत

जो लोग हिन्दी में वैज्ञानिक साहित्य के अनुवाद को असंभव एवं अनावश्यक बताया करते हैं वे यह भी भली-भांति जानते हैं कि हिन्दी को संस्कृत स्रोत से काफी सशक्त शब्द-कोश विरासत में प्राप्त है। साथ ही इसमें आधुनिक विज्ञान की बुनियादी शब्दावलियां भी उपलब्ध हैं। ये स्नातक-स्तर तक की पाठ्य-पुस्तकों में प्रयुक्त भी हुई हैं। भौतिकी, रसायन विज्ञान, प्राणि-विज्ञान, भूगर्भ-विज्ञान, सांख्यिकी जैसे विषयों के सामान्य ग्रंथ अभी प्रचलित ही हैं। इनके पद पर आगे बढ़कर नये शब्दों, मुहावरों और वाक्यांशों का निर्माण संभव है। यहां शब्दार्थ-संबंध का यह तथ्य भी उल्लेखनीय है कि नये शब्दों और नये अर्थों का परस्पर संबंध होने में काफी समय लगता है। प्रचार जितनी शीघ्रता से किया जाता है उतनी ही शीघ्रता शब्दार्थ-संबंध की स्थापना में भी हो सकती है। जैसे, नासूर (कैन्सर) मस्तिष्क ज्वर (एन्सिपलेटिस) निरोध (कांट्रसेप्टिव) गर्भपात (एबोर्शन) आदि चिकित्सा क्षेत्र के अनूदित शब्द अब देश के गाँव-गाँव में पहुंच चुके हैं।

चिकित्सा-विज्ञान के अनुवाद में हमारे देश के प्राचीन ग्रंथों से पर्याप्त सहायता मिली है। आयुर्वेद की अनुपम ग्रंथ-राशि यहां संस्कृत में प्राप्त है। इसमें शरीर विज्ञान, रोग-निदान आदि ऐसे अनेक विषयों की चर्चा है जो आधुनिक चिकित्सा के क्षेत्र में भी संगत है। उन प्राचीन शब्दों से कुछ नये शब्द गढ़े भी गये हैं। जैसे 'अणु' शब्द प्रसिद्ध है। इससे बैक्टीरिया के लिए 'जीवाणु', वाइरस के लिए 'विषाणु' तथा 'मैक्रोवाइरस' के लिए 'सूक्ष्मजीवाणु' शब्द बने हैं। प्राचीन ग्रंथों में प्राप्त और आधुनिक युग के लिए उपयोगी प्राचीन शब्दों के उदाहरण हैं–संवहन रोपण (वास्कुलर ग्रैफ्ट) फुप्फसी तंत्र (प्लूमनरी फंक्शन), घनास्त्रता (अशांबोसिस) केन्द्रीय तंत्रिका तंत्र (सेंट्रल नर्वस सिस्टम) आदि।

आविष्कारों के भारतीय नाम

आधुनिक वैज्ञानिक अनुसंधान में, जिनमें चिकित्सा-विज्ञान का क्षेत्र भी शामिल है, भारतीय वैज्ञानिक प्रशंसनीय योग दे रहे है। उन्हें अपने नये आविष्कारों पर अंतर्राष्ट्रीय सम्मान तक प्राप्त हो रहा है। नये सिद्धांतों एवं नयी प्रविधियों का आविष्कार किया जा रहा है। इन्हें कोई भारतीय नाम या कम से कम भारतीय परिवेश का सूचक नाम दिया जा सके तो कितना अच्छा हो। यूरोपीय वैज्ञानिक अपने आविष्कारों का नामकरण अपनी ही भाषा में और यथासंभव अपने ही व्यक्तित्व या देश से संबंधित शब्दों के द्वारा करते हैं। उदा० 'पोलोनियम'। इस दिशा में स्व० सी०वी० रामन का साहस सराहनीय है। प्रकाश किरणों के क्षेत्र में अपने अनुसंधान-सिद्धांत को उन्होंने 'रामन-प्रभाव' नाम दिया था। संसार के सारे वैज्ञानिक 'रामन इफेक्ट' शब्द कहते हैं। उन्हें भारतीय शब्द बोलने में शरम नहीं है। यदि वैज्ञानिक आविष्कार महत्वपूर्ण है तो कोई गम्भीर वैज्ञानिक उसे इस कारण से नहीं ठुकराएगा कि नाम भारतीय है बल्कि इससे भारत का नाम दुगुना गौरव पाएगा।

वैज्ञानिक एवं प्रशासनिक भाषा का मधुर मेल

वैज्ञानिक संस्थान के अनुसंधान का तकनीकी प्रतिवेदन वैज्ञानिकों का लक्ष्य करके तैयार किया जाता है। किन्तु अनुसंधान आदि का जो प्रशासनिक प्रतिवेदन तैयार किया जाता है वह अर्धवैज्ञानिक होता है। उसमें प्रशासन, संविधान आदि के शब्दों का भी समावेश रहता है। चिकित्सा-संस्थान में डाक्टरों द्वारा तैयार किया गया प्रतिवेदन सहज ही संक्षिप्त रहता है। इसमें किसी साहित्यिक प्रतिवेदन का भाषागत सौष्ठव अथवा विधि के प्रतिवेदन की तरह जटिल मिश्र वाक्यों की भरमार नहीं रहती। किन्तु अर्धतकनीकी एवं तकनीकी शब्दों के कारण कहीं-कहीं वाक्यों में जटिलता और दुरूहता आ जाती है। ऐसे हिस्सों का अनुवाद करते समय औचित्य पर ध्यान देते हुए भी पर्याय-वाची शब्द चुनना-गढ़ना पड़ता है।

अर्ध-तकनीकी शब्द

(अ) विंग, डिपार्टमेंट, डिवीजन :—ये तीनों 'विभाग-वाची' हैं। सबसे बड़ा विंग "खण्ड' या 'स्कंध' कहलाता है। डिपार्टमेंट 'विभाग' तथा डिवीजन 'प्रभाग' कहलाते हैं। ये शब्दांतर सिर्फ प्रस्तुत प्रतिवेदन में संगत हैं। उक्त अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग प्रसंगों के अनुसार न्यूनाधिक महत्व के लिए हो सकता है। वक्ता का प्रसंगगत आशय ही उसका निर्णायक होता है।

(आ) आउट पेशेंट का अनुवाद 'बाहरी रोगी' है। इसी तर्ज पर इन पेशेंट का अनुवाद 'अंदरूनी रोगी' हो सकता था लेकिन उसे अनुचित मानकर कोशकार ने 'अन्तरंग रोगी' शब्द दिया है। यद्यपि यह मामूली पाठकों को खटक सकता है तो भी विचार करने पर उचित ही लगता है।

(इ) सिविल वर्क्स :– इस शब्द का कोशगत अर्थ बड़ा ही व्यापक है। विस्तृत व्याख्या से ही अर्थ स्पष्ट होगा। किन्तु लोकनिर्माण विभाग के इस अर्ध-तकनीकी शब्द का प्रयोग 'मकान के निर्माण' के अर्थ में होता है। वह भी ऐसा मकान जिसमें बिजली, पानी आदि की व्यवस्था करना शेष रहा है।

(ई) फैकल्टी:– इसका सामान्य अनुवाद 'संकाय' किया जाता है। परन्तु यहां अध्यापकों शोधाधिकारियों, वैज्ञानिकों एवं डाक्टरों के सम्मिलित परिवार को सूचित करने के लिए

फैकल्टी शब्द प्रयुक्त होता है । अत: 'संकाय' शब्द का प्रयोग तो हो सकता है किन्तु पहले उसका लक्ष्यार्थ समझ लिया जाना चाहिए । इसी प्रकार के कई उदाहरण दिए जा सकते हैं ।

तकनीकी अनुवाद के विपक्ष में यह तर्क उठ सकता है कि ऐसी अनूदित भाषा की वाक्यावली में वह सुघड़ता या लालित्य नहीं हो सकता जो मूल भाषा के वाक्यों में है । ऐसी भाषा एक तरह की खिचड़ी भाषा ही महसूस हो सकती है । मगर यह उल्लेखनीय है कि तकनीकी भाषा का स्वरूप कुछ विलक्षण अवश्य होता है । अदालत के न्यायाधीश का निर्णय अवश्य महत्वपूर्ण होता है तथापि निर्णय की भाषा में विलक्षणता दिखाई देती है । यह भी उल्लेखनीय है कि हिन्दी अभी तकनीकी एवं वैज्ञानिक विषयों के माध्यम के रूप में प्रौढ़ता प्राप्त कर रही है । अभ्यास और प्रयोग के जरिये ही भाषा सुन्दर व सुघड़ हो सकेगी । प्रत्येक भाषा का इतिहास यही शिक्षा देता है । यदि हम प्रयत्न करते रहें तो हिन्दी भारत के वैज्ञानिक एवं तकनीकी विचार विनियम के माध्यम के रूप में निःसंदेह सशक्त भाषा सिद्ध होगी ।

(8) श्री राज कृष्ण बंसल
निदेशक, उद्योग मंत्रालय

यूं तो किसी भी बहुभाषी देश के नागरिकों के लिए एक से अधिक भाषाओं की पर्याप्त जानकारी आवश्यक है, परन्तु भारतवर्ष में द्विभाषिकता की बात मुख्य रूप से सरकारी कामकाज के प्रसंग में उठाई जाती है। इस प्रसंग में वस्तु-स्थिति को ठीक तरह समझ लेना जरूरी है।

द्विभाषिकता के दो पहलू हैं—एक अनिवार्यता का और दूसरा स्वेच्छा अथवा छूट का। क्योंकि संविधान में हिन्दी को संघ की राजभाषा घोषित किया गया है, कुछेक श्रेणियों को छोड़कर, केन्द्र सरकार के सभी कर्मचारियों के लिए यह आवश्यक है कि उन्हें हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त हो। इसी प्रकार राजभाषा अधिनियम, 1963 के अनुसार यह आवश्यक है कि सामान्य आदेश, नियम, अधिसूचनाएं, संकल्प, प्रेस विज्ञप्तियां, सरकारी रिपोर्टें, आदि निर्धारित कागजात हिन्दी और अंग्रेजी में साथ-साथ जारी किए जाएं। अनिवार्य रूप से द्विभाषिकता की बात यहीं समाप्त हो जाती है।

दूसरी ओर, केन्द्र सरकार के अधीन विभिन्न सेवाओं के प्रत्याशियों को कमोवेश यह छूट है कि भर्ती परीक्षा या उसके कुछ प्रश्नपत्रों के माध्यम के रूप में वे हिन्दी अथवा अंग्रेजी कोई भी भाषा अपना सकते हैं। सेवा में आने के बाद भी सभी कर्मचारियों को इस बात की स्वतंत्रता है कि फाइलों में टिप्पणियां, मसौदे, आदि लिखने के लिए वे हिन्दी अथवा अंग्रेजी किसी भी भाषा का प्रयोग कर सकते हैं; ऐसा नहीं है कि सभी सरकारी कार्यकलापों के लिए दोनों भाषाओं का प्रयोग अनिवार्य है।

संविधान में हिन्दी को संघ की राजभाषा अपनाते समय यह परिकल्पना की गई थी कि संविधान लागू होने से 15 वर्ष बाद अंग्रेजी का प्रयोग समाप्त हो जाएगा और तब संघ के सभी सरकारी प्रयोजनों के लिए प्रभावी ढंग से हिन्दी का प्रयोग किया जा सकेगा। दुर्भाग्यवश हम अभी भी इस लक्ष्य से काफी दूर हैं। द्विभाषिकता के संबंध में अब तक किए गए विभिन्न उपबंध, प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से अंग्रेजी के ही पक्ष में बैठते प्रतीत होते हैं, और, उस हद तक, संविधान के उपबंधों को सीमित करते दिखाई देते हैं।

यह कहना कि कुछेक प्रयोजनों के लिए अनिवार्य रूप से हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं का प्रयोग समय और साधनों का अपव्यय है, यह कहने के समान है कि भारत जैसे विशाल और गरीब देश में प्रजातांत्रिक प्रणाली का अपनाया जाना राजनैतिक ऐयाशी है । शुरुआत के तौर पर, निश्चित ही इस व्यवस्था का कोई विकल्प संभव नहीं था। दूसरी ओर, यह धारणा भी भ्रमपूर्ण है कि द्विभाषिकता की स्थिति हिन्दी की प्रयोग वृद्धि में बाधक है। द्विभाषिकता से संबंधित वर्तमान उपबंध इतने सीमित हैं कि यदि सही संकल्प और प्रयास हों तो लगभग 75 प्रतिशत सरकारी काम केवल हिन्दी में किया जा सकता है।

अनिवार्यतया द्विभाषिक रूप में किए जाने वाले कामों के लिए समय और साधनों का अतिरिक्त व्यय इतना नगण्य है कि वह चिन्ता का कारण नहीं माना जा सकता । एकमात्र उपाय यही है कि दिन प्रतिदिन के कामकाज में हिन्दी का अधिक से अधिक प्रयोग किया जाए ताकि कालान्तर में केवल हिन्दी से काम चलाया जा सके। इस प्रकार स्थिति को सही परिप्रेक्ष्य में समझ लेने पर यह स्पष्ट हो जाता है कि द्विभाषिकता से संबंधित पूरी की पूरी बहस निरर्थक है और शायद हमें अपने लक्ष्य से भटकाने के लिए ही जारी रखी जा रही है। ज्यादा चिन्ता की बात यह है कि राजभाषा का विषय राजनीति का विषय न बनने पाए।

कनाडा, स्विट्जरलैण्ड, बेल्जियम, आदि देशों में द्विभाषिकता या बहुभाषिकता कहीं अधिक व्यापक रूप में विद्यमान है। हमारे यहां मुख्य अन्तर और मौजूदा स्थिति यह है कि, कुछ अपवादों को छोड़कर, सभी सरकारी काम —चाहे वे सामान्य आदेश से संबंधित हों या नियमों से, सरकारी रिपोर्टों से संबंधित हों या संसद में रखे जाने वाले कागज पत्रों से, विधियों से संबंधित हों या विधेयकों से—मूल रूप से अंग्रेजी में किए जाते हैं और अनिवार्यता की मांग पूरी करने के लिए हिन्दी में **उनका** अनुवाद कर दिया जाता है । स्थिति कभी कभी इतनी हास्यास्पद हो जाती है **कि हिन्दी में** प्राप्त पत्रों का अंग्रेजी अनुवाद करके अंग्रेजी में ही उत्तर का मसौदा तैयार किया जाता है । फिर, उत्तर

भेजते समय, पुनः हिन्दी में अनुवाद होता है। इसी प्रकार, हिन्दी भाषणों या हिन्दी में संचालित बैठकों, आदि की प्रेस विज्ञप्तियां अंग्रेजी में तैयार की जाती हैं और बाद में उनका हिन्दी अनुवाद होता है।

यहीं से अनुवाद की समस्या का प्रादुर्भाव होता है। इस विषय पर विचार करते समय पूरी पृष्ठ भूमि को ध्यान में रखना जरूरी है। हमारी कठिनाई हिन्दी के प्रयोग की उतनी नहीं है जितनी स्वाभाविक और सुबोध हिन्दी के प्रयोग और उसके ठीक दिशा में विकास की। इस दृष्टि से अनुवाद की समस्या द्विभाषिकता की समस्या से कहीं ज्यादा गंभीर है।

अनुवाद की मूल संकल्पना में कोई बुराई नहीं है। सच तो यह है कि अनुवाद का सहारा लिए बिना न तो संसार भर के ज्ञान विज्ञान का व्यापक प्रसार-प्रचार संभव है और न विभिन्न भाषाओं में उद्भूत श्रेष्ठ साहित्य का अनुशीलन ही। किसी के लिए भी सभी भाषाओं का ज्ञान संभव नहीं है। किन्तु यह भी उतना ही सच है कि अनुवाद किसी भाषा के सृजन और विकास का आधार नहीं बन सकता।

सरकारी तंत्र में उपलब्ध पूरी व्यवस्था में इस समय सर्वाधिक बल इस बात पर दिया जाता है कि जिन प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी के साथ-साथ हिन्दी का प्रयोग अनिवार्य है। वहां अनुवाद की व्यवस्था कर दी जाए। इससे हिन्दी पदों के सृजन और विभिन्न मंत्रालयों, कार्यालयों, आदि में हिन्दी एककों की स्थापना में मदद अवश्य मिली है। किन्तु राजकाज, प्रशासन और दूसरे नए क्षेत्रों, में हिन्दी के प्रवेश और प्रयोग-वृद्धि में सफलता मिल सकेगी यह बहुत संदिग्ध है।

अनुवाद की अपनी सीमाएं हैं। अनुवाद कितना भी अच्छा क्यों न हो उसके लिए मौलिक भाषा का स्थान ले पाना कठिन है। प्रत्येक भाषा की अपनी अलग सामाजिक, सांस्कृतिक और ऐतिहासिक पृष्ठभूमि होती है, उसके अलग संस्कार होते हैं और अलग मानसिकता होती है। इन तत्त्वों से गृहीत अर्थों और भावभूमियों का अनुवाद विद्वानों के लिए भी चुनौती होता है। सरकारी भाषा स्वयं में संश्लिष्ट होती है, उसका अनुवाद इस दोष को और उजागर कर देता है। परिणाम यह होता है कि अनुवाद के माध्यम से जन्मी भाषा अधिकतर अस्वाभाविक, बोझिल और अस्पष्ट रहती है। इससे भिन्न परिणाम की अपेक्षा भी नहीं की जा सकती क्योंकि अनुवादकों को प्राप्त प्रतिष्ठा और उनकी आर्थिक परिलब्धियां सीमित होने के कारण सही लोग इस क्षेत्र में नहीं आ पाते।

समस्या का हल क्या है ? इसका उत्तर इतना कठिन नहीं है जितना कि उस पर अमल होना। सबसे पहले हमें राजनैतिक दृष्टि से यह निर्णय लेना होगा कि हिन्दी को सही अर्थ में राजभाषा का स्थान दिलाया जाए। फिर, क्योंकि यह स्थान अनुवाद के माध्यम से प्राप्त नहीं हो सकता, इस दिशा में प्रभावी कदम उठाए जाएं कि टिप्पणियों, पत्रों और अन्य कार्य कलापों में मूल रूप से हिन्दी का प्रयोग किया जाए और, जहां आवश्यक हो, अंग्रेजी में अनुवाद कराया जाए। दूसरी आवश्यकता यह है कि हम पहले कदम को ही लक्ष्य न मान लें। वर्तमान व्यवस्थाएं केवल आरंभिक उपायों के रूप में हैं। लाजिमी है कि इन्हीं में न उलझे रहकर हम अपने लक्ष्य पर दृष्टि केन्द्रित करें और उसे प्राप्त करने के लिए निश्चित समयबद्ध कार्यक्रम बनाएं और उन्हें क्रियान्वित करें। सबसे महत्त्वपूर्ण बात मनोवृत्ति की है। दासता के संस्कार संजोए, हम जब तक, अंग्रेजी को अपरिहार्य समझते रहेंगे और विलायती सभ्यता ओढे रहेंगे तब तक हिन्दी उसका स्थान नहीं ले सकेगी। □ □ □

"यदि हम अंग्रेजी के आदि नहीं हो गये होते, तो यह समझने में हमें देर नहीं लगती कि अंग्रेजी के शिक्षा का माध्यम होने से हमारी बौद्धिक चेतना जीवन से कट कर दूर हो गयी है, हम अपनी जनता से अलग हो गये हैं, जाति के सर्वश्रेष्ठ दिमागों का विकास रुक गया है और जो विचार हमें अंग्रेजी के माध्यम से मिले, उन्हें हम जनता में फैलाने में नाकामयाब रहे हैं। पिछले साठ वर्षों से हमने विचित्र-विचित्र शब्दों को केवल रटना सीखा है, तथ्यपूर्ण ज्ञान पचाने के बदले हमने शब्दों का उच्चारण सीखा है। जो विरासत हमें अपने बाप-दादों से हासिल हुई, उसके आधार पर नव-निर्माण करने के बदले, हमने उस विरासत को भूलना सीखा है। इस दुर्गति की मिसाल सारी दुनिया के इतिहास में नहीं है। यह तो राष्ट्रीय शोक अथवा ट्रेजेडी का विषय है। आज की पहली और सबसे बड़ी समाज-सेवा यह है कि हम अपनी देशी भाषाओं की ओर मुड़ें और हिन्दी को राष्ट्रभाषा के पद पर प्रतिष्ठित करें। हमें अपनी सभी प्रादेशिक कार्रवाइयाँ अपनी-अपनी भाषाओं में चलानी चाहिए तथा हमारी राष्ट्रीय कार्रवाइयों की भाषा हिन्दी होनी चाहिए। जब तक हमारे स्कूल और कालेज विभिन्न देशी भाषाओं में शिक्षा देना आरम्भ नहीं करते, तब तक हमें आराम लेने का अधिकार नहीं है।"

—महात्मा गांधी, कलकत्ता 27 दिसम्बर, 1917

राजभाषा का आधुनिकीकरण

—डॉ० रमेश कुंतल मेघ
प्रोफेसर और अध्यक्ष गुरु नानक देव
विश्वविद्यालय अमृतसर ।

आधुनिक भाषाओं का उद्भव छोटी-छोटी बोलियों और उप-भाषाओं के आपसी विलय से होता है। पहले आदिम कबीलों तथा उप जातियों की बोलियां जातियों की उपभाषा में, फिर छोटे राष्ट्रों की भाषाओं के रूप में विकसित होती हैं। कालान्तर में छोटे अथवा किसी महत्त्वपूर्ण राष्ट्र की भाषा आधुनिक टकसाली 'राष्ट्रीय भाषा' अथवा 'राष्ट्रभाषा' के रूप में प्रतिष्ठापित हो जाती है। इटैली के एक छोटे से अंचल को बोली को महाकवि दान्ते ने, अथवा व्रजमंडल की व्रजभाषा को कृष्णभक्त कवियों ने व्यवहार करके उनकी अभिव्यंजनाशक्ति की अमित क्षमताएं विकसित कर डाली जिससे वे राष्ट्रभाषा अथवा सांस्कृतिक भाषा का गौरव पा सकीं। श्रेष्ठ सांस्कृतिक विरासत भी राष्ट्रभाषा का निर्माण करती है।

उन्नीसवीं शती के पहले तक उत्तर भारत की धर्म निरपेक्ष (सेक्युलर) संस्कृति की संरक्षिकाएं, व्रज, अवधी, पंजाबी, भोजपुरी आदि बोलियां थीं। उस समय भी खड़ी बोली (हिन्दी और उर्दू) "बोलचाल की एकमात्र भाषा" के रूप में उभरती रही। भौतिक जीवन की उन्नति तथा देश के प्राथमिक शहरीकरण के साथ-साथ खड़ी बोली का विकास तथा अन्य बोलियों का उसमें अंतर्लयन होता रहा। उन्नीसवीं शती के उत्तरार्ध में लोगों (लोक/जनता) की एक महान प्रजातांत्रिक तथा सांस्कृतिक परम्परा के रूप में हिन्दी की संस्थापना हुई। राष्ट्रीय स्वतंत्रता-आंदोलन तथा प्रजातांत्रिक जीवन-शैली के विकास के साथ-साथ हिन्दी और उसकी बोलियां (प्रादेशिक भाषाएं) भी जनता की वास्तविक बोलचाल की भाषाओं के रूप में सामने आई। केशवचन्द्र सेन, महर्षि दयानंद सरस्वती, महात्मा गांधी, रवीन्द्र नाथ ठाकुर जैसे राष्ट्रीय-सांस्कृतिक नेताओं ने हिन्दी को भारत की राष्ट्रभाषा के रूप में प्रसारित किया।

यहां ध्यान देने की बात यह है कि 'भाषा का समाज-शास्त्र' यह संलक्षित करता है कि जब तक सामंतशाही व्यवस्था का प्रभुत्व रहता है तब तक स्थानिक भाषाओं की विलक्षणताएं तथा बोलियों की कुछ विभिन्नताएं मौजूद रहती हैं अर्थात् इनमें शताब्दियों तक सामंतशाही आधार कायम रहता है। सामंतीय सिस्टम में भाषा एक ओर तो धर्म (मठ) से तथा दूसरी ओर आभिजात्य वर्ग (दरबार) से जुड़कर सामाजिक अन्तर्विरोधों को तीव्र करती है। अतएव उत्तर भारत में भी जब राष्ट्रीयता तथा भाषा के सवालों को उठाया गया तो सामंतीय आधारों ने भाषा की ढाल आगे करके राष्ट्रीयता तथा जनवाद पर लगातार हमला किया। यही नहीं; नौकरशाही की सुविधा तथा सुरक्षा की विचारधाराओं ने राष्ट्र के विभिन्न अंचलों की भाषाओं और राजभाषा हिन्दी के बीच शत्रुतापूर्ण संबंध होने की भ्रांति फैलाई। इसके विकल्प में अंग्रेजी को राज-भाषा (सह राजभाषा) बने रहने का समाधान जारी रखा गया। यह भी सही है कि हिन्दी के नाम पर 'हिन्दी वालों' अर्थात् निहित स्वार्थों के कई गुट लाखों रुपयों का दुरुपयोग कर रहे हैं। एक तीसरा संवैधानिक आयाम यह भी है कि 26 अप्रैल, 1974 को सर्वोच्च न्यायालय ने संविधान की धारा 29-30 के अनुसार धार्मिक, भाषाई तथा सांस्कृतिक अल्पसंख्यकों की अपनी शैक्षणिक संस्थाओं को अपनी 'रुचि' के अनुसार संचालित करने की अनुमति प्रदान की। इसके साथ ही 1976 के संशोधन के मुताबिक शिक्षा हमारे संविधान में समवर्ती सूची में आ गई। इस तरह सांस्कृतिक तथा आर्थिक एकीकरण के हमारे आधुनिक दौर में राष्ट्रीयता और भाषा के अंतर्विरोध जटिल होते जा रहे हैं। भारत का 'भाषिकीय एटलस' लगभग सत्तर प्रमुख भाषाओं और बोलियों से रचित है (सन् 1961 और 1971 की जन-संख्या के अनुसार)। इनमें से पैंतीस मातृभाषाएं तो उन राज्यों में दर्ज हैं जहां हिन्दी राष्ट्रभाषा-राज्यभाषा भी है; अर्थात् हिन्दी की छोटी-छोटी बोलियां-उपबोलियां भी दर्ज हुई हैं। 8.4 करोड़ अर्थात् लगभग 15% लोग ऐसी भाषाएं बोलते हैं जो संविधान की पन्द्रह-सोलह भाषाओं के अन्तर्गत नहीं आते। ये आदिम कबीलों और जनजातियों की अलि-खित एवं असाहित्यपूर्ण बोलियां हैं।

क्या भाषा तथा राष्ट्र के इस प्रतीयमान अंतर्विरोध का कोई समाधान मुमकिन है?

यह सवाल दूसरे ढंग से भी पूछा जा सकता है। राष्ट्रीयताओं (नेशनलिटीज़) और भाषाओं (लैंग्वेजेस) की एकता किस प्रकार हो? पहला उत्तर है: इनमें एकता

तभी होगी जब राष्ट्र को विभिन्न राष्ट्रीयताओं की भाषाओं (राज्यभाषाओं) की अस्मिता (आइडेंटिटी) सुरक्षित रहेगी। राष्ट्रीयताओं की एकता तभी स्थापित होगी जब राष्ट्र के विभिन्न वर्गों के बीच सामाजिक-आर्थिक समानता अर्थात् समाजवाद की स्थापना होगी। राजभाषाओं की एकता तभी मजबूत आधार पर कायम होगी जब उनके शब्द भंडारों में समानता तथा राज्यों के प्रशासनों में राज-भाषा के माध्यम से संचार-संप्रेषण होगा। हमें इतिहास का यह सबक बारंबार दोहराना चाहिए कि भारतीय जनता विभिन्न धर्मों, जातियों तथा नस्लों वाली है। उसके विभिन्न क्षेत्रों (राज्यों, जिलों) में असमान आर्थिक विकास हुआ है तथा वह एक बहुभाषिक, बहुधार्मिक, बहुराजनैतिक जनता है जिसके बीच एकता और संघर्ष, दोनों ही निरंतर छिड़े रहते हैं। इस आधुनिक दौर में, जबकि अभी भी अर्द्ध-उपनिवेशी अवशेष तथा अर्द्ध सामंतीय व्यवस्थाएं कायम हैं, उसकी कुछ विविधताएं तथा विभेद (धर्म और भाषा) अपेक्षाकृत ज्यादा स्थायी हैं। इन्हें हम अब नजरअंदाज नहीं कर सकते।

इसलिए हमारा ऐतिहासिक प्रारब्ध है कि हम संघ की राजभाषा हिन्दी को आधुनिक तथा वैज्ञानिक भाषा भी बनाएं ताकि वह एक ओर अंग्रेजी को जगह ले सके तो दूसरी ओर अन्य राज्यभाषाओं की सहायिका एवं समर्थिका बने; तीसरी ओर धर्म एवं भाषा के मध्यकालीन गठबंधन को तोड़ सके; चौथी ओर विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी का माध्यम बने; पांचवी ओर बड़े औद्योगिक घरानें के दफतरों तथा अंतर्राष्ट्रीय व्यापार में व्यवहृत हो और छठी ओर प्रशासन के सभी हलकों में लागू होकर प्रबंध की कार्यकुशलता को सिद्ध करे।

विश्व में अंतर्राष्ट्रीय मंच पर भी अंग्रेजी का वर्चस्व है। अतः कुछ परंपरागत राष्ट्रों की भाषाओं की लिपियों का रोमनीकरण/लातीनीकरण हो गया है। 'बहासा इन्दोनीसिया' और चीन की चित्रलिपि, वियतनाम तथा थाईलैंड की भाषा लिपियों का रोमनीकरण आदि ऐसी ही मिसालें हैं जिन्हें 'भाषा-योजना' (लैंग्वेज-प्लानिंग) के अंतर्गत भाषा के 'आधुनिकीकरण का कार्यक्रम' (प्रोग्राम) कह सकते हैं। इसी क्रम में कई अलिखित भाषाओं की लिपियों का निर्माण भी शामिल है। भारत के अरुणाचल में कई कबीलों में रोमनी लिपि वाली भाषा गढ़ी गई। सोवियत संघ में गिरगीज, ताजिक और तुर्कमानी भाषाओं को रूसी (स्लाव) लिपि प्रदान की गई। भाषा के आधुनिकीकरण का तीसरा आयाम लिखित परंपराओं का प्रजातांत्रिकीकरण है अर्थात् उसे आभि-जात्य के कूपजल से निकालकर जनता के व्यवहार की प्रवहमान नदी में तैराना है। चौथा आयाम है, भाषा के सामाजिक धर्मों तथा तकनीकी व्यवहारों में विविधता। भाषा-आयोजना के अन्तर्गत एक ही भाषा (हिन्दी) के कई प्रभेद हो जाएंगें : प्रशासन में व्यवहृत होने वाली विशेषज्ञों की वैज्ञानिक हिन्दी; समाज के विभिन्न कार्यों को निभाने वाली व्यावहारिक हिन्दी, तथा साहित्य-कला में सौंदर्य भावनाओं की अभिव्यंजना करने वाली कलात्मक (रचनात्मक) हिन्दी; इत्यादि। इन सभी में संप्रेषण के स्तर और विषय-वस्तु की भिन्नता के साथ-साथ ग्रहीता के स्तर, आवश्य-कताओं, रुचियों और बुद्धि की भूमिकाएं होंगी। अभी तक हम हिन्दी में लेखन और सम्प्रेषण के सवाल को केवल साहित्यिक भाषा की सरलता, सहजता, सुबोधता और भावुकता के गुणों में लपेटते आ रहे हैं। इससे प्राचीन हिन्दी की परंपरा से मंडित खड़ी बोली का आधुनिकीकरण मुश्किल और असंभव होता जाएगा। 'कविताओं-कहानी' वाली हिन्दी भाषा ही सभी प्रकार के लोगों के सभी प्रकार के सामाजिक उपयोगों के लिए निर्धारित नहीं की जा सकती। हमें भाषा के समाजशास्त्र के इस सूत्र को भी रेखांकित करना होगा कि भाषा के विकास का दौर उसके वक्ताओं के प्रारब्ध से जुड़ा होता है।

प्रशासन, व्यापार, शिक्षा, विज्ञान और कला इन पांच संक्षेत्रों में एक ही भाषा अपने विभिन्न रूपों और गुणों का विकास करती है।

भाषा-विकास में व्याकरण की अपेक्षा शब्द भंडार (लेक्सिकान) की धुरी ज्यादा काल-प्रवर्तित होती है। जितने विविध और जितने बहुविध क्षेत्रों, जैसे राजनीति, विज्ञान, टैक्नालाजी, संस्कृति, अर्थशास्त्र, वाणिज्य आदि में भाषा व्यवहृत होगी और जितनी ज्यादा भौगोलिक सीमाओं से उसका संपर्क होगा उसकी संवृद्धि भी उतनी ही विविध और व्यापक होगी। इसके लिए एक ओर एक ही देश के विभिन्न राज्यों की भाषाओं के शब्दों एवं पारिभाषिकों का ग्रहण होता है, दूसरी ओर विभिन्न देशों के शब्दों अर्थात् अंतर्राष्ट्रीय पारिभाषिकों को उधार लिया जाता है; तथा तीसरी ओर विदेशी शब्दों का भारतीयकरण अथवा हिन्दीकरण (फन्तासी, मिथक आदि) करके उनको अंगीकार किया जाता है। इन तीनों अधिग्रहणों से एक अंतर्भाषा (इंटर-लैंग्वेज) या संपर्क भाषा (लिंक लैंग्वेज) विकसित होती है। ऐसी भाषा अंततोगत्वा आधुनिक होती है।

अतः बहुभाषी भारत में विभिन्न राज्यों (प्रांतों या प्रदेशों) के साहित्य तथा ज्ञान को सभी राज्यों के लोगों तक पहुंचाने के लिए बहुभाषिकता (मल्टी-लिंगुअलिज्म) ही संभव और सफल होनी है। भाषा-योजना की नीतियों में हम अलग-अलग राज्य की राज्यभाषा तथा देश के एक संपर्क राजभाषा (हिन्दी), इन दोनों को किसी एक राज्य के लिए दो भाषाएं मानते हैं। जैसे; पंजाब के लिए पंजाबी-हिन्दी; केरल के लिए मलयालम-हिन्दी; बिहार के लिए हिन्दी-कोई राज्यभाषा; तथा भारत (संघ) के लिए राजभाषा हिन्दी-अन्य राज्यभाषाएं। ऐसी आयोजना द्वारा ही अंतर्राज्यीय, अंतर्राष्ट्रीय तथा विदेशी भंडारों से प्राप्त

समान शब्द-संभार राजभाषा हिन्दी में सचित होगा और प्रकारान्तर से अन्य भाषाओं में वितरित होता रहेगा। इस प्रकार भारत और हिन्दी भाषा, दोनों के आधुनिकीकरण की इस मद में लागत (सभी भाषाओं के औसत से) 1/16 हो जाएगी।

इस विधि से राष्ट्रों की भाषाओं की समस्या को भी सुलझाया जा सकता है और आर्थिक विकास तथा सांस्कृतिक जागरण की गुण-मात्रा सभी में बराबर अनुपात से बांटी जा सकती है। अच्छा तो यह होता कि आधुनिकीकरण और समाजीकरण की नयी प्रक्रियाओं के दौर में हम पारिभाषिक शब्दों के सवाल को सुलझाने के साथ-साथ ही वर्णमाला की एकता को भी क्रियान्वित कर सकते। तथापि बिना समाजवादी व्यवस्था से लिपि के एकीकरण का प्रश्न विभिन्न भाषाओं एवं राष्ट्रीयताओं को हिन्दी के प्रति एक शत्रुतापूर्ण अंतर्विरोध में ज्यादा फंसा देगा। लिपि के एकीकरण के साथ-साथ ही टाइप (टंकण) के कुंजी पटल की समस्याएं बाद में ही सुलझाई जा सकती हैं। अतएव आजकल हमारा ज्वलंत प्रश्न है कि आंतर भारतीयता (या राष्ट्रीय एकता)—भारतीय राज्यों की बहुभाषी-बहुधर्मी जनता में—किस भाषा के द्वारा प्रतिष्ठित हो? अंग्रेजी से (जैसाकि आज है) अथवा हिन्दी से (जैसा कि कल होगा)?

फिलहाल इतना तो सैद्धांतिक तथा अनुकार्य रूप में माना ही जाना चाहिए कि भाषा के आधुनिकीकरण के लिए वर्णमाला का वैज्ञानिकीकरण एवं सरलीकरण एक अनिवार्य शर्त है। अपने बहुभाषी देश में विभिन्न राष्ट्रीयताओं की भाषाओं की लिपियों के देवनागरीकरण की अन्वीक्षा निस्संदेह श्रेयस्कर होगी : यदि सद्भावना का वातावरण हो।

सरकार (राज्य) तथा प्रशासन राष्ट्र के विभिन्न लोगों, वर्गों तथा समूहों को एकजुट करता है। यह कार्य प्रशासन का है। प्रशासन का धर्म सुदक्षता (एफिशियेंसी) है। किन्तु, सुदक्षता किस की? केवल शासकों की, आला अफसरों की? अथवा भारतीय जनता की? जाहिर है कि प्रजातंत्र, समाजवाद तथा धर्मनिरपेक्षता के घोषित लक्ष्यों वाले भारत देश में यह सुदक्षता जनताधुरी पर केंद्रित होगी। नौकरशाही-धुरी की अंग्रेजी से असली सुदक्षता नहीं आ सकती। इससे प्रशासन खर्चीला होता है तथा शासकों और शासितों के बीच अलगाव बढ़ता है जबकि आज भाषाविकास का दौर भारतीय जनता के प्रारब्ध से जुड़ा है, हम अंग्रेजी और पूंजीवाद के द्वारा भारत को एक आधुनिक राष्ट्र कदापि नहीं बना सकते। अंग्रेजी-हिन्दी के परस्पर अनुवादविनिमय के सहारे भी कार्यदक्षता नहीं बढ़ेगी। इसके लिए तो शुरू से, अथवा किसी भारतीय भाषा के माध्यम से, सीखते वक्त मूलरूप से हिन्दी लिखना चाहिए।

सामान्य प्रशासन की भाषा दांव-पेंच दार होती है। तथापि सौ से लेकर दो सौ वाक्यांशों के व्यवहार द्वारा सत्तर प्रतिशत लिपिकों का काम सुदक्षता के साथ निष्पन्न हो सकता है। सभी विभागों तथा विषयों में बनाई गई या बनाई जा रही नियम पुस्तकें (मैनुअलें) तथा पारिभाषिक शब्दावलियां दैनिक व्यवहारों में बरती जानी चाहिएं। यह कार्य ऊंचे अफसरों के बजाय मूल आधार पर प्रतिष्ठित भारिकों, मेकैनिकों, श्रमिकों, पोर्टरों आदि के द्वारा ही संपन्न होगा। भाषा का समाजशास्त्र ऐसी ही ऐतिहासिक निश्चयता का प्रदर्शन करता आया है। प्रशासन के उच्चतर स्तरों पर तो संविधान की सम्बद्ध धाराओं के कानूनी परिपालन में कोई ढील नहीं होनी चाहिए।

हम इसे कैसे भूल सकते हैं कि भारत के आधुनिकीकरण का मतलब भारतीय जनता की समाजार्थिक (सोशियो-इकॉनामिक) प्रगति है। भारतीय जनता के आधुनिकीकरण का तात्पर्य संपर्क भाषा एवं राजभाषा हिन्दी—तथा हिन्दी के सहभाव से अन्य राज्यभाषाओं—का आधुनिकीकरण हैं।

□□□

"अतीत के झरोखे से" के पट्टे का लिप्यन्तरण

सीधी श्री महाराजाधीराज श्रीरामसिंह जी देव वचनात् कमौती परगना दौसाकादी से परसाद बेच्या अपरंच दसतुर व्याह वगैरह के परोहत हरचौन व लाल जी वगैरह पोता बलीभद्रपण्डित कानून क़दीम मुतावक् परवानों महाराजाधीराज महाराजा श्री जी तारीख जमाहील सानी सन् 1025 को परगना दौसा में पावौछौ अब तारीख 2 रबीउल सानी सन् 1079 अरजी पौहंचो मुकाम मोहर दस्तूर माफिक बहाल कीया सरौह यादीदासती वाका तारीख 17 रबीउल सानी सन् 1079 मुकाम मुंगेर वरीसा राजाराम व कासीराम दास दीवान बनीवती फरमान की सही रहै राम दसतूर व्याह परोहत हरचौन लाल जी वगैरह पोता बलीभद्र परोहत कानून क़दीम मवाफ़क़ परवाना महाराजाधीराज महाराजा श्री तारीख 13 जमाहील सानी सन् 1025 को परगना दौसा में पावता अब तारीख़ 2 रबीउल सन् 1079 मुकाम मोहर दसतूर क़दीम बहाल पाया- तारीख़ 17 रबीउलसानी सन् 1079 अरज मुकर्रर पौहुंची मुकाम दस्तूर व्याह वगैरह परगना दौसा में।

त्रिभाषा सूत्र के कार्यान्वयन में नागरी की भूमिका

—डा० पांडुरंगराव
निदेशक, संघ लोक सेवा आयोग

जब कभी भारत की भाषा समस्या के संबंध में चर्चा होती है तो किसी न किसी रूप में त्रिभाषा सूत्र की बात आ जाती है। पिछले लगभग 25 सालों से इस पर विचार-विनिमय होता रहा है। खंडन-मंडन भी चलता रहा है और साथ-साथ ईमानदारी से इसको अमल में लाने का सक्रिय प्रयास भी होता रहा है। लेकिन पिछले 20–25 साल का अनुभव हमें बताता है कि यह भाषा-सूत्र सिद्धान्ततः सामंजस्यवादी होते हुए भी व्यवहार में उतना सफल नहीं हो पाया, जितना अपेक्षित था।

वास्तव में इस सूत्र का आधार जितना तार्किक और राजनैतिक है, उतना मनोवैज्ञानिक और भावात्मक नहीं है। हिन्दी को अखिल भारतीय भाषा का रूप देने की राष्ट्रीय आवश्यकता ने इस सूत्र को जन्म दिया। हिन्दी के राष्ट्रीय महत्व पर किसी को कोई संदेह नहीं है। लेकिन वह सब की मातृ भाषा नहीं है। देश के अधिकांश व्यक्तियों को उसे नई भाषा के रूप में सीखना पड़ता है। स्वतंत्रता से पहले लोग राष्ट्रीय भावना से प्रेरित होकर हिन्दी पढ़ते थे और उस समय दक्षिण भारत में हिन्दी का काफी प्रचार और प्रसार हुआ। किसी ने यह नहीं सोचा कि यह भाषा सीखने से हमें क्या लाभ मिलने वाला है। उस समय लोगों के मन में दो ही भाषाओं के प्रति सहज निष्ठा थी—अपनी मातृभाषा और समूचे देश की अपनी एक राष्ट्र भाषा। लेकिन स्वतंत्रता के बाद जब संविधान में हिन्दी को राजभाषा का पद मिला तो लोगों का ध्यान, विशेषकर अहिंदी भाषियों का—राष्ट्र से हटकर राज पर केन्द्रित हुआ। पद ने हृदय का स्थान लिया और अर्थ ने परमार्थ का। हिन्दीभाषी मन ही मन प्रसन्न होकर सोचने लगे कि अब हमारी भाषा राजभाषा बन गई है और अब हम निश्चित हैं। हो सकता है मनुष्य के स्वार्थ ने यहां तक सोचा होगा कि बस राज हमारा है। इससे अहिन्दी भाषियों के मन में भी एक चोर घुस गया है। वे सोचने लगे कि अगर हिंदी भाषी अपने ही घर की, अपनी मातृभाषा के सहारे राज काज संभाल सकते हैं और ऊंचे-ऊंचे पदों का लाभ उठा सकते हैं तो हम लोगों को अपनी मातृभाषा को छोड़कर दूसरी भाषा, चाहे वह भारत की ही क्यों न हो, सीखने की क्या आवश्यकता है। यह चिंतन धीरे-धीरे तुलना की ओर बढ़ने लगा और हिन्दी की सर्वश्रेष्ठता पर लोग शंका प्रकट करने लगे। राष्ट्र भाषा के समर्थक बार-बार यह समझाते रहे कि हिन्दी को देश की सम्पर्क भाषा के रूप में इसलिए नहीं स्वीकार किया गया है कि यह सबसे समृद्ध या सम्पन्न भाषा है, बल्कि यह सबसे अधिक लोगों की बोलचाल की भाषा है और जो उसे नहीं जानते हैं वे उसे आसानी से सीख सकते हैं। इस प्रकार अहिन्दी प्रांतों में हिन्दी सिखाने का कार्यक्रम सरकारी और गैर-सरकारी तौर पर नये सिरे से फिर शुरू हो गया। लेकिन अहिंदी भाषियों के मन में यह असंतोष बराबर बना रहा कि उनको एक विदेशी भाषा और दो भारतीय भाषाएं सीखनी पड़ रही हैं जबकि हिंदी भाषी अपनी मातृभाषा और अंग्रेजी से आराम से काम चला सकते हैं।

1950 के बाद असंतोष का यह स्वर अधिक मुखर होने लगा और इसी को दबाने के लिए (या इसके समाधान के रूप में) त्रिभाषा-सूत्र का आविर्भाव हुआ। इसके अनुसार हिंदी भाषियों को हिंदी और अंग्रेजी के अलावा एक अन्य भाषा सीखना अनिवार्य हो गया। विचार यह था कि जैसे दक्षिण भारत के लोग अपने लिए नई भाषा हिन्दी सीखने का प्रयास करते हैं, वैसे ही हिंदी भाषी सुदूर दक्षिण की भाषा सीखने की कोशिश करेंगे या कम से कम मराठी, बंगाली जैसी पड़ौसी भाषा सीखेंगे। लेकिन व्यवहार में ऐसा नहीं हो पाया। हुआ यह था कि इस सूत्र की अपेक्षाओं को पूरा करने के लिए हिन्दी भाषियों ने बहुत आसान तरीका निकाला। तीसरी भाषा के रूप में संस्कृत प्रकट हो गई। संस्कृत का पठन-पाठन हिन्दी माध्यम से ही हुआ। इसलिए विशेष प्रयास के बिना त्रिभाषा सूत्र की अपेक्षाओं का औपचारिक पालन हिंदी भाषी प्रांत में संभव हो सका है। कहीं-कहीं संस्कृत के स्थान पर उर्दू का भी प्रचलन हुआ। लेकिन उर्दू और संस्कृत हिंदी भाषी के लिए समान रूप से सरल हैं। इसके विपरीत अहिंदी भाषियों को अपनी भाषा के एकदम भिन्न अंग्रेजी के अलावा अपनी भाषा से मिलती-जुलती पर कई दृष्टियों से भिन्न हिंदी को भी काफी प्रयास के साथ सीखना पड़ा। उत्तर और दक्षिण को भाषा, साहित्य और संस्कृति के माध्यम से जोड़ने का जो उद्देश्य त्रिभाषा-सूत्र के पीछे था, वह एक प्रकार के झुठलाया गया है। इस प्रकार त्रिभाषा सूत्र का वास्तविक प्रयोजन सिद्ध नहीं हो सका।

यह क्यों नहीं हो सका, इस पर स्वस्थ और शांत मन से विचार करना चाहिए। यह कहना शायद उचित नहीं होगा कि हिंदी-भाषी दक्षिण की भाषाओं को सीखना नहीं चाहते थे। यद्यपि समस्या इच्छा की नहीं थी, पर साधन और प्रयोजन की अवश्यकता थी। चाहते हुए भी कैसे सीखें, और सीखकर क्या करें—ये दो सवाल हिंदी भाषी के सामने थे। इन दोनों बातों पर किसी ने सही दिशा में विचार नहीं किया। चंडीगढ़ का छात्र मलयालम सीखना चाहता है तो उसको सिखाने वाला कौन है? और वह सीखकर उस भाषा का प्रयोग कहां पर करेगा? ये दोनों प्रश्न इतने प्रत्यक्ष और प्रबल हैं कि इनका सही समाधान प्रस्तुत करना देश

के शिक्षा शास्त्रियों और साहित्य के निर्माताओं का काम था। इनकी ओर हम ध्यान नहीं दे सके। इसीलिए यह सूत्र अमल में नहीं आ सका।

जब नागरी लिपि की बात आई तो हमको इस सूत्र की असफलता की बात भी याद आ गई। शायद हम इस असफलता का लाभ उठाकर नागरी लिपि को आगे बढ़ाने की कोशिश करना चाहते हैं। मैं नहीं कहता कि यह गलत है। बल्कि मैं नागरी लिपि परिषद् को इस बात पर बधाई देना चाहता हूं कि उनको इस सूत्र की सफलता के लिए एक ऐसा क्षेत्र मिला है जहां देवनागरी राष्ट्र की आवश्यकता की पूर्ति कर सकती है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि हिंदी भाषियों को नागरी के माध्यम से अन्य भाषाएं सीखने में सुविधा होगी। लेकिन केवल लिपि के कारण यह काम अब तक रुका पड़ा है, यह समझना भी शायद ठीक नहीं है। जहां तक मैं समझता हूं, दूसरी भाषाएं सीखने की दिशा में हिंदी भाषियों की प्रगति में सबसे बड़ा अवरोध प्रयोजनहीनता है। यह तो मानना पड़ेगा कि बिना किसी प्रयोजन के कोई भी भाषा नहीं सीखी जा सकती है और सीखने के बाद यदि उसका प्रयोग नहीं हुआ तो सारी शिक्षा बेकार जाती है। इसलिए यह उचित होगा कि हम काम चलाऊ भाषा को अधिक महत्व न दें, बल्कि उस भाषा के पीछे जो साहित्यिक और सांस्कृतिक संपत्ति है, उसको समझने और हृदयंगम करने और अपने ही राष्ट्र की संपत्ति के रूप में उसे स्वीकार करने का प्रयास करें। मतलब यह है कि यदि हम भाषा के व्यावहारिक पक्ष के बजाय उसके सांस्कृतिक और साहित्यिक पहलू पर ध्यान दें तो लोगों में आस-पास के सांस्कृतिक जीवन के प्रति रुचि पैदा होगी और यह रुचि धीरे-धीरे उनको भाषा और साहित्य तक ले जायेगी।

आजकल अपने पड़ौसी भाषाओं के साहित्य और सांस्कृतिक आधार के संबंध में छात्र-समाज में ही नहीं, बल्कि विद्वत् समाज में भी बहुत कम जानकारी है। सूरदास, तुलसीदास, मीरा आदि के बारे में दक्षिण में जितनी जानकारी है उतनी शायद वल्लतोल, कंबन, त्यागराज, पुरन्दर दास आदि के बारे में उत्तर में नहीं है। यहां तक कि नागरी में ही लिखी जाने वाली मराठी भाषा के साहित्यिक मनीषियों का बहुत कम परिचय उत्तर भारत में पाया जाता है। वास्तव में एक दूसरे की साहित्यिक संपत्ति और सांस्कृतिक विशेषताओं को हृदयंगम करने से ही भावात्मक एकता मजबूत हो सकती है। इसके लिये भाषा से प्रारंभ कर साहित्यिक गरिमा और सांस्कृतिक वैभव तक पहुंचने में काफी समय लगेगा और साधना की इस लंबी यात्रा में कहीं बीच में भटकने या खो जाने का खतरा भी हो सकता है। इसके विपरीत, अपनी ही भाषा और लिपि के माध्यम से दूसरी भाषाओं के साहित्य और संस्कृति को समझने का प्रयास अधिक सरल और सुगम होता है और इसे जल्दी कामयाबी भी हासिल हो सकती है।

आजकल सामान्य ज्ञान या सामान्य अध्ययन नामक विषय को शैक्षिक पाठ्यक्रम में बहुत महत्व दिया जा रहा है। इतिहास, भूगोल, राजनीति, सामान्य विज्ञान आदि के साथ-साथ भाषा और साहित्य संबंधी जानकारी भी इसमें दी जाती है। इस दिशा में छात्रों की अनभिज्ञता बहुत ही दयनीय मालूम होती है। आजकल का पढ़ा लिखा ग्रेजुएट कम से कम यह भी नहीं जानता कि हमारे देश में कहां, कौन सी भाषा बोली जाती है। दक्षिण की चारों भाषाओं को सामूहिक रूप से मदरासी कहने की भूल कालेज के छात्र ही नहीं, कभी-कभी सम्माननीय सार्वजनिक व्यक्ति भी करते हैं। इस घोर अनभिज्ञता को दूर करने के लिए शिक्षा जगत् में और विशेषकर भाषा जगत में कोई विशेष प्रयास नहीं किया गया है। राष्ट्रीय शिक्षा अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद् (एन० सी० ई० आर० टी०) के सहयोग से इस दिशा में अच्छा कार्य किया जा सकता है। भारत की प्रत्येक भाषा के साहित्यिक और सांस्कृतिक महत्व का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत करने वाली कुछ लघु पुस्तिकाएं (मोनोग्राफ) तैयार की जा सकती हैं और हाई स्कूल की कक्षाओं में इनको किसी न किसी रूप में पाठ्य ग्रंथ बनाया जा सकता है।

महाविद्यालय के स्तर पर हिन्दी भाषा और साहित्य का अध्ययन करने वाले छात्रों के लिये इस प्रकार का साहित्य उच्च स्तर पर पढ़ाया जा सकता है। इसे केवल हिंदी के संबंध में ही नहीं, हिंदीतर भाषाओं के संबंध में भी लागू किया जा सकता है। इस प्रकार कम से कम किसी भी भारतीय भाषा और साहित्य का अध्ययन करने वाले छात्रों के लिये पड़ौसी भाषा के संबंध में और सामान्य रूप से भारतीय साहित्य की प्राचीन और वर्तमान गतिविधियों के संबंध में ठोस जानकारी दी जा सकती है। इससे भारत की विभिन्न भाषाओं के बीच में आदान-प्रदान के लिए अनुकूल वातावरण पैदा हो जायेगा। इसके बाद जिन को भाषा विशेष सीखने की रुचि हो, वे आसानी से उसे सीख सकेंगे। इसके लिये नागरी लिपि में पाठ्य पुस्तकें तैयार को जा सकती हैं।

भारत की विभिन्न भाषाओं का साहित्यिक और सांस्कृतिक परिचय प्रस्तुत करने वाली छोटी पुस्तकों में भी कुछ प्रसिद्ध कवियों की कविताए आदि परिशिष्ट के रूप में नागरी लिपि में प्रस्तुत की जा सकती हैं। इसी संदर्भ में एक और काम किया जा सकता है। हिंदी से अन्य भारतीय भाषाओं में और अन्य भारतीय भाषाओं से हिंदी में अब तक काफी अनुवाद कार्य हो चुका है। इस क्षेत्र में जो प्रसिद्ध अनुवाद हुए हैं, विशेषकर कविता के क्षेत्र में, उनको मूल भाषा की लिपि और नागरी लिपि में साथ-साथ प्रकाशित किया जा सकता है। साहित्य अकादमी और भुवन वाणी ट्रस्ट जैसी संस्थाओं ने इस प्रकार का बहुत कार्य किया है। इन लोगों के प्रयास से अभी जो सामग्री उपलब्ध है, इसका पूरा-पूरा उपयोग किया जाये और इस प्रकार के साहित्य को अधिक समृद्ध बनाने का प्रयास किया जाए, तो नागरी का पर्याप्त प्रसार होगा।

भाषा शिक्षण का एक और क्षेत्र है जहां नागरी लिपि का आसानी से प्रवेश हो सकता है। दिल्ली, बम्बई, कलकत्ता, मद्रास जैसे बड़े-बड़े शहरों में केन्द्रीय सरकार के अनेक अधिकारी और कर्मचारी रहते हैं। इनके बच्चे अपनी मातृभाषा का प्रयोग केवल घर में करते हैं और स्कूल में अंग्रेजी; हिंदी और स्थानीय भाषा

सीखते हैं। इन को कम से कम तीन लिपियां सीखनी पड़ती हैं और यदि मातृभाषा भी कायदे से सीखनी है तो एक और लिपि का भार उन पर पड़ जाता है। इन परिस्थितियों में अगर अंग्रेजी और हिंदी के अतिरिक्त अन्य भाषाओं को नागरी लिपि के माध्यम से सीखने सिखाने की सुविधा हो जाए तो समय और श्रम की काफी बचत हो जाएगी। इसके लिए दो बातें जरूरी हैं। एक तो स्थानिक शिक्षा विभाग को इस के लिए राजी करना पड़ेगा और कानूनन इस बात की छूट दिलवानी पड़ेगी कि इन भाषाओं के लिए वैकल्पिक लिपि के रूप में नागरी का प्रयोग किया जा सकता है और दूसरी बात, जो इससे भी अधिक श्रमसाध्य है वह यह कि इसके लिए आवश्यक पा यक्रम सामग्री तैयार करवानी पड़ेगी। अगर ये दोनों कठिनाइयां दूर हो जाएं तो नागरी लिपि के लिए बहुत बड़ा क्षेत्र खुल जाएगा।

एक बार यह सुविधा मिल जाए तो इस प्रकार के और भी अनेक क्षेत्र खुल जाएंगे। जहां लिपि के कारण भाषा के प्रयोग में बाधा पड़ रही हो वहां नागरी लिपि के प्रयोग से सारी समस्या का समाधान हो सकता है। उदाहरण के लिए संघ लोक सेवा आयोग ने 1979 से सिविल सेवा परीक्षा की नई प्रणाली चलाई है, जिसमें प्रत्येक उम्मीदवार को अंग्रेजी के अतिरिक्त संविधान की आठवीं अनुसूची में उल्लिखित एक भारतीय भाषा को अनिवार्य रूप से लेना है। इस में अपनी मातृभाषा का नियमित अध्ययन करने वाले छात्रों के लिए कोई कठिनाई नहीं है। लेकिन जो लोग अपने प्रांत से बाहर बड़े-बड़े शहरों में रहते हैं, उनके लिए अपनी मातृभाषा में लिखने-पढ़ने का अच्छा अभ्यास नहीं रहता है। अनेक अहिंदी भाषी बच्चे ऐसे हैं जो अपनी मातृभाषा की अपेक्षा हिन्दी में लिखना अधिक सुविधाजनक समझते हैं क्योंकि उन को मातृभाषा में बोलना तो आता है, पर लिखने का अभ्यास नहीं रहता है। इसलिए इस प्रकार के अनेक छात्र अपनी मातृभाषा को छोड़कर इस प्रश्न के लिए हिंदी ले रहे हैं और उनको हिंदी भाषी छात्रों से प्रतियोगिता करनी पड़ती है। इस विषय में अगर नागरी लिपि का प्रयोग सभी भारतीय भाषाओं के लिए वैकल्पिक रूप से स्वीकार कर लिया जाए तो बहुत से अहिंदी भाषी अपनी मातृभाषा को ही लेकर प्रतियोगिता कर सकते हैं।

ऐसे बहुत सारे क्षेत्र हो सकते हैं जहां समस्त भारतीय भाषाओं के लिए वैकल्पिक और अतिरिक्त लिपि के रूप में नागरी के प्रयोग से भाषा के अवरुद्ध रास्ते खुल सकते हैं। इसलिए भाषा और लिपि के प्रश्न पर अलग-अलग और निष्पक्ष भाव से विचार करना होगा। जहां किसी भी भाषा के प्रयोग में कुछ अनिवार्य परिस्थितियों के कारण उसकी अपनी लिपि साथ नहीं दे पा रही है, वहां नागरी अत्यंत उपादेय और निरापद भूमिका निभा सकती है।

इस भूमिका का मार्ग प्रशस्त करने के लिए नागरी लिपि के माध्यम से भारतीय साहित्य का उत्कृष्ट भाग प्रस्तुत हो जाना चाहिए। भारत की किसी भी भाषा के उत्तम साहित्य का परिचय प्राप्त करने के लिए हिंदी भाषा और देवनागरी लिपि का माध्यम सक्षम और पर्याप्त होना चाहिए।

इसके साथ-साथ भारत की विभिन्न लिपियों के माध्यम से हिंदी साहित्य को प्रस्तुत करने का भी प्रयास होना चाहिए। उदाहरण के लिए यदि रामचरित मानस जैसी रचनाओं को भारत की विभिन्न लिपियों में प्रकाशित कर सस्ते मूल्य में सब को उपलब्ध कराया जाए तो हिंदी की साहित्यिक गरिमा सब के पास उनके लिए परिचित माध्यम में पहुंच जाएगी और भाषा बाद में अपने आप पहुंच जाएगी। जहां लोगों के दिल और दिमाग़ मिल-जुल कर सोचने समझने लगते हैं वहां बोली और लिखावट कोई खास रुकावट पैदा नहीं कर सकती हैं। भावात्मक एकता के लिए साक्षरता की अपेक्षा सरसता और समरसता अधिक आवश्यक है।

आज मीरा के भजन, श्रीमती सुब्बुलक्ष्मी के मधुर कंठ में दक्षिण भारत के गांव-गांव में पहुंच चुके हैं। इसी प्रकार त्यागराज के गीत उत्तर के घरों में जब पहुंच जाएंगे तब भारत में सच्ची भावात्मक एकता संभव हो सकेगी। इसलिए भाषा और लिपि की जानकारी उतनी आवश्यक नहीं है जितना कि विचारों का आदान-प्रदान, जो किसी भी भाषा और लिपि के माध्यम से संभव है। लोगों की भावना सब से सूक्ष्म और सब से प्रधान है। भाषा उसके लिए साधन मात्र है और लिपि उसकी बाहरी वेशभूषा है। मानव जीवन में भावना, भाषा और लिपि का लगभग वही स्थान है जो हृदय, शरीर और पोशाक का है। हृदय की एकता सबसे प्रमुख है। अगर यह संभव हो जाए तो भाषा और लिपि का अस्थायी अवरोध अपने आप दूर हो जाएगा। □□□

राजर्षि टण्डन और राजभाषा हिन्दी

---राजमणि तिवारी
वरिष्ठ अनुसंधान अधिकारी एवं संपादक

भौतिक वैभव की चकाचौंध और उसकी प्राप्ति की लालसा मानव मन को निरन्तर उद्वेलित करती रहती है। इस चकाचौंध की चमक अपनी अनगिनत किरणों का जाल बुनती सभी को अपने घेरे में समेट लेने के लिए बेचैन रहती है। किन्तु कुछ महामानव ऐसे भी होते हैं, जो इसके तानोंबानों को तोड़ कर बाहर आ जाते हैं और अपनी मातृ-भूमि तथा मातृभाषा के लिए अपने सुखों की तिलांजलि दे देते हैं। ऐसे ही महामानव थे राजर्षि पुरुषोत्तम दास टंडन, जिन्होंने अपनी अच्छी चलती वकालत को छोड़कर राष्ट्र-भाषा की सेवा में अपने को समर्पित कर दिया। वे स्वयं कहा करते थे :—

"सिंहन के लेंहड़े नहीं, हंसन की नहीं पांति,
लालों की नहीं बोरियां, साधु न चलें जमात।"

1910 में महामना मालवीय जी के प्रयास से प्रयाग में हिन्दी साहित्य सम्मेलन की स्थापना हो गई थी और तभी से टंडन जी उसके प्रधान मंत्री होते आ रहे थे। 1914 में वे मालवीय जी के आग्रह पर अपनी 6 वर्षों की हाई कोर्ट की प्रैक्टिस छोड़कर नाभा राज्य के कानून मंत्री बन कर चले गए, जहां उनकी योग्यता और परिश्रम को देखकर उन्हें विदेश मंत्री का भी पद प्रदान किया गया, किन्तु जब महाराजा नाभा ने उन्हें हिन्दी साहित्य सम्मेलन के एक अधिवेशन में सम्मिलित होने का अवकाश नहीं दिया तो उन्होंने तुरन्त त्याग-पत्र दे दिया और अधिवेशन में भाग लेने के लिए वहां से चले आए। महाराज के कई बार आग्रह करने पर भी वे नाभा नहीं लौटे और न अपनी सुख-सुविधाओं की कोई चिन्ता की। ऐसा था उनका हिन्दी प्रेम।

राजर्षि टण्डन का जीवन सत्य, आत्म-संयम और राष्ट्रीय एकता की धुरी पर स्थिर रहा है। उनकी हिन्दी सेवा तो राष्ट्रीयता की पर्यायवाची थी। राष्ट्रीय आन्दोलन के दिनों में ऐसे अनेक राजनेता हुए, जिन्होंने हिन्दी को भारत की राजभाषा बनाने के लिए अथक परिश्रम किया था, किन्तु भारतीय संविधान में हिन्दी को राजभाषा का जो पद प्राप्त हुआ है, उसके लिए यदि किसी एक व्यक्ति को श्रेय देना पड़े तो यह श्रेय निश्चय ही राजर्षि पुरुषोत्तम दास टंडन को प्राप्त होगा। इस महापुरुष के लिए देश की स्वतंत्रता का जो महत्व था, वही देश की राजभाषा का भी था। संविधान सभा के लेखकों के मन में हिन्दी को राजभाषा बनाने के संबंध में अनेक कुंठाएं थीं, किन्तु राजर्षि टंडन ने बड़ी कुशलता और व्यावहारिक बुद्धि से इस विषय पर अपने विचार प्रकट किए तथा औरों को प्रेरित करके ऐसा वातावरण बनाया, जिससे संविधान सभा को देवनागरी लिपि में लिखित हिन्दी को सर्वसम्मति से राजभाषा स्वीकार करने के लिए सहमत होना पड़ा। इस प्रकार भारतीय जनता की शताब्दियों की अभिलाषा 14 सितम्बर, 1949 को पूर्ण हुई।

टण्डन जी पक्के सिद्धान्तवादी थे। वे हिमालय की भांति अपने सिद्धांतों पर अड़े रहते थे। आत्मा की आवाज और राष्ट्र-कल्याण की भावना के अलावा अन्य कोई प्रलोभन उन्हें अपने रास्ते से डिगा नहीं सकता था। वे त्याग, संयम, दया और सेवा के साक्षात अवतार थे। टण्डन जी की प्रशंसा में महात्मा गांधी जी ने लिखा था कि—"ऐसे ही पुरुषों के त्याग और साहसपूर्ण कार्यों से राष्ट्र का निर्माण होता है।"

पंडित जवाहर लाल नेहरू ने उनके विषय में लिखा है—"जो भी व्यक्ति टंडन जी के सम्पर्क में आए, सबने उनसे कुछ-न-कुछ सीखा। यह महापुरुषों की निशानी है। जो उनसे मिले, लेकर गए। हमने भी उनसे लिया, जिससे दिल और दिमाग की दौलत बढ़ी। वह ऐसे व्यक्ति थे, जो अपने सिद्धांतों पर अटल स्तंभ की तरह डटे रहे।"

टंडन जी का जन्म प्रयाग के अहियापुर मुहल्ले में संवत् 1939 विक्रमी के श्रावण मास के शुक्ल पक्ष की द्वितीया तिथि मंगलवार तदनुसार 1 अगस्त, 1982 ई० को एक कुलीन परिवार में हुआ था। श्रावण का यह महीना पुरुषोत्तम मास था, इसलिए नवजात बालक का नाम पुरुषोत्तम रखा गया। टंडन जी के पिता का नाम सालिगराम टंडन था। वे एक धार्मिक प्रवृत्ति के व्यक्ति थे और प्रयाग के एकाउन्टेन्ट जनरल के आफिस में काम करते थे। टंडन जी ने क्रमश: 15 और 17 वर्षों की अल्पायु में 1897 में हाई स्कूल की और 1899 में इंटरमीडिएट की परीक्षाएं उत्तीर्ण की थीं। कई राजनीतिक तथा पारिवारिक कारणों से उनके अध्ययन में कुछ बाधाएं आईं, किन्तु उन्होंने अपना अध्ययन जारी रखा और 1904 में बी० ए० तथा 1906 में वकालत की परीक्षाएं उत्तीर्ण कीं। 1907 में उन्होंने एम० ए० की उपाधि प्राप्त की और 26 वर्ष की अवस्था में 1908 से इलाहाबाद हाई कोर्ट में प्रैक्टिस करने लगे।

अपनी प्रतिभा और परिश्रम के बल पर टंडन जी ने शीघ्र ही वकीलों में अपना एक प्रतिष्ठित स्थान बना लिया। उनकी वकालत अच्छी चलने लगी। वकालत के पेशे में भी टंडन जी ने

अपने आदर्श-चरित्र और सत्यता का सदैव ध्यान रखा। वे न तो झूठे मुकदमे लेते थे और न ही ऐसे मुकदमों की पैरवी करते थे। इसीलिए न्यायाधीश लोग यह जान जाते थे कि जिस मुकदमे की वे पैरवी कर रहे हैं, उसमें सच्चाई अवश्य है। वे अधिकतर राष्ट्रीय, क्रांतिकारी और सामाजिक किस्म के मुकदमे लिया करते थे और आर्थिक लाभ की चिन्ता न करके आवश्यकता पड़ने पर अपना पैसा भी लगा दिया करते थे।

इलाहाबाद हाई कोर्ट में प्रैक्टिस के दौरान वे नगर पालिका के चेयरमैन और हिन्दी साहित्य सम्मेलन के प्रधान मंत्री भी थे। प्रैक्टिस द्वारा अधिकाधिक धन अर्जित करने के बजाय उनका अधिक समय हिन्दी की सेवा में खर्च होता था। वे हिन्दी के प्रचार, प्रसार के लिए निरन्तर प्रयत्नशील रहते थे।

1910 में टंडन जी ने, जबकि वे केवल 27–28 वर्ष के युवक थे, काशी में आयोजित हिन्दी साहित्य सम्मेलन के प्रथम अधिवेशन में राजभाषा के संबंध में निम्नलिखित विचार व्यक्त किए थे :—

"हिन्दी भाषा को भारतवर्ष के हर एक प्रान्त के लोग समझते और समझ सकते हैं। अब यह उपाय करने चाहिए, जिनसे हिन्दी भाषा की सब प्रकार की उन्नति होवे। **जिस भाषा को राज्य का सहारा नहीं है, वह शीघ्र उन्नति नहीं कर सकती है। लोग उसका उतना आदर नहीं करते, जितना कि राजभाषा का। उर्दू भाषा की उन्नति इसका प्रमाण है। हम सबको उद्योग करना चाहिए, जिससे हमारी हिन्दी को भी 'राजद्वारे' में स्थान मिले।** ऐसा उपाय कीजिए, जिससे कि हिन्दी भाषा का प्रचार हर एक प्रान्त के गांव-गांव में हो।"

टंडन जी जीवन पर्यन्त इस उद्देश्य को सामने रख कर चलते रहे। उन्होंने हिन्दी को सभी प्रकार से समृद्ध करने और उसे 'राजद्वार' तक पहुंचाने के लिए अथक परिश्रम किया। हिन्दी साहित्य सम्मेलन के प्रथम प्रधान मंत्री के रूप में उन्होंने इस संस्था को न केवल स्थायित्व प्रदान किया, बल्कि उसके माध्यम से हिन्दी की बहुविध और चहुंमुखी उन्नति के लिए अनेक कार्यक्रम बनाए और उन्हें सफलतापूर्वक कार्यान्वित किया। उनके प्रधान मंत्रित्व काल में सम्मेलन की स्थिति निरन्तर सुदृढ़ बनती गई और सुदूर दक्षिण से उत्तर और पूर्व से पश्चिम तक हिन्दी की लोक-प्रियता, प्रगति और प्रसार में अभूतपूर्व वृद्धि हुई। टंडन जी ने इस मंच के द्वारा हिन्दी की सर्वांगीण वृद्धि के लिए अनेक प्रयास किए। उनके द्वारा प्रवर्तित हिन्दी साहित्य सम्मेलन की परीक्षाओं का हिन्दी जगत पर बहुत व्यापक प्रभाव पड़ा और कालेजों तथा विश्वविद्यालयों में हिन्दी पढ़ने वालों की बाढ़ सी आ गई। उन्होंने अनेक विद्वानों को हिन्दी साहित्य की विविध विधाओं के भंडार को पूर्ण करने के लिए प्रेरित किया और सम्मेलन द्वारा उन्हें प्रकाशित कराया। परिणामस्वरूप आज सभी विषयों पर प्रचुर मात्रा में हिन्दी की रचनाएं और पुस्तकें सुलभ हो गई हैं।

हिन्दी को राजभाषा बनाने में टंडन जी की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण रही है। इस कार्य के लिए 1947–1950 के बीच कांग्रेस दल की बैठकों और संविधान सभा में उन्हें जो भागीरथ प्रयास करना पड़ा, वह अवर्णनीय है। टंडन जी के अनवरत प्रयत्नों के परिणामस्वरूप कांग्रेसदल की बैठक में देवनागरी लिपि में लिखित हिन्दी को संघ की राजभाषा बनाने के संबंध में एकमत से हिन्दी की विजय हुई थी, जिसे बाद में चल कर संविधान सभा ने सर्व-सम्मति से स्वीकार किया था। सितम्बर, 1949 में संविधान सभा में हिन्दी के पक्ष में उन्होंने जो विचार प्रकट किए थे, उसमें उनकी वाक्पटुता, विचार-प्रौढ़ता और तर्कशीलता के दर्शन होते हैं। कुछ अंश इस प्रकार हैं :—

"सर्वोच्च न्यायालय तथा उच्च न्यायालयों की भाषा के सम्बन्ध में उपस्थित प्रस्ताव—श्री आयंगर मुझे ऐसा कहने के लिए क्षमा करेंगे—स्पष्टतः प्रतिगामी है। आपने हिन्दी को राजकीय भाषा स्वीकार किया है। मैं मानता हूं कि आप चाहते हैं कि हिन्दी शनैः-शनैः अंग्रेजी का स्थान ग्रहण करे। किन्तु यह तभी संभव है, जब आप हिन्दी को कम से कम हिन्दी भाषी राज्यों में अंग्रेजी का स्थान लेने का अवसर दें। मैं जानता हूं अहिन्दी प्रान्तों को हिन्दी के प्रयोग में कठिनाई है, **किन्तु हिन्दी प्रान्तों को हिन्दी के व्यवहार में कोई कठिनाई नहीं है।** आप कठिनाइयों को और भी बढ़ा-चढ़ा कर न रखें। यह कहा गया है कि हिन्दी में उपयुक्त मुहावरे, वाक्यांश तथा पारिभाषिक शब्दावली अप्राप्य है। अस्तु यह बात आप उन पर छोड़ दीजिए, जो हिन्दी में कार्य करेंगे। मेरे अपने ही प्रदेश में विधेयकों तथा अधिनियमों की मूल भाषा हिन्दी ही होती है। स्पष्ट ही हमारे दक्षिण के भाइयों के लिए हमारे इस कार्य से कोई कठिनाई नहीं होगी। आप हमें अपना सब कार्य अंग्रेजी भाषा में करने के लिए क्यों विवश करें, जब हम पहले से ही इसे हिन्दी में कर रहे हैं।"

संविधान में हिन्दी के राजभाषा स्वीकृत हो जाने पर, उन्होंने इसके प्रशासनिक साहित्य की तैयारी पर विशेष ध्यान दिया। वे चाहते थे कि इसका प्रशासनिक साहित्य समृद्ध हो और इसका शब्द भंडार उन्नत किया जाए। उनके प्रयत्नों से संसदीय, विधिक और प्रशासनिक शब्दों के हिन्दी पर्याय निश्चित करने के लिए एक समिति बनाई गई, जिसका उन्हें अध्यक्ष बनाया गया। इस समिति में सभी भाषाओं के प्रतिनिधि शामिल थे। इस समिति ने लगभग 20,000 शब्दों का चयन किया, जिन पर विचार करने के लिए 8 महीनों में 113 बैठकें बुलाई गईं। टंडन जी सभी बैठकों में उपस्थित रहे और इन शब्दों को अन्तिम रूप देने में अपना योगदान किया। इस कार्य को पूरा करने में टंडन जी ने अथक परिश्रम किया।

आधी शताब्दी से अधिक काल तक राजर्षि टंडन ने हिन्दी की महान सेवा की। हिन्दी साहित्य सम्मेलन उनकी कीर्ति का स्थायी स्मारक है। भारतीय संविधान में हिन्दी को राजभाषा के पद पर प्रतिष्ठित कराने के लिए वे चिरस्मरणीय रहेंगे। □□□

सर्वभारतीय साहित्य : शिखर की तलाश

—रंग नाथ राकेश
उप संपादक, राजभाषा भारती

['राजभाषा भारती' के 14वें अंक में स्वर्गीय श्री जी० शंकर कुरुप मलयालम के सर्व श्रेष्ठ कवि और चिन्तक की ज्ञानपीठ पुरस्कार जयी कृति 'बांसुरी' का परिचय तथा मूल मलयालम सहित श्रेष्ठतम अंशों का अनुवाद दिया गया था। इसी क्रम में 1966 के भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार विजेता स्वर्गीय तारा शंकर बंद्योपाध्याय के व्यक्तित्व तथा पुरस्कृत उपन्यास 'गण-देवता' का एक मार्मिक गद्यांश मूल बांग्ला तथा हिन्दी रूपान्तरण सहित दिया जा रहा है। तारा शंकर के समस्त कृतित्व की परिधि को सूत्र रूप में स्पर्श करते हुए सर्व भारतीय साहित्य के शिखर की तलाश में यह प्रयत्न है—उप संपादक]

तारा शंकर के मन में अतीत के प्रति अनुराग किन्तु अनागत और नये के प्रति एक ललक थी। उनके शब्दों में ही 'पुरातन के प्रति मेरे मन में अनुराग है, किन्तु नूतन का आह्वान भी मैंने सुना। दोनों को अपने साहित्य की माला में गूंथ कर महाकाल के चरणों में समर्पित करके अपने को धन्य पाता हूं।'

तारा शंकर का जन्म पश्चिम बंगाल में वीरभूम जिला के लाबपुर नाम के एक छोटे से गांव में, एक साधारण जमींदार घराने में 23 जुलाई, 1898 को हुआ था। जिस प्रदेश में तारा शंकर जन्मे थे उसे 'राढ़ देश' की संज्ञा दी गई है। तत्कालीन जमींदारी और सामन्तशाही के खोखले दम्भ और भारत की सनातन संस्कृति के नाम पर आडंबर और प्रपंच की संकीर्णताओं को तारा शंकर ने बारीकी से देखा और परखा। इसी कारण तारा शंकर में एक युग-सन्धि मानो तरल लावा के प्रवाह के रूप में उद्दाम गति से बहती रहती है। शरतचन्द्र चट्टोपाध्याय ने तारा शंकर की प्रतिभा को देखकर कहा था 'शे आमार पथिकृत' अर्थात् 'वह मेरा दावेदार होगा।'

इनकी माता प्रभावती देवी तथा पिता हरिदास बंद्योपाध्याय के व्यक्तित्व का प्रभाव समग्र रूप से तारा शंकर पर पड़ा। माँ ने तारा शंकर को 'कपाल कुंडला' की कहानी सुनाई थी। वह घटना अपूर्व है। बालक को नींद नहीं आ रही थी, अतः माँ ने पूछा—

"कि रे खोका, घूम पाच्छे ना ? (क्यों मुन्ना, नींद नहीं आ रही है ?)

"ना माँ ! (नहीं माँ) बालक तारा शंकर ने कहा। 'ता होले एकटि गल्प शोनो !' (तो फिर एक कहानी सुन !)

और माँ ने बंकिमचन्द्र की 'कपाल कुंडला' पढ़ना शुरू किया। माँ पढ़ रही थी, बेटा सुन रहा था। मोती बीवी उर्फ लुत्फ फन्निसा का प्रसंग चल रहा था—मोती बीवी नवकुमार शर्मा की ही अपहृता प्रथम पत्नी बंद पालकी में चली आ रही थी। नवकुमार शर्मा के हाथ में चिराग था। नवकुमार शर्मा ने वह प्रभामय ज्योतिष्क मुखड़ा लमहे भर के लिए ही देखा था कि भक् से चिराग बुझा दिया मोती बीबी ने। बंकिमचन्द्र चट्टोपाध्याय की मूल पंक्ति है, वहां उस प्रसंग में—'प्रदीप निबिया गेलो !' चिराग बुझ गया। लेकिन तारा शंकर की टिप्पणी द्रष्टव्य है 'आमार साहित्य जीवन' (तारा शंकर की आत्मकथा) में उन्होंने इसी प्रसंग में लिखा है—संगे संगे आर एकटि प्रदीप ज्वलिया उठलो। साथ ही साथ एक दूसरा प्रदीप प्रज्वलित हो उठा और वह प्रज्वलित आलोक शिखा, विवेक ज्योति, वह आत्म-आलोक उनके अंतर में उदीप्त रहा सन् 1971 के 14 सितम्बर तक छब्बीस हजार छह सौ चौरानबे दिनों तक। अन्तर का यह आलोक प्रज्वलित रहा छह लाख चालीस हजार छह सौ छप्पन घंटों तक। हाय, वह आलोक बुझ गया, किन्तु नहीं, आलोक-शिखा अवश्य अदृश्य हो गयी, पर उसका प्रकाश तो विच्छुरित है उनकी कृतियों में, 'सप्तपदी' में, 'हाँसुली बांकेर उपकथा' में, चाँपाडागार बो, में 'कवि' 'में धात्री देवता' में, 'विपाशा' में, 'मंजरी आपेरा' में, 'आरोग्य निकेतन' में, 'नागिनी कन्यार काहिनी' में, 'विचारक' में, 'राधा' में—'गणदेवता' में . . . उस 'गण देवता' का जो बंगाल में बीसवीं शती के चरण-निक्षेपकाल का गद्यात्मक महाकाव्य है। श्यामा और खंजना की शस्य श्यामला धरित्री बंगाल के ग्रामीण अंचल की व्यथा-कथा, जिस कथा की गंध में भारत की समूची धरती महकती है। 'गण देवता' संसार के गण्य उपन्यासों में गणनीय है। बांग्ला का "लॉ मिजरेब्ल"—व्यक्तिगत जीवन की हिलोर पर चढ़ता उतरता सामूहिक जन-जीवन। कुंठित द्विधाग्रस्त सामाजिक नागपाश से मुक्ति पाने के लिए तड़पता संघर्षरत जीवन-यज्ञ में आहुति बने नर और नारियों के नये युगबोध की चकाचौंध से पदस्खलित, किन्तु महाकाल के नए आह्वान-गीत की वीणा पर मंत्रमुग्ध जन-जीवन, भूख और वासना विध्वंस और हाहाकार के बीच निर्मम

संकल्प के संग बढ़ते हुए 'गण देवता' के अडिग अटल-गीतशील चरण-!, जीवन सत्य के अनुसंधान में प्रवहमान जीवन की गाथा—सागा आफ लाइफ।' हाय, देवता तो नहीं रहा हमारे बीच ...... पर देवत्व का एक प्रतिमान हमारे बीच स्थापित कर गया है वह ।

उन्होंने मुझे एक चिट्ठी लिखी थी 27 नवम्बर, 1969 को अपने गाव लाबपुर से, मुझे वह पत्र मिला था । यह पत्र निम्नलिखित है :—

"तुम्हारा पत्र मिला और तुम्हारे खत के मुताबिक 'धर्मयुग' के पते पर, तुम्हारे पत्र के साथ अपना अनुमति पत्र संलग्न करके एक्सप्रेस डिलीवरी से भेज दिया । इसके अलावा भी 'धर्मयुग' के पते पर भारती को एक तार भेज दिया।

तुम आकर लौट गये, यह जानकर दुःखित हुआ साथ ही थोड़ा खुश भी हुआ हूं—कारण यह है कि तुम फोन करके आये क्यों नहीं ? इसके अलावा तुम बहुत शरारती लड़के हो, दो सप्ताह पहले मुझे फोन करके इंगेजमेंट करके भी तुम नहीं आये।

आशा करता हूं तुम परिहास निश्चय समझते हो । मैं शनिवार को कलकत्ता लौट रहा हूं। तुम इसके बाद कलकत्ता मुझसे मिलो । तुम एक चंचल दुष्ट लड़के हो, मुझे तुम बहुत अच्छे लगते हो, स्नेह लो। (धर्मयुग 31 अक्तूबर, 1971 में प्रकाशित मेरे लेख से) मानवीय संवेदना और सहजता का इज़हार इस पत्र में स्पष्ट है।

तारा शंकर बंद्योपाध्याय के बारे में विभूतिभूषण मुखोपाध्याय ने जो कुछ कहा है, वह वाक़ई सार्थक है । तारा शंकर की लेखनी का मूलसूत्र है—'अतीत और वर्तमान' 'क्या था और क्या हो गया !' और इस विषय में भी लेखक का मन पूर्ण निरासक्त है । बात यह है कि प्रगति और आधुनिकता के नाम पर जो हो रहा है वह सभी कुछ स्वागत योग्य नहीं, और प्राचीन जो सब था उसे भी सारा का सारा वांछनीय नहीं माना जा सकता । ताराबाबू एक मुक्त दृष्टि लेकर अतीत और वर्तमान की भूमि पर खड़े भविष्यत् के कल्याण के अन्वेषी हैं ।

अवश्य यह कहना अन्याय होगा कि तारा शंकर का सृजन इसी सीमित दायरे में ही आबद्ध है। उनका सृजन वस्तुतः बहुमुखी वैचित्य-सम्पन्न है । तो भी मूलतः वह युगान्तर के ही कथाकार हैं । दो युगों के संघात की कथा-रचना में उनकी लेखनी जितनी मदमाती हो उठती है उतनी और कहीं नहीं । यह उनका वाणी विलास नहीं है, उनके अन्तर की घनीभूत पीड़ा का प्रस्फुटन और रूपान्तर मात्र है ।

वकील सावित्री प्रसन्न चट्टोपाध्याय "मानव प्रेम और मानवीय चेतना ही तारा शंकर की रचनाओं का प्रमुख तथ्य है । उनकी कहानी हो चाहे उपन्यास, सभी की पृष्ठभूमि है : हमारा यह देश, यहां के लोग, उनका चरित्र, दुख-दर्द और आशा-आकांक्षा उनका स्नेह-प्रेम और द्वेष-ईर्ष्या, उनकी समस्या-विक्षुब्ध जीवनचर्या में शुभाशुभ के सतत द्वन्द्व वह सब कुछ जो देश के माटी-पानी से जुड़ा बंधा है और बनता-बिगड़ता है। उनकी रचनाओं में कोई ऐसा पात्र नहीं होता जिसे हम न पहचानते हों, जिसके अन्तर्द्वन्द्व हमारे जाने-बूझे न हों, जिसकी शक्ति और दुर्बलता हमें कहीं भी पहेली सी लगे, और समय और समाज के घटना-संघातों की क्रिया या उनके जीवन का सुन्दर या असुन्दर हमें जरा भी अटपटा जान पड़े । यही बात है कि तारा शंकर का जीवन-वाद और जीवन दर्शन सत्य और यथार्थ की उपलब्धि की कसौटी पर खरे उतरते हैं । इसी में तारा शंकर की और उनकी रचना-शैली की सार्थकता है।" तारा शंकर की कृतियों की संख्या लगभग 150 हैं । यहां 'गणदेवता' के एक अंश का हिन्दी अनुवाद मूल सहित दिया जा रहा है ।

मूल : बांग्ला ("गणदेवता" से)

स्वर्ण आशिया काछे दाँड़ाइलो ।
देबू बोलिलो—एर माने तो कठिन नय ।

स्वर्ण मृदु स्वरे बोलिलो दायित्व लिखेछे केनो ताई शुध लाम दादा के ।

ऐतों लोकेर काछे भिक्षे चाओआ। जार इच्छे हबे देबे । ना हबे देबेना । शे तो दायित्व नय ।

तार कथा देबूर मस्तिष्के गिया अद्भुत भावे आघात कोरिलो । ताई तो । स्वर्ण बोलिलो—"आर आमादेर एखाने बन्या हयेछे ताते अन्य जायगार लोकेर दायित्व हबे केनो ! देबू अवाक हइया गेलो । एई बुद्धिमती मेयेटिर अर्थ बोधेर सूक्ष्म तारतम्य भानेर परिचय पाइया सविस्मये ताहार मुखेर-दिके चाहिया रहिलो । देबूर से दृष्टि देखिया स्वर्ण किन्तु एक्टु अप्रतिभ हइलो । बोलिलो-आमि बुझते पारि नाइ । शे लज्जित हइयाइ चलिया गेलो ।

देबू तखनो अवाक् हइया भावितेछिलो ए कथाटा तो शे भाविया देखे नाई । सत्यइ तो-नाम न जाना एइ ग्राम कयखानिर दुखः दुर्दशार देश-देशान्तरेर मानुषेर दया होइते पारे, किन्तु दायित्व ताहादेर किशेर ! दायित्व ! ओइ कथा टार गुरुत्वे व्याप्तिते ताहार अनुभूति चेतनाय विपुल हइया उठिलो । संगे-संगे ताहार एइ पंचग्रामओ परिधिते विराट हइया उठिलो ।

शे डाकिलो—स्वर्ण !

गौर बसिया एखनो ओइ लाइन कटि पोड़ितेछिलो । ताहार मने ओ कथाटा लागिया आछे। शे बोलिलो-स्वर्ण चोले गियेछे तो ।

ओ, डाको ताके ।

डाकिते होइलो ना । स्वर्ण निजेइ आशिलो । गरम दुधेर बाटि ओ जलेर गेलाश हाते । बाटिटि नामाइया दिया बोलिलो—खान।

देबू बोलिलो—तुमि ठीक धोरेछो स्वर्ण । तोमार भूल हय नाइ । तोमार बुद्धि देखे आमि भारी खुशी होएछि ।'

स्वर्ण लज्जित होइया एबार मुख नामाइलो ।

देबू बोलिलो—"तुमि रवीन्द्रनाथेर 'नगरलक्ष्मी' कविता पोड़ेछो !"

दुर्भिक्ष श्रावस्तीपुरे जोबे—उठिलो हाहा रबे" पोड़ेछो !

स्वर्ण बोलिलो—ना' ।

गौर, तुमि पोड़ोनि !

ना ।

शोनो तबे ।

स्वर्ण बाधा दिया बोलिलो—आगे आपनि दूधटा खेए नीन, जूड़िए जाबे ।

दूध खाइया मुखे जल दिया देबू गोटा कविताटा आवृत्ति कोरिया गेलो ।

स्वर्ण बोलिलो—आमाके लिखे देबेन कविताटि ?

देबू बोलिलो—तोमाके ऐइ बोइ एक्खाना प्राइज देबो आमि ।

स्वर्णेर मुख उज्ज्वल होइया उठिलो ।

—पंडित मोशाय आछेन ! के बाहिर होइतें डाकिलो।

गौर मुख बाड़ाइया देखिया बोलिलो—डाक पिंउन ।

देबू बोलिलो—एशो, चिठि आछे बूझि !

—चीठि, मनी आर्डर ।

मनी आर्डर ।

टाकाटा लइया देबू चिंतित होइया पोड़िलो । विश्वनाथ लिखियाछे—काज आरम्भ करिया दाओ । पंचास टाका पाठाच्छि ।

दशे मिलि कोरि काज, हारिजीति नाइ लाज।

देबू अनेक भाविया चिन्तिया दस जनेर परामर्श लइ-याइ काज कोरिलो ।

हिन्दी अनुवाद

सोना करीब आकर खड़ी हो गई ।

देबू ने कहा, 'इसका मतलब तो कुछ कठिन नहीं है ।'

सोना ने धीमे से कहा '.जिम्मेदारी क्यों लिखा, मैंने भैया से यह पूछा । यह तो लोगों से भीख मांगना है । जिसे इच्छा होगी, देगा । नहीं इच्छा होगी, नहीं देगा । यह तो जिम्मे-दारी नहीं ।'

उसकी बातों ने देबू के दिमाग में अजीब ढंग से चोट की । 'वही तो । सोना ने कहा, 'और, बाढ़ हमारे यहां आयी, इसके लिए दूसरी जगह के लोगों की जिम्मेदारी क्यों होगी ?'

देबू अवाक हो गया। इस बुद्धिमती लड़की के अर्थ-बोध के सूक्ष्म तारतम्य को देख देबू अचरज से उसकी ओर ताकने लगा । लेकिन देबू की वह नजर देख सोना जरा अप्रतिभ हुई । बोली, मैं समझ नहीं सकी और फिर लजाकर वह चली गयी ।

देबू तब तक भी अवाक् हो सोच रहा था । इस पर तो उसने गौर नहीं किया था । बात तो सही है । कि ऐसे अजाने कुछ गांवों की दु:ख-दुर्दशा पर दूर-दराज के लोगों को दया हो सकती है मगर उनकी जिम्मेदारी कैसी ? जिम्मे-दारी । महत्व और व्यापकता में वह शब्द उसकी अनुभूति में बहुत बड़ा हो उठा । साथ ही साथ यह पंचग्राम भी परिधि में बढ़कर विराट हो गया ।

उसने आवाज दी—'सोना ?'

गौर उन कई पंक्तियों को बैठा बठा पढ़ रहा था । उसके मन में भी इसका खटका लगा था । वह बोला, 'सोना तो चली गयी ।'

ओ। खैर । उसे बुलाओ तो जरा ।'

बुलाना नहीं पड़ा । सोना आप ही आ गयी । हाथ में गरम दूध का कटोरा और पानी का गिलास । कटोरे को रखकर बोली, पी लीजिए ।'

देबू ने कहा, 'तुमने ठीक ही समझा है सोना । गलत नहीं सोचा । तुम्हारी सूझ से मुझे खुशी हुई है ।' शरमाकर सोना ने सिर झुका लिया ।

देबू ने कहा, 'तुमने रवीन्द्रनाथ की "नगरलक्ष्मी" कविता पढ़ी है ? वही—श्रावस्तीपुर में जब पड़ा अकाल वाली पढ़ी है ?'

सोना ने कहा, 'नहीं'

'गौर, तुमने भी नहीं पढ़ी ?'

'नहीं'।

तो सुनो ।'

सोना ने टोका, पहले आप दूध पी लीजिए । ठण्डा हो जायेगा ।'

दूध पीकर, कुल्ला करके देबू पूरी कविता पढ़ गया ।

सोना बोली, 'मुझे यह कविता लिख दीजिएगा ?'

देबू ने कहा, 'तुम्हें वह किताब मैं इनाम में दूंगा ।'

सोना का चेहरा दमक उठा ।

'गुरुजी हैं ? तभी किसी ने बाहर से पुकारा ।

गौर ने झाँककर देखा, बोला—डाकिया है।

देबू ने कहा, आओ । चिट्ठी है क्या ?'

'मनीआर्डर । चिट्ठी ।'

'मनीआर्डर ?'

रुपया लेकर देबू चिन्तित हो गया । विश्वनाथ ने लिखा है—काम शुरू कर दो । पचास रुपये भेज रहा हूं । 'दस मिल-जुलकर करिए काज । हारे-जीते कहीं न लाज ।' बहुत सोच विचार कर देब ने दस की राय लेकर ही काम किया । □□□

भाषा बहता नीर

—कुबेर नाथ राय
प्राध्यापक, नलबारी कालेज, असम

'भाषा बहता नीर'। भाषा एक प्रवाहमान नदी। भाषा बहता हुआ जल। बात बावन तोले पाव रत्ती सही। कबीर की कही हुई है तो सही होनी ही चाहिए। कबीर थे बड़े दबंग और उनका दिल बड़ा साफ था। अत: इस बात के पीछे उनके दिल की सफाई और सहजता झांकती है। इससे किसी को भी एतराज़ नहीं हो सकता।

बहुत कुछ ऐसी ही स्थिति है कबीर की उक्ति की भी "संस्कृत कूप जल है, पर भाषा बहता नीर!" भाषा तो बहता नीर है। पर 'नीर' को एक व्यापक संदर्भ में देखना होगा। साथ ही संस्कृत गहन कूप जल कभी नहीं है। कबीर के पास इतिहास-बोध नहीं था अथवा था भी तो अधूरा था। इतिहास-बोध उनके पास रहता तो अत्याचारी और 'अत्याचारग्रस्त' दोनों को वह एक ही लाठी से नहीं पीटते। खैर इस अवांतर प्रसंग में न जाकर मैं इतना ही कहूंगा कि संस्कृत की भूमिका भारतीय भाषाओं और साहित्य के संदर्भ में 'कूपजल' से कहीं ज्यादा विस्तृत है। वस्तुत: उनके इस वाक्यांश, 'संस्कृत भाषा कूप जल' का सम्बन्ध भाषा, साहित्य से है ही नहीं। यह वाक्यांश पुरोहित तंत्र के खिलाफ ढेले बाजी भर है जिसका प्रतीक थी संस्कृत भाषा। इस संदर्भ में इस ढेले बाजी का एक सार्थक मूल्य भी है। परन्तु भाषा-साहित्य के संदर्भ में 'संस्कृत कूप जल' वाली बात भ्रामक है। और दूसरे अंश 'भाषा बहता नीर' से संयुक्त होने के कारण अनेक भ्रमों की सृष्टि करती है। और कबीर की भाषा संबंधी 'बहता नीर' वाली 'थीसिस' स्वीकारते हुए भी समूचे कथन के संदर्भ में कुछ स्पष्टीकरण आवश्यक हो जाता है।

संस्कृत कूप जल मात्र नहीं। उसकी भूमिका विस्तृत और विशाल है। वह भाषा-नदी को जल से सनाथ करने वाला पावस मेघ है, वह परम पद का तुहिन बोध है, वह हिमालय के हृदय का 'ग्लेशियर' अर्थात् हिमवाह है। जब हिमवाह गलता है तभी बहते नीर वाली नदी में जीवन संचार होता है। जब उत्तर दिशा में तुषार पड़ती है तो वही राशिभूत होकर हिमवाह का रूप धारण करती है। जब हिमवाह पिघलता है तो नदी जीवन पाती है, अन्यथा उसका रूपान्तर मृतशय्या में हो जाता है। हिमालय दूर है, हिमवाह नजरों से ओझल है, पर जानने वाले जानते हैं कि यह तषातोषक अमृत वारि जो गांव नगर की प्यास बुझाता हुआ सागर-संगम तक जा रहा है, हिमालय का पिघला हुआ हृदय ही है। यदि यह हृदय-कपाट बद्ध या अवरुद्ध हो जाए तो नदी बेमौत मारी जाएगी। ऐसा कई बार हुआ है। एक दिन था जब सरस्वती नदी हरियाणा अंचल से बहती हुई सिंध में जाकर सतलज में मिलती थी। परन्तु बाद में उसको पोषित करने वाले ग्लेशियरों का मुख भिन्न दिशा में हो गया, वे सरस्वती से विमुख होकर यमुना में ढल गए, आज भी यमुना की ओर ही वे जल-दान प्रेरित कर रहे हैं। फलत: यमुना लबालब हो गई सरस्वती की मृत्यु हो गई [आज की यमुना में ही सरस्वती का जल प्रवाहित है। पर साधारण मनुष्य की भूगोल की इतनी बारीक़ जानकारी नहीं। अत: धार्मिक दृष्टि से त्रिवेणी संगम पर एक कल्पित अंत: सलिला का प्रतीक सरस्वती कूप बना दिया गया]। वस्तुत: सरस्वती का जल अब भी हम पा रहे हैं परन्तु इस जल का अब गोत्रनाम 'यमुना जल' है··· हिमवाह के अतिरिक्त नदी के बहते नीर का दूसरा स्रोत है परम व्योम में विचरण करने वाले मेघ। पर बरसाती नदियों के लिए ही। बड़ी नदियों का जल स्रोत तो हिमवाह ही है। तो कहने का तात्पर्य यह है कि संस्कृत 'कूप जल' नहीं, भाषा और संस्कार दोनों की दृष्टि से यह हमारे बोली और जीवन के प्रवाहमान रूपों के लिए व्योम-मेघ या हिमवाह स्वरूप है। हिन्दुस्तानी आकाश में मेघ हैं, हिन्दुस्तानी हिमालय का हृदय निरन्तर गल रहा है, इसी से हिन्दुस्तानी जल धाराओं में मीठा बहता पानी निरन्तर सुलभ है। इसी तरह देखें तो कहना पड़ेगा कि संस्कृत एक प्राणवान स्रोत के रूप में भाषा-संस्कृति-आचार-विचार हर दृष्टि से अस्तित्वमान है। इसी से 'यूनान, मिश्र, रोमां के मिट जाने पर भी हम नहीं मिटे हैं'। हमारा अस्तित्व कायम है।

यों कबीर की बात का जो पाजिटिव (हां-धर्मी) अर्थ है उसे मैं शतप्रतिशत मानता हूं कि लेखन में बोलचाल की भाषा का प्रयोग लेखन को स्वस्थ और सबल रखता है। एक उचित संदर्भ में प्रयुक्त होने पर यह बात बिल्कुल सही है। परन्तु जब इसी बात का उपयोग हिन्दी को जड़मूल से छिन्न (रूटलेस) करने के लिए बदनीयती से किया जाता है तो बात आपत्तिजनक हो जाती है। संदर्भ बदल देने से किसी भी बात का स्वाद और प्रहार भिन्न हो सकता है।

चित्र समाचार

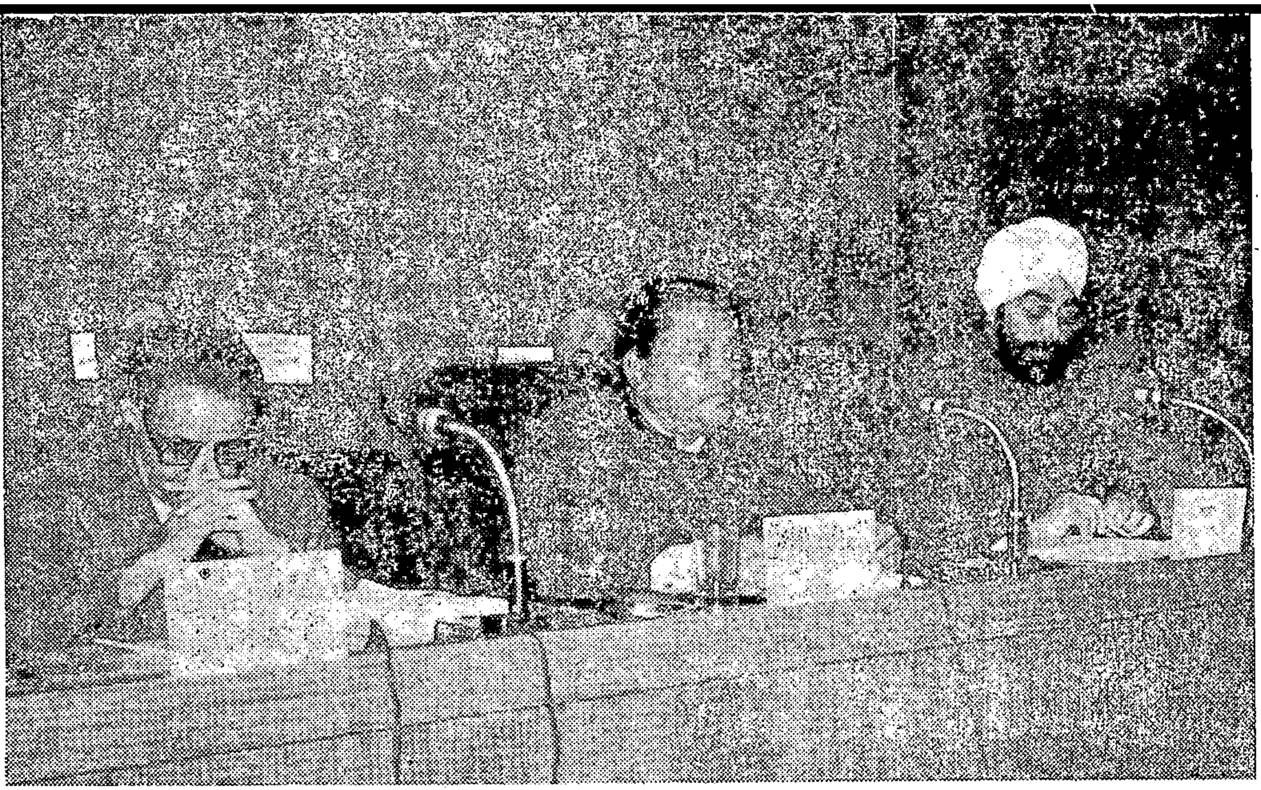

गृह मंत्रालय की हिन्दी सलाहकार समिति की 29 जनवरी, 1982 की बैठक में गृह मंत्री ज्ञानी जैल सिंह (अब भारत के राष्ट्रपति), गृह राज्य मंत्री श्री निहार रंजन लस्कर तथा गृह सचिव श्री टी० एन० चतुर्वेदी । सबसे दाएं दिखाई पड़ रहे हैं गृह राज्य मंत्री श्री वेंकट सुब्बय्या ।

वायु सेना कार्यालय, कानपुर में हिन्दी गोष्ठी में भाग लेते हुए ग्रुप कैप्टन श्री टी० के० शेषाचारी, श्री एम० चटर्जी, राजभाषा विभाग के संयुक्त सचिव श्री हर्षवदन गोस्वामी तथा डॉ० सूरज पाल शर्मा आदि ।

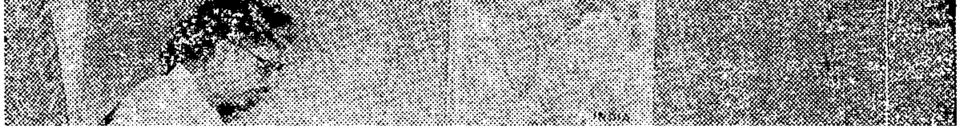

पोर्ट ब्लेयर नगर राज भाषा

सूचना और प्रसारण मंत्रालय की हिन्दी सलाहकार समिति की बैठक को अध्यक्षता करते हुए सूचना और प्रसारण मंत्री श्री वसन्त साठे । साथ में उप मंत्री कुमारी कुमुद बेन जोशी तथा अन्य अधिकारीगण ।

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, हैदराबाद के उद्घाटन समारोह में श्री जयनारायण तिवारी तथा अन्य अधिकारीगण।

आयकर विभाग, दिल्ली द्वारा आयोजित हिन्दी समारोह में बांए से—श्री एन० एस० राघवन, (आयकर आयुक्त–1) श्री जगदीश चन्द्र, (अध्यक्ष प्रत्यक्ष कर बोर्ड) श्री जी० डी० टंडन, श्री वासिक अली खान, श्री एस० टी० त्रिमूलाचारी (तीनों बोर्ड के सदस्य) और श्री प्रशांत कुमार मित्र (आयकर आयुक्त–2)।

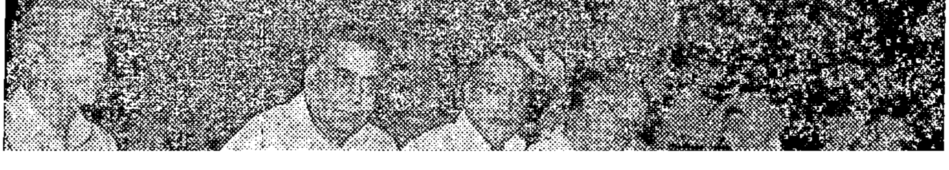

दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, मद्रास के 44वें पदवीदान समारोह में दीक्षांत भाषण देते हुए योजना मंत्री श्री शंकरराव चह्वाण तथा साथ में हैं वहां के गणमान्य व्यक्ति ।

राष्ट्रीय पुलिस अकादमी, हैदराबाद में भाषा प्रयोगशाला का उद्घाटन करते हुए श्री टी० एन० चतुर्वेदी, गृह सचिव (बीच में), अकादमी निदेशक श्री बी० के० राय तथा अन्य ।

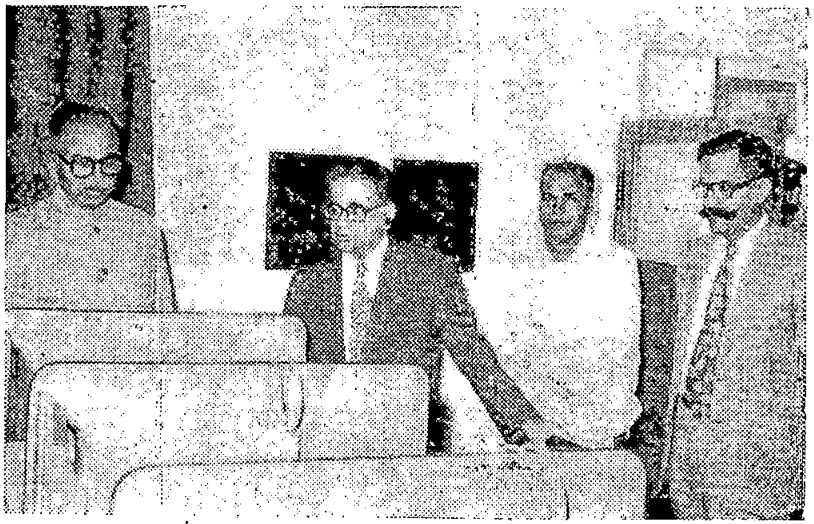

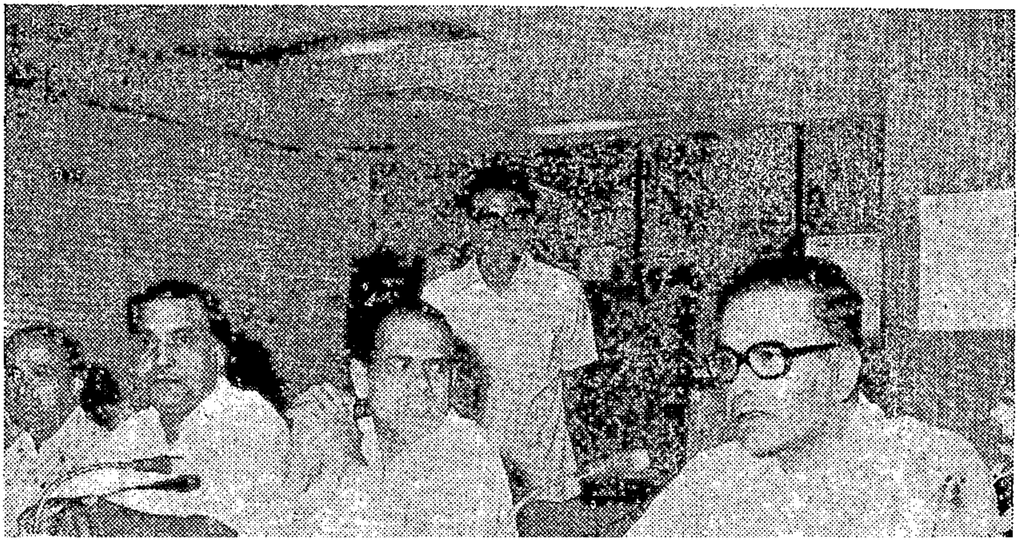

मौसम विज्ञान विभाग में हिन्दी गोष्ठी के अवसर पर महानिदेशक डॉ० पी० के० दास तथा अपर महानिदेशक श्री एस० के० दास एवं अधिकारीगण ।

बम्बई में संपन्न रिजर्व बैंक राजभाषा शील्ड वितरण समारोह में मुख्य अतिथि श्री आई० जी० पटेल (रिजर्व बैंक के गवर्नर) बैंक आफ महाराष्ट्र के अध्यक्ष एवं प्रबन्ध निदेशक डॉ० मो० वा० पटवर्धन को शील्ड प्रदान करते हुए।

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, जबलपुर की बैठक को संबोधित करते हुए श्री जयनारायण तिवारी। साथ में समिति के अन्य सदस्य एवं अधिकारी बैठे हैं।

दक्षिण एशियाई भाषाओं और भाषा वैज्ञानिकों के मैसूर में आयोजित तृतीय अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन के अवसर पर (दायें से) डॉ० एन० वी० व्यास, भाषा निदेशक, गुजरात सरकार, डॉ० आर० एन० श्रीवास्तव, विभागाध्यक्ष, भाषा विज्ञान दिल्ली विश्वविद्यालय, श्री राजमणि तिवारी, वरिष्ठ अनु-संधान अधिकारी एवं सम्पादक,

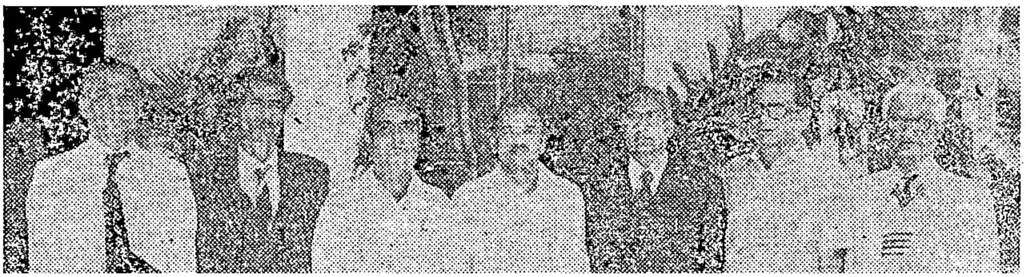

जब 'भाषा बहता नीर' का उपयोग कूट तर्क के लिए फ़िराक़ गोरखपुरी या कुछ और नए लोग भी (जो खुद तो वैसी ही भाषा लिखते हैं जैसे हम और आप) करते हैं तब वे इस बात को एक दुराग्रह के रूप में परिणत कर देते हैं। अतः कबीर की बातों का केवल सत्यग्राही-अर्थ ही मुझे मंजूर है, चाहे यह बात हो या कोई और बात। स्वयं कबीर ने संस्कृत का उपयोग किया है अपनी भाषा में। कबीर बहुत बड़े आदमी हैं। उनके खिलाफ कुछ कहना छोटे मुंह बड़ी बात जैसी हिमाक़त होगी। परन्तु कबीर भी कहीं न कहीं जाकर 'आम आदमी' ही ठहरते हैं और "संस्कृत भाषा कूप जल" वाली बात उसी 'आम आदमी' की खीझ है जबकि दूसरा वाक्यांश खीझ नहीं एक सूझ है'। मैं भी मानता हूं कि भाषा बहता नीर है, भाषा मरुत-प्राण है, खुले मैदान की ताज़ी हवा है भाषा चिड़ियों के कण्ठ से निकला 'राम-राम के पहर' में सबेरे का कलरोर है, पशुओं के कण्ठ से रंभाता हुआ आवाहन है, उनका हुंकार है, लोलुप श्वापदों के कण्ठ से निकला महातामसी गर्जन भी है। भाषा बच्चे की तोतली बोली भी है, मां की वात्सल्य भरी सांसें भी हैं, विरह-कातर शोक उच्छ्वास भी है और मुदितचक्षु सुख के क्षणों का मौन-मधु भी है, बज्र की कड़क से लेकर शब्दहीन मौन तक के सारे सहज स्वाभाविक व्यापारों को भाषा अपने स्वभाव में धारण करके चलती है। इसी भाषा को वाक्-रूपा कामधेनु या भगवान मान कर वंदित किया है।

"देवी वाचमजयन्त देवाः तां विश्वरूपा पशवो वदन्ति" (अथर्व शीर्ष)। इसी बात को कबीर आदि-भूत- 'जल' के बिम्ब का आश्रय लेकर कहते हैं 'भाषा बहता नीर' और यह सर्वथा युक्ति पूर्ण बात है। परन्तु किसी भी सार्वभौम सत्य की तह में तह होती है। अत: क्रयविक्रय हाट-बाजार एवं व्यावसायिक आवश्यकताओं से बाहर आकर जब हम साहित्यसर्जना के स्तर पर आते हैं इस सार्वभौम सत्य 'भाषा बहता नीर' के सारे अन्तर्निहित पटलों को खूब समझ कर ही हमें इसे स्वीकार करना चाहिए। मैंने कबीर के इस भाषा सिद्धांत को अपने लेख में इसके 'सतही अर्थ' में नहीं बल्कि 'सर्वांग अर्थ' में ही स्वीकृत किया है। मैंने अपने लेखन में न केवल बाजारू हिन्दी बल्कि भोजपुरी से भी जो मेरी अपनी बोली है, शब्द, मुहावरे, भंगिमाओं की अभिव्यक्ति को मांग के अनुसार बेहिचक ग्रहण किया है। मैंने पूर्वी यू०पी० यानी गंगातीरी काशिका क्षेत्र की लोक संस्कृति को केन्द्रित करके एक पुस्तक लिखी है 'निषाद बांसुरी'। इस किताब में मैंने भारतवर्ष की पुनर्व्याख्या करने की चेष्टा की है आर्येतर तत्वों पर जोर देकर। लोक संस्कृति के विभिन्न दिकों को प्रस्तुत करते समय गाँव देहात की शब्दावली का मैंने बेहिचक प्रयोग किया है। कबूतरबाजी, अड्डा बाजी, चोरी, नौकायन के शब्दों से लेकर गांव देहात के अनेक मुहावरे उसमें आ गए हैं। उसमें ही नहीं, बल्कि सम्पूर्ण लेखन में मैंने शब्द सम्पदा को महत्व दिया है। जो शब्द जन-समाज के कण्ठ से निकला है वह कभी भी, कहीं भी, 'अपवित्र' नहीं। अपवित्र या अश्लील स्वयं शब्द नहीं होते, बल्कि संदर्भ या उद्देश्य अपवित्र या अश्लील होते हैं। ऐसा मैं मान कर चलता हूं।

अतः "भाषा बहता नीर" एक सही कथन होने के साथ-साथ सतही नहीं, गम्भीर कथन है। इस कथन की गम्भीरता पर जरा विचार करें। क्या यह "बहता नीर" महज आज का यानी 1981 का ही 'बहता नीर' है। इतनी स्थूल और सतही दृष्टि से सोचना कबीर के एक महावाक्य को पुनः लंगड़ा और बौना कर देना होगा। "भाषा बहता नीर" है तो इसमें किसी भी युग, किसी भी क्षेत्र का शब्द अन्तर्भुक्त हो सकता है। शर्त यही है कि (1) अभिव्यक्ति की मांग उस शब्द की हो (2) वह शब्द वाक्य में सहजता से खप जाए, देवता के प्रसाद की पवित्र थाली में रखा हुआ 'आमलेट' जैसा विश्री न लगे (3) अन्य प्रयत्न के बाद समझ में आ जाए। यों तीसरी शर्त का क्षेत्र भी संदर्भ के अनुसार निर्धारित हो सकेगा। हर जगह 'दो आने तम्बाकू दो' जैसी सरल बोधगम्य अभिव्यक्ति से काम नहीं चल सकता। परन्तु हमारा आदर्श सहजता और बोधगम्यता ही होना चाहिए। बिना जरूरत भाषा को दुरूह करना कबीर के इस महावाक्य की प्रकृति के प्रतिकूल होगा। पर जहां जरूरत हो, वहां भाषा के समग्र-प्रवाह से सर्वकालव्यापी प्रवाह से शब्द लेने का हमारा अधिकार होना चाहिए। जो हमें इस अधिकार से वंचित करने के लिए कबीर की इस बात का सीमित बौना अर्थ लगाते हैं वे किसी कूट मतलब से ऐसा कर रहे हैं। सर्वदा 1981 के बाजार में चालू शब्दों से ही हमारा काम नहीं चल सकता। लेखक फिल्मकार नहीं वह शिक्षक भी हैं। उसका कर्त्तव्य जनमानस को ज्यादा से ज्यादा समृद्ध करना है। और इस दृष्टि से वह नए शब्द अपने पाठकों को सिखाएगा ही। उसका दायित्व फिल्म निर्माता के व्यवसायी दायित्व से बड़ा है।

कहने का तात्पर्य यह कि भाषा को अकारण दुरूह या कठिन नहीं बनाना चाहिए। परन्तु सकारण ऐसा करने में कोई दोष नहीं। गोसाईं जी जब दार्शनिक विवेचन करने बैठते हैं तो उसी 'मानस' को भाषा में ऐसी पंक्तियां भी लिखते हैं "होई घुणाक्षर न्याय जिमि पुनि प्रत्यूह अनेक।" या कबीर को खुद जरूरत पड़ती है तो योगशास्त्र और वेदान्त की शब्दावली ग्रहण करते हैं। हर जगह लुकाठी हाथ में लिए सरे बाजार खड़े ही नहीं मिलते। मानसरोवर में डूबकर मोती ढूंढते समय की भाषा बाजार वाली भाषा नहीं। एक आधुनिक गद्य से उदाहरण दूं और क्षमा किया जाए कि अपने ही लेखन से उद्धृत कर रहा हूं। "मैंने नदी की ओर अनिमेष लोचन दृष्टि से देखा।" यहां पर 'अनिमेष और लोचन' को क्षमा कर देने पर भी पाठक पूछेगा यह 'अनिमेष' लोचन दृष्टि क्यों? क्या "अनिमेष लोचनों से देखा" पर्याप्त नहीं होता। मेरी समझ में पर्याप्त नहीं होता। पहली बात तो मुझे यह लगी कि

वाक्य की अन्तर्निहित लय एक और शब्द मांगती है अत: 'दृष्टि' शब्द मैंने भर दिया । दूसरी बात यह है कि 'लोचनों' अर्थात् दो लोचनों से देखना । यह दृष्टि के घनीभूत एकीकरण का बोध नहीं देती जो अनिमेषलोचन दृष्टि देती है दोनों आंखों का संयुक्त बल लेकर उपस्थित 'एक' दृष्टि के रूप में । परन्तु यह दोनों कारण उतने सटीक नहीं भी लिए जा सकते हैं । पर तीसरा और मूल कारण ऐसा लिखने का यह है कि 'अनिमेष लोचन-दृष्टि' बौद्ध साहित्य में उस दृष्टि का नाम है जिससे बुद्ध ने पहली बार बोधि वृक्ष को निहारा था । थके, हारे, निराश गौतम बुद्ध ने जब महाअरण्य के बोधिवृक्ष पर पहली नजर डाली तो लगा कि यही वृक्ष उनका परम आश्रय है यहीं पर परम विराम है, और परम शांति है और उसे वे निर्निमेष निहारने लगे । "मैंने नदी की ओर अनिमेष-लोचन-दृष्टि से देखा" में ऐसे ही विशिष्ट रूप से निहारने की क्रिया का संकेत है, नदी को परम आश्रय, परम प्रियतमा, परम देवता के रूप में ग्रहण करते हुए । इतना बड़ा भाव ही वहाँ अव्यक्त रह जाता यदि मैं लिखता "मैंने अनिमेष लोचनों से देखा" या "मैंने एक टक नदी की ओर देखना शुरू किया" । यों बिना इस गूढ़ अर्थ को जाने भी वाक्य को समझा जा सकता है । इसलिए मैंने इस बिम्ब का प्रयोग करने में कोई हानि नहीं देखी--आखिर ये शब्द तो हिन्दी के 'बहता नीर' के ही अंग हैं कोई 'जर्फरी तुफरी' तो नहीं जो कोई न समझे और निबन्धकार का काम होता है पाठक के मानसिक बौद्धिक क्षितिज का विस्तार । वह फिल्म प्रोड्यूसर नहीं कि पाठक की बुद्धि-क्षमता की पूंछ को पकड़े-पकड़े चले। साहित्यकार पाठक की उंगली पकड़ कर नहीं चलता, वल्कि पाठक साहित्यकार की उंगली पकड़कर चलता है । सनातन से यही संबंध रहा है आज जनवादीयुग का सस्ता नारा उठाकर इस संबंध को परिवर्तित नहीं किया जा सकता ।

'बाढ़ें कथा पार नहि लहऊं ।' अत: अन्त में मुझे यही कहना है **कि हिन्दी की भूमिका आज बहुत बड़ी हो गई है। उसे आज वही काम करना है जो कभी संस्कृत करती थी और आज जिसे एक खंडित रूप में ही सही अंग्रेजी कर रही है उच्च शिक्षित वर्ग के मध्य। उसे सम्पूर्ण ज्ञान विज्ञान का वाहन बनना है उसके अन्दर वैसी आन्तरिक ऋद्धि-सिद्धि लानी है जो भारत जैसे महान और विशाल देश की राष्ट्रभाषा के लिए अपेक्षित है ।** अत : 'बहता नीर' का चालू सतही अर्थ न लेकर उसे एक व्यापक परिप्रेक्ष्य में देखना होगा, जिसका आभास ऊपर दिया जा चुका है । सधुक्कड़ी और चुनाव-भाषणों से ज्यादा वृहत्तर दायित्व है इस हिन्दी का । यह स्मरण रखते हुए हम भाषा के संबंध में चिन्तन करें तो अच्छा होगा । जिसको हम 'बहता नीर' मानकर ग्रहण कर रहे हैं वह वस्तुत : हिमालय का दान है, हिमालय के पुत्र हिमवाहों का दान है और अनन्तशोषी समुद्र को वाष्प-लक्ष्मी का दान है। नदी तो मां ही है अत: उसको नमोनम: पर साथ ही 'दिशिदेवतात्मा हिमालय को नमोनम:, उसके पुत्र बलशाली हिमवाहों को नमोनम:, और सिन्धु एवं व्योम को भी नमोनम: साथ ही नदी की अनेक धाराओं, उपधाराओं और सहायक नदियों, रामगंगा-गोमती-बेसी-मंघई-तमसा और सरजू को नमोनम: '। अर्थात् हिन्दी की आंचलिक बोलियों को, भोजपुरी, मगही, अवधी, छत्तीसगढ़ी, ब्रजभाषा आदि आदि को हम इस 'बहता नीर' का अंग ही मानते हैं । पीका, सीका, बेहन, गाछ, पुलों, गुदारा (भा भिनुसार गुदारा लागा) जैसे शब्द खड़ी बोली के पास कहां हैं । धरहर, अदहन, पगहा जैसे भोजपुरी शब्दों का प्रयोग मैंने स्वयं किया है। 'पगहा' अर्थात् जो 'चरण' (गति) को ही ध्वस्त कर दें, अपहृत कर लें यानी पशु के बांधने की रस्सी । ऐसे अभिव्यक्तिपूर्ण शब्द खड़ी बोली में मिलने दुर्लभ हैं । हम न केवल आंचलिक बोलियों बल्कि अगल-बगल की भाषाओं से यथा पंजाबी, राजस्थानी, गुजराती, असमिया, बंगला से भी शब्द और मुहावरे ले सकते हैं । 'दूर के ढोल सुहावने' के साथ साथ असमिया 'पहाड़ दूर से ही सुन्दर लगता है' भी मजे में चल सकता है ।

संस्कृत भाषा के समृद्ध तथा अभिव्यक्ति-क्षम होने का रहस्य है यही भूमावृत्ति अर्थात् शब्द सम्पदा को चारों दिशाओं से आहरण करने की वृत्ति । यही कारण है कि संस्कृत में एक शब्द के अनेक पर्याय हैं । ये सारे पर्याय मूल रूप से विभिन्न भारतीय अंचलों से प्राप्त उस शब्द के लिए क्षेत्रीय प्रतिशब्द मात्र हैं । इस संदर्भ में अपनी एक आपबीती सुनाऊं । कुछ वर्ष पूर्व मद्रास की ओर यात्रा कर रहा था हावड़ा-पुरी-मार्ग से । गाड़ी उड़ीसा के दक्षिणी भागों में चल रही थी कि एक छोटे से स्टेशन पर (नाम स्मरण नहीं) एक आदमी खिड़की के पास से चिल्लाता हुआ गुजरा "कडली, कडली ।" मेरी समझ में नहीं आया कि यह 'कडली' क्या बला है ? या "भाषा बहता नीर" की शैली में कहें तो मेरे भोजपुरी मन ने मुझसे प्रश्न किया "ई" 'सारे' का कह रहा है ? 'टूटी फूटी' बंगला में पूछा "कडली की जिनिस ? प्रत्युत्तर में मेरी नाक के सामने पके केले की घौर झुलाकर दिखाने लगा, "कडली कडली"। वाद में पता चला कि वह कह रहा है —"कदली" पर आकर्षण के लिए उच्चारण को अपनी ओर से रच रहा है 'कडली' के रूप में । तब मैंने एक 'शिक्षित उड़िया सज्जन' से कहा "उच्च हिन्दी में केले के लिए 'कदली' चलता है" पर उसने कहा "सर' दिस इज दि पीपुल्स-वर्ड हियर" (महाशय, यहां यह सामान्य बोली का शब्द है) । इसका अर्थ हुआ कि संस्कृत में जो शब्द पर्यायवाची रूप में आए हैं वे सब कहीं न कहीं की जनभाषा के सामान्य शब्द ही हैं। संस्कृत में जब परम्परा रही है तो वह उसकी उत्तराधिकारिणी हिन्दी में भी चलनी ही चाहिए । प्रयोग की रगड़ खाते-खाते 25 या 50 वर्ष में शब्द परिचित हो जायेंगे । तात्पर्य यह है कि अभिधा-लक्षणा-व्यंजना की जरूरतों के अनुसार हिन्दी भाषा को विकसित करने के लिए "भाषा

बहता नीर" के साथ-साथ "भूमावृत्ति" को भी समान महत्व दिया जाए। सरलता यदि दरिद्रता का पर्याय हो जाए तो वह हमें मंजूर नहीं। सरलता और समृद्धि दोनों चाहिएं। □□□

(उपर्युक्त लेख में "भाषा बहता नीर" के संबंध में बहुत ही खोजपूर्ण विचार प्रकट किए गए हैं। इससे पाठकों को इस विषय की उपयोगिता का बोध होगा। इस क्रम में नीचे सहज और स्वाभाविक भाषा के तीन उदाहरण प्रस्तुत किए जा रहे हैं—संपादक)

(1) मोतियों टंके धूपछाहीं रंग के लहराते घाघरे-चोली और ओढ़नी में हीरे, पन्नों और मानिकों से गढ़ी हुई मानवती मोहिनी के चेहरे पर यह सुनकर सुहाग चढ़ गया। दर्प-भरी मुस्कराहट, रीझ-भरी आंखें और मद-भरी लचकती इठलाती काया ज्यों-ज्यों तुलसी की ओर बढ़ती चली त्यों-त्यों तुलसी का मनोवेग बढ़ने लगा। उन्हें ऐसा लगता था मानों मोहिनी उनकी सांस के फर्श पर पैर रखती हुई चली आ रही है। एकटक, सपनों-भरी नजर से वह मोहिनी का रूप पीने लगे। दरवाजे पर अम्मां आ खड़ी हुई। उसने वहीं से कुछ ऊंची और अकड़दार आवाज में कहा "कान खोलकर सुन लो महाराज, जवानी का यह मद उतर जाने के बाद फिर यह मत कहना कि वेश्या ने तुम्हें ठग लिया। मैं विश्वनाथ बाबा की साक्षी में यह बात तुमसे कहे जाती हूं। और तू भी सुन ले मोहिनी, मेरा अन्तकाल अब जरूर पास आ चला है, पर जल्लाद के हाथों अपना सिर कटाकर नहीं मरूंगी। दो रोटियों के लिए गंगा जी के किसी भी घाट की सीढ़ियां मेरी अन्नपूर्णा बन जाएंगी। मैं तेरा घर छोड़कर जाती हूं। कहकर अम्मा तेजी से बाहर निकल गई।

—'मानस का राजहंस' (अमृत लाल नागर) पृष्ठ 152–153

(2) पानीपत का युद्ध समाप्त हुआ। रात में हरम के पड़ाव पर समाचार आया कि मुगल सेना जीत गई। हेमचन्द्र विक्रमादित्य पकड़ा और मारा गया। दासों और बन्दियों के यमराज अब्दुल्ला को पानीपत से आए हुए किसी व्यक्ति ने हेमू की लड़ाई का वर्णन किया। उससे खबरें ही खबरें फैल गई। हेमू अपने हवाई नामक हाथी पर सवार हो सेना के मध्य खड़ा दूरबीन से देख रहा था। उसने हेमू को देखा। एकाएक सेना को ललकार कर खानेजमा ने उस पर हमला किया। हेमू हाथियों की दूसरी पांत में था। उसके चारों ओर बहादुर पठानों का झुण्ड था। खानेजमा ने फिर घेरे को ही तोड़ने का निश्चय किया। तुर्क तीरों की बौछार करते हुए बढ़े। हाथियों के हमले को हौसले और हिम्मत से रोका। वे तयार होकर आगे बढ़े। जब देखा कि घोड़े हाथियों से बिदकते हैं तो कूद पड़े और तलवारें खींचकर शत्रु की पंक्तियों में घुस गए। उन्होंने बाणों की बौछार से हाथियों के मुंह फेर दिए और उन काले पहाड़ों को मिट्टी का ढेर सा बना दिया। अद्भुत घमासान रन पड़ा। हेमू की बहादुरी तारीफ के लायक थी। हौदे के बीच में नंगे सिर खड़ा वह सेना की हिम्मत बढ़ा रहा था।

वही पृष्ठ—167

(3) भाई बहनों की ओर से निश्चिंत होकर उसने बिहार को अन्तिम नमस्कार किया और जीविका की तलाश में कलकत्ता पहुंचा। नाते के कई मामा वहां पर रहते थे। उपेन्द्रनाथ से उसकी कुछ घनिष्ठता भी थी। उसे भी साहित्य में अनुराग था। एक दूसरे मामा लालमोहन यहां वकालत करते थे। भागलपुर की कचहरी के मुकदमों की अपील कलकत्ता हाई कोर्ट में ही होती थी, लालमोहन वहीं काम करते थे। निश्चय हुआ कि इन्हीं के पास रहकर नौकरी की तलाश को जाए। एक वयस्क व्यक्ति के लिए खर्च-पते के वास्ते अभिभावकों के आगे हाथ फैलाने में कुण्ठा होती है। इस कुण्ठा से मुक्ति पाने के लिए शरत हिन्दी की अर्जियों का अंग्रेजी में अनुवाद करने लगा। उसके बदले में उसे खर्च के लिए कुछ पैसे मिल जाते थे। किन्तु आइन-अदालत की भाषा से उसका कोई विशेष परिचय नहीं था, इसलिए इस काम में उसका मन अधिक दिन नहीं लग सकता था। इसके अतिरिक्त उसे घर की साग-सब्जी भी लानी पड़ती थी। साधारण नौकरों जैसे और भी काम करने पड़ते थे। अपमान भी कम नहीं होता था। घर के अन्दर जाते समय भागलपुर की तरह यहां भी उसे खांसकर जाना होता था। एक बार वह मामा के ब्रुश से बाल ठीक कर रहा था कि अचानक वे वहां आ गए। उनके क्रोध की कोई सीमा नहीं थी। उन्होंने एक बार शरत की ओर देखा और फिर उस ब्रुश को उठाकर बाहर फेंक दिया। मानों उन्होंने कहा, "जिस ब्रुश को तुम इस्तेमाल कर चुके हो वह मेरे योग्य नहीं रहा"।

—'आवारा मसीहा' : विष्णु प्रभाकर पृष्ठ–91

□□□

हिन्दी सलाहकार समितियों की बैठकें—कुछ प्रमुख निर्णय

(1) गृह मंत्रालय

गृह मंत्रालय की हिन्दी सलाहकार समिति की 23वीं बैठक 29 जनवरी 1982 को विज्ञान भवन, नई दिल्ली में हुई जिसमें निम्नलिखित सदस्य उपस्थित थे :—

1. ज्ञानी ज़ैल सिंह, गृह मंत्री — अध्यक्ष
2. श्री पी० वेंकटसुब्बय्या, गृह मंत्रालय में राज्य मंत्री — उपाध्यक्ष
3. श्री निहार रंजन लस्कर, गृह मंत्रालय में राज्य मंत्री — ,,
4. श्री वीरबल, संसद सदस्य — सदस्य
5. चौ० राम सेवक, संसद सदस्य — ,,
6. श्री श्रीकान्त वर्मा, संसद सदस्य — ,,
7. श्री चिरंजी लाल शर्मा, संसद सदस्य — ,,
8. प्रो० रूप चन्द पाल, संसद सदस्य — ,,
9. श्री गंगा शरण सिंह — ,,
10. श्री जसवंत सिंह चौहान — ,,
11. श्री निरंजन वर्मा — ,,
12. डा० प्रभाकर माचवे — ,,
13. डा० पी० जे० अलेग्जेंडर — ,,
14. डा० वाल गोविन्द मिश्र — ,,
15. डा० मलिक मोहम्मद — ,,
16. श्री आर० एस० पांडेय — ,,
17. श्री वसन्त कुमार जी० पारेख — ,,
18. श्री वाल्मीकि चौधरी — ,,
19. डा० विद्यानिवास मिश्र — ,,
20. श्री एस० एस० आर० राजू — ,,
21. श्री हिमांशु जोशी — ,,
22. श्री त्रिलोकी नाथ चतुर्वेदी, गृह सचिव — ,,
23. श्री अशोक चन्द्र बंद्योपाध्याय, सचिव, कार्मिक तथा प्रशासनिक सुधार विभाग — ,,
24. श्री जय नारायण तिवारी, सचिव, राजभाषा विभाग तथा भारत सरकार के हिंदी सलाहकार — सदस्य
25. श्री एस० नारायणस्वामी, अपर सचिव (एन०), गृह मंत्रालय — ,,
26. श्री एम० नटराजन, संयुक्त सचिव (पुलिस), गृह मंत्रालय — ,,
27. श्री पी० एन० अब्बी, संयुक्त सचिव (वी०), कार्मिक तथा प्रशासनिक सुधार विभाग — ,,
28. श्री के० एन० भनोट, संयुक्त सचिव (प्रशा०), गृह मंत्रालय — ,,
29. श्री अशोक कुमार वर्मा, उप सचिव (प्रशा०), गृह मंत्रालय — सदस्य-सचिव

बैठक की कार्यवाही आरम्भ करते हुए अध्यक्ष महोदय ने समिति के सदस्य श्री भगवती चरण वर्मा (जो कि संसद सदस्य भी थे) के निधन पर शोक प्रकट किया। हिन्दी के प्रति उनकी सेवाओं का उल्लेख करते हुए अध्यक्ष महोदय ने उन्हें भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित की। समिति ने उनकी स्मृति में दो मिनट का मौन रखा।

2. नियमित कार्य-सूची पर विचार करने से पहले अध्यक्ष महोदय ने राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, द्वारा प्रकाशित "हिन्दी के प्रयोग संबंधी आदेशों का संकलन" का विमोचन किया। सदस्यों ने इस संकलन को उपयोगी बताते हुए कहा कि इसे अद्यतन बनाया जाना चाहिए।

अन्य विषयों पर हुई चर्चा का विवरण इस प्रकार है :—

विषय संख्या 1 : **समिति की 10 जुलाई, 1981 को हुई पिछली बैठक की सिफारिशों पर की गई कार्रवाई**

समिति को सभी मदों पर की गई कार्रवाई की सूचना दी गई। जहां तक नकद पुरस्कार योजना का संबंध है, राजभाषा विभाग के सचिव ने बताया कि वित्त मंत्रालय ने सिद्धान्त रूप में यह स्वीकार कर लिया है कि जो टाइपिस्ट और स्टनोग्राफर हिन्दी और अंग्रेजी दोनों में काम कर सकते हैं, उन्हें विशेष वेतन देकर प्रोत्साहित किया जाना चाहिए।

हिन्दी में काम करने वाले अन्य कर्मचारियों को विशेष वेतन देने संबंधी प्रस्ताव अभी भी वित्त मंत्रालय के विचाराधीन है।

विषय संख्या 2 : **1978 में राज्य सभा द्वारा पारित संविधान के प्राधिकृत हिन्दी अनुवाद के प्रकाशन के लिए किए गए उपायों पर विचार**

यह स्पष्ट किया गया कि विधि मंत्रालय और कुछ अन्य प्रमुख विधिवेत्ताओं से इस संबंध में जो सलाह प्राप्त हुई है उसके अनुसार संविधान के हिन्दी रूपान्तर को संविधान का प्राधिकृत पाठ नहीं माना जा सकता क्योंकि यह उस समय अस्तित्व में नहीं था जब संविधान सभा में संविधान पर धारावार चर्चा करके इसे पारित किया गया था। उस समय केवल अंग्रेजी पाठ ही उपलब्ध था, इसलिए केवल उस पाठ को ही प्राधिकृत पाठ समझा जाना चाहिए, चाहे हिन्दी पाठ 24 जनवरी, 1950 को संविधान सभा के सदस्यों द्वारा संविधान के हस्ताक्षर समारोह के समय उपलब्ध हो गया था।

तथापि सदस्यों का विचार था कि संविधान के प्राधिकृत अंग्रेजी पाठ के साथ-साथ उसका प्राधिकृत हिन्दी पाठ भी होना चाहिए और यह उचित नहीं होगा कि हमारा संविधान, जो कि देश का बुनियादी कानून है, केवल अंग्रेजी में ही उपलब्ध हो। सदस्यों का यह विचार था कि चूंकि संविधान सभा के अध्यक्ष और सदस्यों ने हिन्दी पाठ पर अपने हस्ताक्षर किये थे, जो कि हस्ताक्षर समारोह के समय उपलब्ध हो गया था, इसलिए इस बात का कोई कारण नहीं है कि प्राधिकृत हिन्दी पाठ को अब क्यों न स्वीकार किया जाए। सदस्यों ने यह मत भी प्रकट किया कि यदि आवश्यक हो तो इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए कोई उपयुक्त कानून, यहां तक कि सांविधानिक संशोधन भी, संसद में लाया जाना चाहिए।

मामले पर विस्तार से चर्चा हुई और समिति इस बात पर सहमत हुई कि सरकार से यह सिफारिश की जाए कि भारत के संविधान का प्राधिकृत हिन्दी पाठ होना चाहिए और इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए सरकार को पूरी तरह विचार करने के बाद संसद में आवश्यक विधेयक लाना चाहिए।

विषय संख्या 3 : **संघ सेवाओं के लिए हिन्दी के ज्ञान की अनिवार्य आवश्यकता**

इस मद पर चर्चा करते समय सदस्यों ने संसद के दोनों सदनों द्वारा स्वीकृत दिनांक 18 जनवरी, 1968 के संकल्प की ओर विशेष ध्यान दिलाया जिसमें यह कहा गया है कि संघ सेवाओं में भर्ती हेतु उम्मीदवारों के चयन के समय हिन्दी अथवा अंग्रेजी में से एक का ज्ञान अपेक्षित होगा, परन्तु सरकार द्वारा केन्द्रीय सेवाओं की भर्ती के लिए ऐसी परीक्षाएं ली जा रही हैं जिनमें अंग्रेजी का ज्ञान अनिवार्य रखा गया है। कुछ सदस्यों की राय में, अंग्रेजी के ज्ञान की यह अनिवार्यता संसद द्वारा पारित संकल्प के अनुकूल नहीं है। यह भी कहा गया कि यदि अंग्रेजी की अनिवार्यता पर बल दिया जाता है तो केन्द्र सरकार की सेवाओं की भर्ती में, साथ-साथ हिन्दी के ज्ञान की अनिवार्यता भी होनी चाहिए।

राज्य मंत्री श्री पी० वेंकटसुब्बय्या ने बताया कि संसद के दिनांक 18-1-68 के संकल्प में यह स्पष्ट रूप से कहा गया है कि अखिल भारतीय एवं उच्चतर केन्द्रीय सेवाओं की परीक्षाओं के लिए संविधान की आठवीं अनुसूची में सम्मिलित सभी भाषाओं तथा अंग्रेजी को वैकल्पिक माध्यम के रूप में रखने की अनुमति होगी। सरकार ने इन सिफारिशों को स्वीकार किया है और संघ लोक सेवा आयोग से परामर्श करने के बाद, अखिल भारतीय सेवाओं और उच्चतर केन्द्रीय सेवाओं की परीक्षाएं इन सभी भाषाओं में आयोजित करने के उपाय किए गये हैं। इस प्रकार, जहां तक अखिल भारतीय सेवाओं और उच्चतर केन्द्रीय सेवाओं का संबंध है, मामले में संतोषजनक ढंग से कार्रवाई की गई है।

तथापि, सदस्यों ने भर्ती, आदि के लिए अभी भी होने वाली बहुत सी परीक्षाओं में अंग्रेजी के एक पर्चे में बैठने की अनिवार्यता के बारे में आपत्ति जारी रखी और यह कहा कि यह संसदीय संकल्प का उल्लंघन है और साथ ही इससे उन राज्यों के उम्मीदवारों के साथ अन्याय होता है जिन्होंने अपनी शिक्षण संस्थाओं में हिन्दी को शिक्षा के माध्यम के रूप में अपनाया है। अतः सदस्यों ने इस बात पर जोर दिया कि उचित नीति यह होगी कि सभी के लिए अंग्रेजी का पर्चा अनिवार्य करने की बजाय अन्य उम्मीदवारों को अंग्रेजी या हिन्दी के एक पर्चे का विकल्प दे दिया जाए।

बैठक के स्थगित होने तक इस मद पर चर्चा पूरी नहीं हो सकी और यह तय हुआ कि इसे आगे विचार के लिए अगली बैठक में लिया जाए।

× × × ×

(2) उद्योग मंत्रालय

उद्योग मंत्रालय की पुनर्गठित हिन्दी सलाहकार समिति की बैठक माननीय उद्योग मंत्री श्री नारायण दत्त तिवारी की अध्यक्षता में दिनांक 5 मार्च, 1982 को उद्योग भवन, नई दिल्ली में सम्पन्न हुई जिसमें निम्नलिखित सदस्यों ने भाग लिया :—

1. श्री नारायण दत्त तिवारी, उद्योग, इस्पात तथा खान मंत्री — अध्यक्ष
2. डा० चरणजीत चानना उद्योग, राज्य मंत्री — उपाध्यक्ष

3. श्री राम सिंह यादव — सदस्य
संसद सदस्य

4. डा० राम मनोहर त्रिपाठी — ,,
विधायक, महाराष्ट्र विधान परिषद

5. श्री आनंद जैन — ,,
सम्पादक, नव भारत टाइम्स

6. श्री अनिल कुमार अग्रवाल — ,,
सम्पादक, अमर उजाला, आगरा

7. श्री वें० राधाकृष्ण मूर्ति प्रधान सचिव — ,,
दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा

8. श्री हरि बाबू कंसल — ,,
मंत्री, नागरी लिपि परिषद

9. श्री विद्या भास्कर — ,,
वाराणसी

10. श्री शिवेन्द्र मोहन घोष — ,,
सचिव, औद्योगिक विकास विभाग

11. श्री के० एस० राजन, सचिव, — ,,
तकनीकी विकास एवं तकनीकी
विकास के महानिदेशक

12. श्री रमेश नाथ चोपड़ा अपर सचिव, — ,,
औद्योगिक विकास विभाग

13. श्री एम० राजन — ,,
वित्तीय सलाहकार

14. श्रीमती र० तामरजाक्षी — ,,
आर्थिक सलाहकार

15. श्री अरुण घोष अध्यक्ष, — ,,
औद्योगिक लागत एवं मूल्य ब्यूरो

16. श्री सुशील स्वरूप वर्मा — ,,
विकास आयुक्त, लघु उद्योग

17. श्री सुरेन्द्र सिंह — ,,
सीमेंट नियंत्रक

18. श्री शोभन कानूनगो — ,,
संयुक्त सचिव, भारी उद्योग विभाग

19. श्री मुनीश गुप्त — ,,
संयुक्त सचिव, भारी उद्योग विभाग

20. श्री राजमणि तिवारी — ,,
वरिष्ठ अनुसंधान अधिकारी, राजभाषा विभाग

21. श्री रूप कृष्ण टिक्कू — सदस्य-सचिव
संयुक्त सचिव, औद्योगिक विकास विभाग

उद्योग मंत्री जी ने अपने अध्यक्षीय भाषण में सभी सदस्यों का हार्दिक स्वागत किया और बैठक में उपस्थित होने के लिए उनके प्रति आभार प्रकट करते हुए उद्योग मंत्रालय में हिन्दी के प्रयोग की दिशा में किये जा रहे प्रयत्नों के संबंध में यह बताया कि मेरा प्रयत्न मंत्रालय की विभिन्न बैठकों में हिन्दी का अधिकाधिक प्रयोग करने तथा मिली-जुली भाषा बोलने का रहा है जिससे किसी को किसी प्रकार की कठिनाई न होने पाए । **मंत्री महोदय ने मंत्रालय में हिन्दी में नोटिंग एवं ड्राफ्टिंग को प्रोत्साहन देने, हिन्दी में अधिकाधिक पत्र-व्यवहार करने और अपने दैनिक कामकाज में अधिकारियों द्वारा किए जा रहे हिन्दी के प्रयोग का उल्लेख करते हुए बताया कि न केवल मंत्रालय के नियंत्रणाधीन कार्यालयों में ही अपितु सरकारी क्षेत्र के उपक्रमों में भी हिन्दी के प्रयोग को बढ़ावा देने के लिये उपयुक्त निर्देश दिये जा चुके हैं।** मंत्रालय के अधीन कुल मिला कर 53 कार्यालयों में से 42 कार्यालयों में राजभाषा कार्यान्वियन समितियों का गठन किया जा चुका है।

हिन्दी के प्रयोग की दिशा में किये जा रहे उपाय के रूप में मंत्रालय के पुस्तकालय में हिन्दी की पुस्तकों की खरीद के लिए निर्धारित राशि में वृद्धि करना तथा शीघ्र ही सभी लाइसेंस द्विभाषी रूप में जारी करने का भी उल्लेख किया। अंत में उन्होंने बताया कि हिन्दी के उत्तरोत्तर प्रयोग के लिए मंत्रालय के दोनों विभागों के अधिकारी निरंतर प्रयत्नशील हैं और उनके नियंत्रण में सभी प्रतिष्ठानों में भी हिन्दी के प्रयोग को प्रोत्साहन देने के लिए आवश्यक कदम उठाये जा रहे हैं। बैठक के प्रमुख निर्णय इस प्रकार हैं :—

(1) उद्योग लाइसेंस देते समय उद्योगों से यह निश्चय करना कि अपने उत्पादन में वे निर्माण संबंधी उल्लेख राजभाषा में भी करें

सरकारी क्षेत्र के विभिन्न उपक्रमों द्वारा तैयार किये जा रहे उत्पादों पर राजभाषा में भी उल्लेख करने के लिए न केवल इस विभाग द्वारा अपितु राजभाषा विभाग तथा सरकारी उद्यम-ब्यूरो द्वारा भी समय-समय पर निर्देश जारी किये जाते रहे हैं, किन्तु औद्योगिक लाइसेंस देते समय यह शर्त लगा देना कि यह विवरण हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में दिया जाए, कानूनी दृष्टि से उपयुक्त नहीं होगा क्योंकि एक ही उत्पाद देश के विभिन्न भागों में बेचने के लिये भेजा जाता है। इस विषय पर चर्चा के पश्चात् **सर्वसम्मति से यह निर्णय अवश्य लिया गया कि सरकारी क्षेत्र के उद्यमों आदि से यह कहा जाये कि वे अपने उत्पाद पर अंग्रेजी के साथ-साथ कम से कम एक अन्य भारतीय भाषा में भी विवरण दिया करें।**

इस संबंध में यह भी निश्चय किया गया कि वस्तुओं के "ब्रांड नामों" को ज्यों का त्यों रखा जाए जिससे किसी को उसके निश्चित नाम के बारे में भ्रम उत्पन्न न हो।

(2) मंत्रालय के सम्बद्ध/अधीनस्थ कार्यालयों, सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों, स्वायत्त निकायों आदि में हिन्दी के प्रयोग की स्थिति

इस संबंध में श्री हरिबाबू कंसल ने इस बात पर जोर दिया कि मंत्रालय के अधीन सभी सम्बद्ध एवं अधीनस्थ कार्यालयों तथा सार्वजनिक क्षेत्र के उपक्रमों आदि में हिन्दी के प्रयोग की स्थिति का विवरण प्रस्तुत किया जाना चाहिए। साथ ही उन्होंने इस बात का भी उल्लेख किया कि यदि अहिन्दी भाषी क्षेत्रों में स्थित कार्यालयों के बारे में पूरा विवरण उपलब्ध न हो सकता हो तो कम से कम हिन्दी भाषी क्षेत्रों में स्थित कार्यालयों के बारे में यह विवरण उपलब्ध कराया जाना चाहिए। मंत्रालय के अन्तर्गत विभिन्न अधीनस्थ कार्यालयों के अध्यक्षों का ध्यान मंत्री महोदय ने इस ओर आकर्षित किया कि वे अपने-अपने कार्यालयों में हिन्दी के प्रयोग पर निरंतर निगरानी रखें और अपने-अपने कार्यालयों द्वारा किये जा रहे कार्यकलापों तथा प्रकाशनों की प्रतियां हिन्दी सलाहकार समिति के सदस्यों को भी उपलब्ध कराते रहें।

चर्चा के दौरान श्री आनन्द जैन, सम्पादक, नव भारत टाइम्स तथा डा० राम मनोहर त्रिपाठी ने मंत्रालय द्वारा मूल कामकाज हिन्दी में किये जाने पर बल दिया। साथ ही श्री वें० राधाकृष्णमूर्ति ने अध्यक्ष महोदय का ध्यान इस ओर आकर्षित किया कि हिन्दी सलाहकार समिति की बैठकें जल्दी-जल्दी आयोजित की जानी चाहिए और बैठक में चर्चा की सामग्री बैठक होने से कुछ दिन पूर्व उपलब्ध कराई जानी चाहिये। उनका यह भी विचार था कि देश के विभिन्न भागों में स्थित इस मंत्रालय के अधीन कार्यालयों के महत्व को ध्यान में रखते हुए इसके अन्तर्गत एक हिन्दी निदेशालय बनाये जाने पर विचार करना भी युक्तिसंगत होगा।

(3) राजभाषा कार्यान्वयन समितियों का गठन तथा उनकी बैठकें नियमित रूप से होना

इस संबंध में सर्वसम्मति से यह निर्णय लिया गया कि मंत्रालय के अधीन जिन सम्बद्ध एवं अधीनस्थ कार्यालयों तथा सरकारी क्षेत्र के उपक्रमों आदि में अभी तक राजभाषा कार्यान्वयन समितियों का गठन नहीं किया गया है, यह कार्य तत्काल किये जाने के लिए उचित कार्यवाही की जाए। साथ ही यह भी सुनिश्चित किया जाए कि इनकी बैठकें नियमित रूप से हर तिमाही होती रहें। यह सुझाव भी दिया गया कि इन समितियों में हिन्दी सलाहकार समिति के एक स्थानीय सदस्य को प्रेक्षक के रूप में नामित किया जाए।

(4) कार्यालयों में हिन्दी के प्रयोग की स्थिति का निरीक्षण।

मंत्रालय के अधीन देश के विभिन्न राज्यों में स्थित कार्यालयों में हिन्दी के प्रयोग की स्थिति का निरीक्षण करते रहने पर भी कई सदस्यों ने जोर दिया। इस संबंध में जहां एक ओर यह विचार व्यक्त किया गया कि निरीक्षण करने में हिन्दी भाषी राज्यों पर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए वहीं दूसरी ओर कुछ सदस्यों का यह मत था कि हिन्दी भाषी राज्यों के बदले अहिन्दी भाषी राज्यों में हिन्दी के प्रयोग पर बल देना जरूरी होगा।

चर्चा के दौरान सभी सदस्य इस बात से सहमत थे कि मंत्रालय के काम-काज में हिन्दी में मूल रूप से टिप्पण और आलेखन के साथ-साथ पत्र-व्यवहार में भी गतिशीलता लाना जरूरी है। अभी तक अधिकांश कार्य केवल अनुवाद के माध्यम से हो रहा है, अतः सदस्यों ने अध्यक्ष महोदय से यह अनुरोध किया कि वह मंत्रालय में मौलिक कार्य हिन्दी में कराने पर अधिक बल दें जिस पर अध्यक्ष महोदय ने अपनी सहमति व्यक्त की।

× × ×

(3) सूचना और प्रसारण मंत्रालय

सूचना और प्रसारण मंत्रालय की हिन्दी सलाहकार समिति की 15 वीं बैठक सूचना और प्रसारण मंत्री श्री वसन्त साठे की अध्यक्षता में 10-11-1981 को हुई जिसमें निम्नलिखित सदस्य और अधिकारीगण उपस्थित थे :--

1.	श्री वसन्त साठे, सूचना और प्रसारण मंत्री	अध्यक्ष
2.	कुमारी कुमुद जोशी, सूचना और प्रसारण उप मंत्री	उपाध्यक्ष
3.	श्री नरेन्द्र सिंह, संसद सदस्य	सदस्य
4.	श्री रामचन्द्र भारद्वाज, संसद सदस्य	,,
5.	श्री कृष्ण चन्द्र पाण्डेय, संसद सदस्य	,,
6.	डा० लोकेश चन्द्र, संसद सदस्य	,,
7.	डा० एम० मलिक मोहम्मद	,,
8.	श्री मोहन कुमार भगत	,,
9.	श्री जगन्नाथ मिश्र	,,
10.	डा० रामजी सिंह	,,
11.	डा० आर० एस० पाण्डेय	,,
12.	श्री विष्णुदत्त रामदुलाल मिश्र	,,
13.	श्री गिरिजा कुमार माथुर	,,
14.	श्री शंकर राव लोंढे	,,
15.	प्रो० जी० सुन्दर रेड्डी	,,
16.	डा० एन० एस० दक्षिणामूर्ति	,,

17. डा० नगेन्द्र सदस्य

18. श्री रामप्रकाश गुप्त ,,

19. पं० करुणापति त्रिपाठी ,,

20. श्रीमती मंजुल भगत ,,

21. श्री जयनारायण तिवारी, सचिव, राजभाषा विभाग एवं भारत सरकार के हिन्दी सलाहकार ,,

22. श्री शरण बिहारी लाल, सचिव, सूचना और प्रसारण मंत्रालय ,,

23. श्री हर्षवर्द्धन गोस्वामी, संयुक्त सचिव, राजभाषा विभाग ,,

24. श्री कृष्ण चन्द्र शर्मा, महानिदेशक, आकाशवाणी

25. श्री शैलेन्द्र शंकर, महानिदेशक, दूरदर्शन ,,

26. डा० रघुनाथ प्रसाद, प्रधान वैज्ञानिक अधिकारी, वैज्ञानिक और तकनीकी शब्दावली आयोग ,,

27. श्री विल्फ्रेड लैजारस, प्रधान सूचना अधिकारी, पत्र सूचना कार्यालय ,,

28. श्री शरद उपासनी, संयुक्त सचिव, सूचना और प्रसारण मंत्रालय ,,

मंत्री महोदय ने बैठक में उपस्थित सभी सदस्यों का स्वागत करते हुए कहा कि माननीय सदस्यों ने जो विषय सुझाए थे उन पर जानकारी उनको पहले ही परिचालित की जा चुकी है और जो सदस्य किसी खास विषय के बारे में और ज्यादा जानकारी चाहते हैं वे उसे पूछ सकते हैं। इस पर डा० लोकेश चन्द्र और डा० एम० मलिक मोहम्मद ने सुझाव दिया कि चर्चा के लिए एक-एक सदस्य की एक-एक मद बारी-बारी से ले ली जाए। मंत्री महोदय ने इससे सहमति व्यक्त की और तदनुसार बैठक की कार्यसूची की मदों पर विचार आरम्भ हुआ।

मद संख्या 1 :—पिछली बैठक में दिए गए सुझावों पर की गई कार्रवाई की रिपोर्ट पर विचार

डा० मलिक मोहम्मद ने आकाशवाणी के विभिन्न केन्द्रों पर कार्यक्रम सलाहकार समितियों के गठन पर मंत्री महोदय को बधाई दी और कहा कि बाकी केन्द्रों पर भी इन समितियों का गठन शीघ्र कर लिया जाना चाहिए। मंत्री महोदय ने बताया कि प्रतिदिन साढ़े पांच घंटे से अधिक का कार्यक्रम प्रसारित करने वाले 60 केन्द्रों में से 53 केन्द्रों पर कार्यक्रम सलाहकार समितियों का गठन हो चुका है और शेष 7 केन्द्रों पर भी इन समितियों का गठन शीघ्र हो जाएगा। उन्होंने यह भी आश्वासन दिया कि आकाशवाणी के जिन केन्द्रों पर इन समितियों का गठन हो चुका है उनकी सूची सभी सदस्यों को भेज दी जाएगी।

मद संख्या 2 :—सूचना और प्रसारण मंत्रालय में हिन्दी का प्रयोग

सदस्यों को सूचित किया गया कि सूचना और प्रसारण मंत्रालय तथा इसकी मीडिया यूनिटों के सरकारी कामकाज में हिन्दी का प्रयोग अधिकाधिक बढ़ाने के लिए प्रयास किए जा रहे हैं। मंत्रालय की मीडिया यूनिटों को हिन्दी के प्रयोग से संबंधित तिमाही प्रगति रिपोर्ट भेजनी होती हैं जिसकी मंत्रालय में समीक्षा की जाती है और उसमें पाई गई कमियों की ओर संबंधित मीडिया यूनिटों का ध्यान आकर्षित किया जाता है और उनसे उनको दूर करने के लिए कहा जाता है। इसके अलावा, मंत्रालय तथा इसके ज्यादातर कार्यालयों में राजभाषा कार्यान्वयन समितियां बनी हुई हैं जो समय समय पर होने वाली अपनी बैठकों में हिन्दी के प्रयोग संबंधी आदेशों के अनुपालन की स्थिति की समीक्षा करती हैं और उनके समुचित अनुपालन पर जोर देती हैं।

डा० लोकेश चन्द्र ने कहा कि फिल्म प्रभाग में हिन्दी में प्राप्त 152 पत्रों में से 48 पत्रों के उत्तर अंग्रेजी में दिए गए हैं जो राजभाषा नियमों का उल्लंघन है। **डा० रामजी सिंह** ने कहा कि अनेक कार्यालयों ने मूल रूप से भेजे गए पत्र ज्यादातर अंग्रेजी में भेजे हैं। उन्होंने इस बात पर बल दिया कि हिन्दी के प्रयोग संबंधी आदेशों के पालन में जो भी कमियां हों उनको दूर किया जाना चाहिए। **डा० मलिक मोहम्मद** ने कहा कि विभिन्न कार्यालयों में हिन्दी के काफी पद खाली हैं। इन पदों को शीघ्र भरा जाना चाहिए ताकि उन कार्यालयों में हिन्दी के प्रयोग संबंधी आदेशों का समुचित रूप से पालन हो सके। **डा० लोकेश चन्द्र** ने इस बात पर बल दिया कि वरिष्ठ अधिकारियों को हिन्दी में लिखने का प्रयास करना चाहिए। यदि वे हिन्दी में लिखेंगे तो हिन्दी को प्रोत्साहन मिलेगा और हिन्दी की प्रगति होगी।

मंत्री महोदय ने बताया कि बहुत से अधिकारी हिन्दी में निपुण नहीं हैं या उनको हिन्दी में काम करने की आदत नहीं है, इसलिए उनको हिन्दी में काम करने में कठिनाई होती है। तो भी, इस बात का पूरा प्रयास किया जाता है कि हिन्दी में प्राप्त होने वाले पत्रों का उत्तर हिन्दी में ही दिया जाए। मंत्रालय के मुख्य सचिवालय तथा इसकी अधिकांश मीडिया यूनिटों ने हिन्दी में प्राप्त पत्रों के उत्तर हिन्दी में ही दिए हैं। जहां तक फिल्म प्रभाग का संबंध है वह बम्बई में है। वहां के अधिकांश अधिकारी हिन्दी भाषा से पूरी तरह अवगत नहीं हैं, इसलिए उनको हिन्दी में उत्तर देने में कठिनाई होती होगी। तो भी वहां ऐसी व्यवस्था की जाएगी कि हिन्दी में प्राप्त होने वाले पत्रों का उत्तर हिन्दी में ही दिया जाए। मंत्री महोदय ने यह भी कहा कि विभिन्न कार्यालयों में हिन्दी के जो पद खाली हैं उनको शीघ्र भरने के प्रयास किए जायेंगे ताकि वहां हिन्दी के प्रयोग संबंधी आदेशों का समुचित रूप से पालन हो सके।

मद संख्या 3 : आकाशवाणी की भाषा नीति

डा० रामजी सिंह ने कहा कि आकाशवाणी ने 33 वर्षों के बाद भी अभी तक अपनी कोई भाषा नीति तय नहीं की है। यह

चिन्ता का विषय है। मंत्री महोदय ने कहा कि आकाशवाणी की भाषा नीति के बारे में विभिन्न व्यक्तियों के भिन्न भिन्न विचार हैं। उन्होंने कहा कि वे इस बारे में सदस्यों के विचार जानना चाहेंगे कि आकाशवाणी की भाषा कैसी होनी चाहिए।

डा० रामजी सिंह ने कहा कि आकाशवाणी में प्रयुक्त की जाने वाली भाषा का कोई माडल होना चाहिए। उन्होंने सुझाव दिया कि इसके लिए मुंशी प्रेमचन्द की भाषा का माडल अपनाया जा सकता है। **डा० आर० एस० पाण्डेय का विचार था कि हिन्दी भाषा का कोई माडल बनाने की जरूरत नहीं है। अन्य भारतीय भाषाओं के आम बोलचाल के शब्दों को भाषा में अपनाया जाना चाहिए। पं० करुणापति त्रिपाठी ने कहा कि नई भाषा की कोशिश नहीं करनी चाहिए। भाषा सरल और सुबोध होनी चाहिए। डा० नगेन्द्र ने कहा कि अब हिन्दी का स्वरूप स्पष्ट हो चुका है तथा आकाशवाणी और दूरदर्शन से जिस हिन्दी का प्रयोग हो रहा है वह ठीक है। श्री राम प्रकाश गुप्त ने कहा कि हमारा देश एक व्यापक देश है। अतः इस देश के अंदर हिन्दी का कोई स्वरूप निश्चित करना उपयुक्त नहीं होगा। हमारा उद्देश्य होना चाहिए हिन्दी को फैलाना तथा हिन्दी को अपनाने के लिए प्रोत्साहित करना। देश के लोगों की भाषा ही आकाशवाणी और दूरदर्शन की भाषा होनी चाहिए। इस समय आकाशवाणी और दूरदर्शन की जो भाषा है वह प्रशंसनीय है।** श्री गिरिजा कुमार माथुर ने कहा कि आधुनिक हिन्दी का स्वरूप निश्चित हो चुका है और वह बहुत अच्छा है। डा० दक्षिणामूर्ति ने कहा कि हिन्दी सरल और व्यावहारिक होनी चाहिए तथा अहिन्दी भाषी प्रदेशों की हिन्दी और हिन्दी भाषी प्रदेशों की हिन्दी में एकरूपता होनी चाहिए।

श्री कृष्ण चन्द्र पाण्डेय, श्री नरेन्द्र सिंह तथा कुछ अन्य सदस्यों का भी यह विचार था कि आकाशवाणी और दूरदर्शन की भाषा सरल और सुबोध होनी चाहिए।

मंत्री महोदय ने कहा कि माननीय सदस्यों ने काफी अच्छे विचार व्यक्त किए हैं। विभिन्न सदस्यों ने जो विचार व्यक्त किए हैं उनका सार यह निकलता है कि आकाशवाणी और दूरदर्शन के हिन्दी प्रसारणों की भाषा का कोई खास माडल बनाने की जरूरत नहीं है। वे सदस्यों की इस राय से सहमत थे कि आकाशवाणी और दूरदर्शन के हिन्दी प्रसारणों की भाषा सरल और आम आदमी की समझ में आने वाली होनी चाहिए। इसके लिए महात्मा गांधी द्वारा प्रयोग की गई भाषा का अनुकरण किया जा सकता है।

मद संख्या 4 : हिन्दी भाषी राज्यों एवं केन्द्र के बीच मूल पत्राचार में हिन्दी का प्रयोग

श्री रामचन्द्र भारद्वाज ने कहा कि सरकारी कामकाज में मूल रूप से हिन्दी का प्रयोग नहीं हो रहा है। हिन्दी में जो पत्र आते हैं उनका अंग्रेजी में अनुवाद कराया जाता है और उनके उत्तर अंग्रेजी में तैयार किए जाते हैं और फिर उनका हिन्दी में अनुवाद होता है। इस प्रकार हिन्दी को गौण स्थान पर रखा गया है। उन्होंने यह भी कहा कि 15-8-81 को लाल किले पर प्रधान मंत्री का हिन्दी में जो भाषण हुआ था उसका पहले अंग्रेजी में अनुवाद हुआ और फिर प्रसारणों के लिए उसका हिन्दी में अनुवाद किया गया।

मंत्री महोदय ने कहा कि अधिकतर वरिष्ठ अधिकारी हिन्दी में निपुण नहीं हैं या उनको हिन्दी में काम करने का अभ्यास नहीं है, इसलिए उनको हिन्दी में काम करने में कठिनाई होती है। तो भी अनेक अधिकारी जहां तक संभव होता है हिन्दी पत्रों के उत्तर हिन्दी में ही तैयार करते हैं। मंत्री महोदय ने इस बात का खंडन किया कि 15-8-81 को प्रधान मंत्री ने लाल किले पर जो भाषण दिया था उसका पहले अंग्रेजी में अनुवाद हुआ और फिर उसको हिन्दी में अनुदित करके प्रसारित किया गया। उन्होंने बताया कि उक्त भाषण को सीधे हिन्दी में प्रसारित किया गया था। उन्होंने यह भी कहा कि जो भी सदस्य जिस केन्द्र पर जब भी जाना चाहें जा सकते हैं और वहां हिन्दी के प्रयोग की स्थिति को देख सकते हैं।

मद संख्या 5 : अहिन्दी क्षेत्रों में स्थित आकाशवाणी के केन्द्रों से प्रसारित हिन्दी कार्यक्रमों के लिए निर्धारित अवधि वृद्धि करने की आवश्यकता :

डा० मलिक मोहम्मद ने कहा कि अहिन्दी भाषी क्षेत्रों में स्थित आकाशवाणी केन्द्रों से प्रसारित होने वाले हिन्दी कार्यक्रमों की अवधि बहुत कम है। उन्होंने मांग की कि हिन्दी समाचारों और हिन्दी फिल्मी गीतों के समय को हिसाब में न लेकर दूसरे हिन्दी कार्यक्रमों की अवधि बढ़ाई जानी चाहिए। उन्होंने कहा कि आकाशवाणी के कालीकट केन्द्र से प्रसारित होने वाले हिन्दी कार्यक्रमों का समय (समाचारों और फिल्मी गीतों को छोड़कर) एक सप्ताह में 15 मिनट का है। वहां हिन्दी जानने वालों की संख्या अच्छी है। इसलिए वहां के लोगों की साहित्यिक रुचि बढ़ाने के लिए उस केन्द्र के साहित्यिक कार्यक्रमों की अवधि बढ़ाई जानी चाहिए। मंत्री महोदय ने कहा कि यदि उक्त केन्द्र से हिन्दी के कार्यक्रमों की अवधि कम है तो उसे बढ़ाने के बारे में विचार किया जाएगा। **डा० रामजी सिंह** ने कहा कि कई अहिन्दी भाषी केन्द्रों के हिन्दी कार्यक्रमों की अवधि कम कर दी गई है। हिन्दी के प्रचार-प्रसार के लिए अहिन्दी भाषी केन्द्रों से हिन्दी कार्यक्रम अधिक मात्रा में होने चाहिएं। **श्री जी० सुन्दर रेड्डी** ने कहा कि पहले आकाशवाणी के विशाखापत्तनम्, विजयवाड़ा और हैदराबाद केन्द्रों पर हिन्दी के कार्यक्रमों को अधिक समय दिया जाता था, किन्तु अब इन कार्यक्रमों की अवधि कम कर दी गई है। उन्होंने चाहा कि इन केन्द्रों पर हिन्दी कार्यक्रमों की अवधि उतनी ही कर दी जानी चाहिए जो 2-3 वर्ष पहले थी। मंत्री महोदय ने इस सुझाव पर विचार करने का आश्वासन दिया।

मद संख्या 6 :—हिन्दी भाषी क्षेत्रों के आकाशवाणी केन्द्रों और दूरदर्शन केन्द्रों से ऐसे कार्यक्रम अधिक मात्रा में प्रसारित किए जाएं जिनसे अहिन्दी प्रदशों की साहित्यिक, सांस्कृतिक और अन्य प्रादेशिक गरिमाओं का परिचय हिन्दी भाषी क्षेत्रों के लोगों को मिल सके।

डा० मलिक मोहम्मद ने कहा कि देश में भावात्मक एकता और सांस्कृतिक समन्वय और सामंजस्य को सुदृढ़ करने के लिए हिन्दी भाषी क्षेत्रों में स्थित आकाशवाणी और दूरदर्शन केन्द्रों से ऐसे कार्यक्रम अधिक मात्रा में प्रसारित किए जाने चाहिएं जिनसे अहिन्दी प्रदेशों की साहित्यिक, सांस्कृतिक और अन्य प्रादेशिक गरिमाओं का परिचय हिन्दी भाषी क्षेत्रों के लोगों को मिल सके। उन्होंने कहा कि भावात्मक एकता बढ़ाने के लिए यह एक सर्वोत्तम रास्ता होगा। **प्रो० जी० सुन्दर रेड्डी** ने भी यह चाहा कि दक्षिण के साहित्य, संस्कृति, कवियों, संतों, आदि की जानकारी उत्तर में दी जानी चाहिए।

महानिदेशक, आकाशवाणी ने बताया कि नाटकों के अखिल भारतीय कार्यक्रम में गत तीन वर्षों में प्रसारित किए गए 32 नाटकों में से 27 नाटक हिन्दीतर भाषाओं से रूपान्तरित किए गए नाटक थे। केवल 5 नाटक ही मूलतः हिन्दी के थे। इस प्रकार हिन्दीतर भाषाओं की जो रचनाएं होती हैं उनको हिन्दी भाषी क्षेत्रों के लोगों की दृष्टि में लाया जाता है। उन्होंने यह भी बताया कि "आदान-प्रदान" नामक एक नया कार्यक्रम शीघ्र ही शुरू करने के बारे में विचार किया जा रहा है। इस कार्यक्रम के अंतर्गत एक क्षेत्र के केन्द्रों के सर्वोत्तम साहित्यिक, सांस्कृतिक, आदि कार्यक्रमों को अन्य क्षेत्रों के केन्द्रों से प्रसारण की व्यवस्था की जाएगी। यह भी बताया गया कि "भारत-भारती" नामक कार्यक्रम में अन्य प्रदेशों की कला, साहित्य, संस्कृति, आदि की जानकारी दी जाती है। मंत्री महोदय ने कहा कि देश में भावात्मक एकता बढ़ाने के लिए जो सुझाव दिए गए हैं वे बहुत अच्छे हैं और उनको ध्यान में रखा जाएगा।

□□ □

सूचना तथा प्रसारण मंत्री श्री वसन्त साठे की अध्यक्षता में 10 नवम्बर 1981 को हुई सूचना तथा प्रसारण मंत्रालय की हिन्दी सलाहकार समिति की बैठक का एक दृश्य

विविधा

भारतीय भाषाओं के संदर्भ में हिन्दी पुस्तकों का प्रसार

पांचवें विश्व पुस्तक मेले के अवसर पर अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ द्वारा आयोजित 'भारतीय भाषाओं के सन्दर्भ में हिन्दी पुस्तकों का प्रसार' विषय पर दो सत्रों में एक विचारगोष्ठी आयोजित की गई।

प्रथम सत्र में विषय प्रवर्तन करते हुए श्री कृष्णचन्द्र बेरी ने हिन्दी के विश्व में तीसरी सबसे बड़ी भाषा होने पर भी हिन्दी पुस्तकों की लोकप्रियता में कमी के प्रति ध्यान किया आकर्षित और इसके लिए जिम्मेदार तत्वों का विवेचन किया। अपराध साहित्य, छद्मनामी साहित्य, अंग्रेजी पुस्तकों का आयात, सरकारी नीति आदि समस्याओं पर विचार की आवश्यकता प्रस्तुत की।

हिन्दीतर भाषी के लिए हिन्दी के स्तरीय साहित्य की चर्चा करते हुए डा० पाण्डुरंग राव ने पाठकों की रूचि, हिन्दी साहित्य के अध्ययन की प्रयोजनीयता तथा लोकप्रिय साहित्यिक विधाओं का सम्यक् विश्लेषण प्रस्तुत किया और इस दिशा में पुरस्कार देने वाली संस्थाओं, प्रकाशकों तथा द्विभाषी शब्द-कोश, प्रामाणिक सरल व्याकरण, इतिहास, भाषा-शिक्षण पुस्तिकाओं आदि की भूमिका पर बल दिया।

सरकारी प्रकाशनों के विक्रय की समस्याओं का विश्लेषण करते हुए डा० श्याम सिंह शशि ने इस पुस्तक प्रकाशन को एक विशुद्ध व्यवसाय के रूप में चलाए जाने पर लाभ का सौदा बताया।

डा० रामजीलाल जांगिड ने हिन्दी प्रकाशन और संचार माध्यम के पारस्परिक संबंधों को स्पष्ट करते हुए रेडियो-फिल्म–टेलिविजन-समाचारपत्र–पत्रिकायें आदि अन्य संचार माध्यमों के बीच हिन्दी प्रकाशनों की गिरती हुई स्थिति की समीक्षा प्रस्तुत की।

मुख्य अतिथि पद से बोलते हुए 'कादम्बिनी' संपादक श्री राजेन्द्र अवस्थी ने कहा कि सरकारी स्तर पर हुए प्रकाशनों पर भी लेखक के प्रति न्याय नहीं होता। उन्होंने इस बात पर भी खेद प्रकट किया कि प्रचार–प्रसार के अभाव में अच्छी से अच्छी कृतियां अनबिकी रह जाती हैं।

अध्यक्ष पद से बोलते हुए इंडियन पब्लिशर्स एण्ड बुकसेलर के संपादक श्री सदानंद भटकल ने कहा कि हिन्दी प्रकाशकों का दायित्व और बढ़ जाएगा जब वे यह अनुभव करेंगे कि वे राष्ट्रभाषा के प्रकाशक हैं।

दूसरे सत्र में विषय का प्रवर्तन करते हुए अखिल भारतीय हिन्दी प्रकाशक संघ के अध्यक्ष श्री जवाहर चौधरी ने कहा कि वोट और राजनीति की भाषा तो हिन्दी रहती है परन्तु जब हमारे प्रतिनिधि चुनकर विधान सभाओं और संसद में जाते हैं तब उनकी भाषा प्रशासनिक अंग्रेजी हो जाती है। हिन्दी के प्रचार-प्रसार में बाधा यही है।

डा० र० श० केलकर ने कहा कि हिन्दी ने भारत की प्राय: सभी भाषाओं के साहित्य का अनुवाद तथा पत्र-पत्रिकाओं द्वारा परिचय प्रस्तुत कर राष्ट्रीय तथा भावानात्मक एकता का मार्ग प्रशस्त किया है। इसी प्रकार विभिन्न प्रदेशों की ग्रंथ अकादमियों के अतिरिक्त हिन्दी समिति लखनऊ, बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, भुवन, वाणी ट्रस्ट लखनऊ का उल्लेख करते हुए उन्होंने हिन्दी प्रकाशक संघ को भी इस दिशा में पहल करने के लिए आमंत्रित किया।

श्री शंकर दयाल सिंह ने संसदीय क्षेत्र में हिन्दी की भूमिका पर प्रकाश डालते हुए बताया कि संसद में भी केन्द्रीय सरकार हिन्दी को राजभाषा बनाने के लिए प्रयत्नशील है किन्तु आज भी संसद में अंग्रेजी का ही वर्चस्व है तथा हिन्दी के नाम पर जो कुछ हो रहा है वह दिखावा अधिक है।

डा० ओम विकास ने देवनागरी कम्प्यूटर की उपयोगिता पर विचार व्यक्त करते हुए कम्प्यूटर की कार्य प्रणाली और उपयोगिता पर प्रकाश डाला और कहा कि परिवर्द्धित देवनागरी लिपि सभी भारतीय भाषाओं के लिए उपयुक्त है क्योंकि वे ध्वन्यात्मक एवं एक ही क्रम में हैं। परिवर्द्धित देवनागरी के कोड प्रयोग किए जाने से लिप्यन्तरण की भी कोई समस्या प्रस्तुत नहीं होती।

सत्साहित्य के प्रसार को सक्रिय और व्यापक बनाने के मार्ग में श्री यशपाल जैन ने बंगला, मराठी, गुजराती आदि, भाषाओं की तुलना में हिन्दी भाषा में स्वतन्त्रता के बाद बढ़ती जा रही व्यावसायिकता पर चिन्ता व्यक्त की।

दूसरे सत्र के मुख्य अतिथि पद से बोलते हुए विदेश मंत्रालय के हिन्दी अधिकारी श्री बच्चू प्रसाद सिंह ने विदेशों में हिन्दी के प्रसार-प्रचार के संबंध में कहा कि पुस्तकों की बिक्री को लोकप्रिय बनाने में हमें एक होना चाहिए। श्री सिंह ने कहा कि प्रकाशन एक वैज्ञानिक प्रक्रिया है। और इसकी ट्रेनिंग के लिए राज्य और केन्द्रीय स्तर पर ट्रेनिंग इंस्टीट्यूट बनाया जाना चाहिए।

द्वितीय सत्र का सभापतित्व करते हुए केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय के निदेशक डा० रणवीर रांग्रा ने कहा कि आवश्यकता इस बात की है कि पाठक, लेखक, प्रकाशक तथा सरकार मिलकर बैठें। उनका सुझाव था कि पुस्तक समितियों को केन्द्र से लेकर जिला स्तर तक गठित किया जाना चाहिए और पाठकों की पठन रूचि को बढ़ाना चाहिए।

गोष्ठी की प्रमुख संस्तुतियां

(1) सरकारी अनुदानों और सहायता पर आश्रित न रहकर पुस्तक व्यवसाय को निजी प्रयत्नों द्वारा प्रकाशित साहित्य को जनसाधारण तक पहुंचाना चाहिए। इस सन्दर्भ में समाजसेवी साहित्यिक संस्थाओं तथा राज्य सरकारों द्वारा सहज सुलभ सहयोग से केवल भाषायी पुस्तक मेलों तथा पुस्तकों की महत्ता पर गोष्ठियों का आयोजन अभीष्ट है। ऐसे कुछ मेले ग्रामांचलों के समीप लगे, इसका प्रयत्न होना चाहिए। पुस्तक प्रसार के इस प्रयास में नेशनल बुक ट्रस्ट को सबसाइज्ड दरों पर पुस्तक विक्रेताओं को स्टाल की सुविधा उपलब्ध करानी चाहिए तथा ग्रामांचलों में लगने वाले मेलों में ट्रस्ट की सेवा निःशुल्क हो।

(2) हिन्दी पुस्तकों के व्यापक प्रसार को दृष्टि से प्रकाशनों के मुद्रण तथा प्रकाशन के उत्कृष्टमानकों को स्थिर रखते हुए पुस्तकों के मूल्य कम से कम रखने चाहिएं जिससे उन्हें ग्रामांचल तथा सर्वसाधारण तक पहुंचाया जा सके। प्रकाशक संघ को मूल्य निर्धारण समिति नियुक्त कर मूल्यों के संबंध में अपने सुझाव प्रचारित करने चाहिए।

इसी संबंध में राज्य सरकारों को थोक खरीद पर 10 प्रतिशत कमीशन स्वीकार करना चाहिए जैसा कि केन्द्रीय शिक्षा मंत्रालय के नवीनतम प्रचारित परिपत्र में कहा गया है।

(3) 5वें विश्व पुस्तक मेले के अवसर पर माननीय प्रधान मंत्री द्वारा बुक डेवलपमेंट बोर्ड के गठन की घोषणा का स्वागत करती है, परन्तु साथ ही गोष्ठी का दृढ़ सुझाव है बोर्ड के गठन में हिन्दी तथा भाषायी प्रकाशकों के उनके संघों द्वारा मनोनीत प्रतिनिधियों को विशेष रूप से स्थान दिया जाये, बोर्ड की नीति स्पष्ट रूप से देश के भाषायी प्रकाशनों को विकसित करने की होनी चाहिये।

(4) अखिल भारतीय हिन्दी पुस्तक संघ को अ० भा० समाचारपत्र संपादक सम्मेलन आई० ई० एन० एस० लघु समाचारपत्र संपादक सम्मेलन और भाषायी समाचारपत्र परिषद् से मिलकर नई हिन्दी पुस्तकों की निरन्तर और नियमित चर्चा की व्यवस्था करना चाहिये। समय-समय पर वे पुस्तक जगत के बारे में लेख और परिशिष्ट छापें।

प्रस्तोता : कृष्णचन्द्र बेरी

दक्षिण एशियाई भाषाओं और भाषा विज्ञान का तृतीय अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन, मैसूर

दक्षिण एशियाई भाषा और भाषा विज्ञान का तृतीय अन्तरराष्ट्रीय सम्मेलन भारतीय भाषा संस्थान, मैसूर में 13 जनवरी से 16 जनवरी 1982 तक हुआ। इसका उद्घाटन कर्नाटक के शिक्षा मन्त्री माननीय श्री जी० बी० शंकरराव ने किया और उद्घाटन समारोह की अध्यक्षता संस्थान के निदेशक, डा० डी० पी० पट्टनायक ने की। माननीय मन्त्री ने अपने उद्घाटन भाषण में उपस्थित विद्वानों से दक्षिण एशिया की भाषाओं के माध्यम से शैक्षणिक समस्याओं के समाधान के लिए अपनी शक्ति का भरपूर उपयोग करने का अनुरोध किया। उन्होंने यह भी कहा कि बहुभाषिकता हमारे देश की शक्ति रही है। हमारे पूर्वजों ने परस्पर एक दूसरे की भाषाओं का अध्ययन किया और किसी भी क्षेत्र में उन्होंने भाषा को बाधा के रूप में नहीं पाया। आज भी दक्षिण एशियायी भाषाओं का अध्ययन किया जाना चाहिए और उसमें अधिकाधिक आदान-प्रदान भी किया जाना चाहिए।

इसमें भारतीय विश्वविद्यालयों और शोध संस्थाओं के विद्वानों के अतिरिक्त संयुक्त राज्य अमेरिका, इंग्लैण्ड सोवियत रूस, बंगलादेश, फ्रांस, जर्मनी, सिंगापुर, कनाडा, आस्ट्रेलिया, श्रीलंका, पाकिस्तान, जापान और नाइजेरिया के लब्ध प्रतिष्ठ विद्वानों ने भाग लिया। आन्ध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात, पंजाब, दिल्ली प्रशासन तथा तमिलनाडु की सरकारों ने अपने वरिष्ठ अधिकारियों को पर्यवेक्षक के रूप में भेजा था। भारत सरकार के गृह मन्त्रालय के राजभाषा विभाग के प्रतिनिधि श्री राजमणि तिवारी इसमें सम्मिलित हुए। केन्द्रीय हिन्दी संस्थान के निदेशक डा० बाल गोविन्द मिश्र और केन्द्रीय अंग्रेजी और स्वदेशी भाषा संस्थान के निदेशक प्रोफेसर रमेश मोहन भी जो इसकी राष्ट्रीय समिति के सदस्य हैं, इस सम्मेलन में उपस्थित थे। इनके अतिरिक्त शास्त्री भारत-कनाडा संस्थान के भारत स्थित अध्यक्ष श्री जयन्त लेले ने भी सम्मेलन में भाग लिया। विदेशी विद्वानों में प्रोफेसर पोलोमे, प्रोफेसर डिमाक, प्रोफेसर किंग, प्रोफेसर (श्रीमती) जमुना कचरु, प्रोफेसर अतीन्द्र मजूमदार आदि प्रमुख थे। भारतीय विद्वानों में प्रोफेसर अशोक केलकर, प्रोफेसर रवीन्द्रनाथ श्रीवास्तव, प्रोफेसर अगस्त्यलिंगम्, प्रोफेसर दासवानी आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। इस सम्मेलन के मुख्य उद्देश्य निम्नलिखित थे :-

1. दक्षिण एशिया की विभिन्न भाषाओं और भाषा-विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों में किए गए कार्यों का मूल्यांकन,

2. इन भाषाओं पर किए गए क्षेत्र-कार्य तथा भाषा विज्ञान और भाषा-प्रयोग के अध्ययन में सैद्धान्तिक और प्रणाली विषयक वैज्ञानिक प्रगति का मूल्यांकन,

3. अन्तर-अनुशासनिक अनुसन्धान के विकास और दक्षिण एशियाई भाषाओं और भाषा-विज्ञान पर काम कर रहे विद्वानों में परस्पर सहयोग स्थापित करना।

इस सम्मेलन में अन्य विषयों के अतिरिक्त, विशेषकर निम्न-लिखित विषयों में किए गए सांप्रतिक अनुसन्धान और विकास के कार्यों पर विचार-विमर्श किया गया :

(1) दक्षिण एशिया: एक समाज भाषा वैज्ञानिक क्षेत्र,
(2) भाषा-शिक्षा
(3) अनुवाद की समस्यायें
(4) वाचिक और लिखित परम्परा
(5) आंग्लीकरण
(6) अप्रधान भाषा
(7) व्यावहारिक संदर्भ में भाषा-प्रयोग
(8) वर्तमान भाषायें और सामान्य भाषा
(9) प्राचीन और मध्ययुगीन दक्षिण एशिया में भाषा संबंधी सिद्धान्त
(10) भाषा विश्लेषण
(11) भाषा परिवर्तन
(12) माध्यम विषयक शिक्षा शास्त्र और संकेत विज्ञान
(13) शब्दार्थ विज्ञान और कोश विज्ञान
(14) भाषिक और साहित्यिक विश्लेषण

इसके अतिरिक्त संबंध व्याकरण पर एक संभाषण का भी आयोजन किया गया था जिसमें देश-विदेश के विद्वानों ने भाग लिया और इस विषय पर हो रहे अधुनातन अनुसन्धानों पर विचार-विमर्श किया।

प्रोफेसर अशोक केलकर (पूना) ने 'मराठी में प्रवृत्ति' और प्रोफेसर रवीन्द्र नाथ श्रीवास्तव (दिल्ली) ने 'भारत में अनु-प्रयुक्त भाषा विज्ञान विषयक अनुसन्धान की प्रगति' पर विशेष व्याख्यान दिए।

इस सम्मेलन के अवसर पर दक्षिण एशिया की भाषाओं और भाषा-विज्ञान सम्बन्धी पुस्तकों की एक प्रदर्शनी आयोजित की गई थी। साथ में भारतीय लिपि व्यवस्था पर भी एक प्रदर्शनी का आयोजन किया गया था। संयुक्त राज्य अमेरिका के अन्तरर्राष्ट्रीय विश्वविद्यालय सानडियेगो के प्रोफेसर अनवरदिल द्वारा प्रस्तुत की गई कैलिग्राफी की भी एक विशेष प्रदर्शनी का आयोजन किया गया था।

इस अवसर पर लाहौर स्थित 'लिंग्विस्टिक रिसर्च ग्रुप आफ पाकिस्तान' ने संस्थान के निदेशक डा० देबी प्रसन्न पट्टनायक को उनके भाषा ज्ञान में दिए गए योगदान और अन्तर्राष्ट्रीय विद्वत्ता के लिए समान्नार्थ आजीवन सदस्य बनाया। डा० पट्टनायक इस संस्था के सातवें सदस्य हैं। वे डा० सुनीति कुमार चटर्जी के बाद दूसरे भारतीय हैं जिनको यह सम्मान मिला है।

सम्मेलन ने एकत्रित विद्वानों को विचारों के आदान-प्रदान का सुयोग्य अवसर दिया। भारत और दक्षिण एशिया के अन्य देशों में हो रहे कार्यों पर विशद विवेचन किया गया। इस सम्मेलन की एक और उपलब्धि रही—इसके द्वारा भारत सरकार द्वारा स्थापित विशेषकर भारतीय भाषा संस्थान और अन्य संस्थानों द्वारा और राज्य सरकारों द्वारा किए जाने वाले भाषा विकास के महत्वपूर्ण और उल्लेखनीय कार्यों का विद्वानों को परिचय देना। दक्षिण एशिया के अन्य देशों के प्रतिनिधियों और पश्चिमी विद्वानों के लिए भारतवर्ष में भाषा विकास के कार्यक्रम और उनके संगठनात्मक स्वरूप ने प्रतिमान प्रस्तुत किया। लोगों ने यह प्रस्तावित किया कि इन कार्यों की जानकारी के लिए समय-समय पर भारतीय भाषा संस्थान द्वारा एक बुलेटिन प्रकाशित की जाये। सब मिलाकर यह सम्मेलन बड़ा ही सफल और उपयोगी रहा।

प्रस्तोता : प्रो० एम० एस० तिरूमर्ल

फीजी की राजभाषा और हिन्दी

1970 में औपनिवेशिक शासन समाप्त होने के बाद भी राज-भाषा के रूप में फीजी में अंग्रेजी ही स्वीकृत है। परन्तु उस कला में, और आज भी फीजी के स्वाधीन होने पर 'वर्नाकुलर' के नाम से हिन्दी/हिन्दुस्तानी/फीजी बात (तीनों एक ही नाम हैं) को बहुत अंशों में कानूनी तथा परम्परागत तरीके दोनों ही प्रकार से संरक्षण प्राप्त है। इसका कारण यह है कि इसके पूर्व अंग्रेजी ही भारत और फीजी दोनों के शासक थे और अंग्रेज ही 'गिरमिट' व्यवस्था के अन्तर्गत भारतीयों को 1879–1916 तक फीजी में लाते रहे। इसके साथ ही फीजी में बहुत से सरकारी नौकर जिनमें अंग्रेज और भारतीय दोनों ही थे, भारत से लाए गए थे। इसलिए शासन की सुविधा हेतु स्कूलों, न्यायालयों एवं सामान्य कार्यों के लिए हिन्दी इस देश में शुरु से (1879 से) चलती रही है।

आज भी फीजी के उल्लेखनीय 100 द्वीपों में से प्रमुख दोनों टापुओं बीतीलेबू और वनुआलेबू में जहां कि राष्ट्रीय राजधानी सूवा, अन्तर्राष्ट्रीय हवाई अड्डा नांदी तथा चीनी आदि की मिलें एवं कारखाने हैं, अधिकांश जनसंख्या भारत-वासियों की है। (वे स्वयं को तथा सरकार भी उन्हें भारतीय ही कहती है)। सारे देश में जनसंख्या 50.1 प्रतिशत है, परन्तु इन दोनों द्वीपों में कहीं इससे ज्यादा है। भारत के यू० पी०, दक्षिण भारत, बिहार, राजस्थान, मध्य प्रदेश, पंजाब, तथा बाद में गुजरात से आये इन सब की पारस्परिक संपर्क भाषा तो हिन्दी है ही, परन्तु इसके अतिरिक्त यहां के मूल निवासी काईवीती, पार्टयूरोपियन चीनी भी बाजार में या बातचीत की सम्पर्क भाषा के रूप में हिन्दी को ही काम में लाते हैं। यह दूसरी बात है कि उसकी शैली, ध्वनि तथा व्याकरण साहित्यिक अथवा खड़ी बोली से भिन्न, परन्तु पूरबी बृज के निकट है। इस प्रकार सारे प्रशान्त महासागर के देशों में हिन्दी का प्रचलन और उसे अभिस्वीकृति प्राप्त है।

हिन्दी को आज फीजी में जूनियर कैम्ब्रिज कक्षा (प्राइमरी की 7 कक्षाएं तथा जूनियर की तीन फार्मों) तक अन्यतम विषय के रूप में फीजियन तथा उर्दू भाषाओं के साथ पढ़ाने की व्यवस्था है। बोर्ड इसकी परीक्षा लेता है। प्रसन्नता की बात है कि हाल के एक सरकारी निर्णय के अनुसार न्यूजीलेंड बोर्ड द्वारा सीनियर कैम्ब्रिज (फाम छह) परीक्षा में भी हिन्दी शीघ्र लागू होगी। सबसे नया समाचार है कि प्रशान्त के देशों की सम्मिलित यूनिवर्सिटी (यू० एस० पी०) द्वारा हिन्दी की कुछ प्रायोगिक कक्षायें दो भिन्न स्तरों पर इस वष के अन्तिम भाग में लगाई जायगी। इज यूनिवर्सिटी के वतमान संकाय में 9 केन्द्र अलग-अलग देशों में चलते है।

फीजी में अब और पहले भी जनसाधारण के लिए सरकार द्वारा अधिसूचनाएं और सामान्य सूचनाएं, सरकार तथा सिटी कार्उसिलों (नगर पालिकाओं) आदि के द्वारा तथा शुगर कम्पनी आदि सरकारी निगमों में भी, अंग्रजी के अतिरिक्त हिन्दी में (अब काईवीती में भी) जारी होती है। न केवल भारतीयों में परस्पर अपितु सभी वर्गों के लोग हिन्दी के द्वारा काम चलाते है। एक सरकारी समाचारपत्र 'शंख' निकलता है।

हिन्दी की शिक्षा का सबसे प्रथम काम इस देश में आर्यसमाज के स्वर्गीय अमीचन्द्र विद्यालंकार ने किया था। उस काल में 'फीजी संदेश', 'फीजी समाचार', 'जागृति' आदि पत्र निकलते थे। आज 'शान्तिदूत' तथा 'जयफीजी' दो साप्ताहिक पत्र प्रकाशित होते हैं। भारतीय हाईकमीशन की ओर से जहां इसकी तुलना में हिन्दी में पत्र-व्यवहार हिन्दी शिक्षण तथा हिन्दी के अधिक प्रयोग (अभी यह कागजों तक है) द्वारा इस सांस्कृतिक पुल-हिन्दी को दृढ़ किया जाना चाहिए। यह भी खेद की बात है कि संविधान में व्यवस्था होने पर भी संसद में किसी सदस्य ने हिन्दी में भाषण नहीं किया जबकि 'काईबीती' में भाषण होते रहते हैं। हिन्दी की फिल्मों, गानों के स्थानीय हिन्दी टेपों से हिन्दी के प्रसार को यहां बहुत बल मिलता है और मिला है। फीजी ब्राडकास्टिंग कार्पोरेशन (फीजी रेडियो) अंग्रेजी के साथ काईवीती तथा हिन्दी में अपने कार्यक्रम बराबर प्रस्तुत करती है। इससे हिन्दी का न केवल मानक रूप यहां स्थिर होने में सहायता मिलती है अपितु लोकप्रियता भी बराबर बढ़ रही है। स्थानीय कलाकर तथा भारतीय सांस्कृतिक केन्द्र सांस्कृतिक कार्यक्रमों को फीजी अथवा निकटस्थ देशों में देते रहते हैं।

फीजी रेडियो पर स्थानीय कलाकार हिन्दी कार्यक्रमों में भोजपुरी, ब्रज तथा अवधी भाषाओं के लोकगीत, प्रस्तुत करते हैं। उनका स्तर देहात की फीजी जनता (फीजी की अधिकांश भारतीय जनता देहात में ही रहती है) के हिसाब से काफी ऊंचा होता है। एसा अनुभव किया जा रहा है कि यदि फीजी के रेडियो और आकाशवाणी के लोक कार्यक्रमों के बीच कोई सुव्यवस्थित सहयोग स्थापित हो जाए तो उससे दोनों देशों को लाभ मिलेगा।

हाल में आकाशवाणी के उप महानिदेशक श्री कृष्णचन्द्र शर्मा 'भिक्षु' फीजी में आए थे और परस्पर सहयोग की दिशा में उनकी चर्चा फीजी रेडियो के उप निदेशक श्री दिवाकर प्रसाद से हुई थी। इसके अन्तर्गत फीजी रेडियो के (हिन्दी कार्यक्रम के) अधिकारी को प्रशिक्षण के हेतु भारत में बुलाये जाने की संभावना है। श्री विश्वनाथ पांडे आकाशवाणी के यहां हिन्दी सलाहकार के रूप में पहले से ही कार्य कर रहे हैं। यहां 'वायस आफ अमेरिका' के हिन्दी समाचार बुलेटिन प्रसारित होते हैं। वे एकांगी तथा एक पक्षीय होते हैं। यदि भारत के पास अधिक शक्तिशाली ट्रांसमीटर हो तो यह एक-बड़ा लाभदायक काम हो सकता है। सितम्बर में भारत की प्रधानमन्त्री फीजी में आई थीं। आशा है, उनके आगमन से इस दिशा में और प्रगति होगी।

प्रस्तोता : ब्रह्मदत्त स्नातक

विभिन्न देशों में हिन्दी

हिन्दी केवल भारत में ही राजभाषा और व्यवहार की भाषा नहीं है बल्कि विश्व में लगभग डेढ़ दर्जन ऐसे देश हैं जहां हिन्दी बोलने वाले लोग भी काफी संख्या में रहते हैं। यहां सरकारी स्तर पर भी हिन्दी की मान्यता है। इन देशों में निम्नलिखित प्रमुख हैं :–

1. वर्मा
2. फिजी
3. मारिशस
4. गुयाना
5. सूरीनाम
6. ट्रिनीदाद
7. नेपाल
8. श्रीलंका
9. थाइलैण्ड
10. केनिया
11. मलेशिया
12. युगांडा
13. तंजानिया
14. बंगला देश
15. पाकिस्तान

विदेशी विश्वविद्यालयों में हिन्दी

अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर हिन्दी का अध्ययन-अध्यापन काफी व्यापक हो गया है। विश्व के अनेक विश्वविद्यालयों में हिन्दी पढ़ाई जाती है। इसकी सूची निम्न प्रकार है :—

अमेरिका

1. कैलिफोर्निया विश्वविद्यालय, बर्कले, कैलिफोर्निया
2. क्लेरमोट ग्रेजुएट स्कूल, क्लेरमोट, केलिफोर्निया
3. हवाई विश्वविद्यालय, होनोलूलू, हवाई।
4. मिन्निसोटा विश्वविद्यालय, मिन्नियां पौलिस, मिन्निसोटा

5. सायराक्यूस विश्वविद्यालय, सायराक्यूस, न्यूयार्क
6. पेन्सिलवेनिया विश्वविद्यालय, फिलाडेल्फिया पेन्सिलवेनिया
7. विस्कोन्सिल विश्वविद्यालय, (मेडीसन) विस्कोन्सिल
8. शिकागो विश्वविद्यालय, इल्लिनोयस
9. ड्यूक विश्वविद्यालय, हरह्म नार्थ, कैरोलिना
10. कानेल विश्वविद्यालय, इथाका, न्यूयार्क
11. टेक्सास विश्वविद्यालय, आस्टिन टैक्सास
12. मिशीगन विश्वविद्यालय, एन ओरवर, मिशीगन
13. वेक फारेस्ट कालेज, विस्टन सेलम, नार्थ करोलिना
14. जांस हापिंक विश्वविद्यालय, बाल्टीमोर, मागलैंड

श्री लंका

1. विद्यालंकार विश्वविद्यालय
2. विद्योदय विश्वविद्यालय
3. श्रीलंका विश्वविद्यालय, परेडेनिया

जापान

1. टोक्यो यूनिवर्सिटी आफ फारेन, स्टडीज, टोक्यो
2. टोक्यो यूनिवर्सिटी, टोक्यो
3. ओसाका यूनिवर्सिटी आफ फारेन स्टडीज, ओसाका
4. एशियन अफ्रिकान लिग्विस्टिक इंस्टीट्यूट, मिताकर, टोक्यो।
5. टोहो यूनिवर्सिटी, टोहो
6. टोक्यो अर्थशास्त्र अनुसन्धान विद्यापीठ, टोक्यो

इंग्लैंड

1. बलबोर्न स्कूल आफ ला एन्ड लैंग्वेज, लन्दन
2. स्कूल आफ ओरिएन्टल एन्ड अफ्रीकन स्टडीज, लन्दन
3. लन्दन विश्वविद्यालय, लन्दन
4. कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय

पश्चिम जर्मनी

1. फ्री यूनिवर्सिटी, बर्लिन
2. रिहींस फ्रीडरिख बिल्डेसस यूनिवर्सिटी, बोन
3. जोहान वोल्फगांग गोयटे यूनिवर्सिटी, फ्रैंकपुर्ट
4. एलवर्ट लुडिविग्स यूनिवर्सिटी, फ्रीवर्ग
5. जार्ज आगस्ट यूनिवर्सिटी, गोएटिगेंन
6. हैम्बर्ग यूनिवर्सिटी, हैम्बर्ग
7. स्प्रेख्ट कार्ल यूनिवर्सिटी, डीजल वर्ग
8. क्रिस्टियान अलब्रेस्ट, कील
9. कील्स यूनिवर्सिटी, कीलन
10. जोहनेस गूटेनवर्ग, यूनिवर्सिटी, मेत्स
11. फिलिप्स यूनिवर्सिटी, मारवर्ग
12. लुडावग मसिमिलियन्स यूनिवर्सिटी, प्यूर्षे श्रेन (म्युनिख)
13. वेस्ट फैलिस, विल्हेल्प यूनिवर्सिटी, म्युन्सटर
14. यूनिवर्सिटी डैस सारलडस, सारबुकेन
15. एबरहार्ड कार्ल्स यूनिवर्सिटी, ट्यूबिगेन

बेल्जियम

1. ब्रुसेल्स विश्वविद्यालय, ब्रुसेल्स
2. घेट विश्वविद्यालय, घेट
3. लीज विश्वविद्यालय, लीज
4. लावेदन कैथोलिक विश्वविद्यालय

चकोस्लोवाकिरा

1. विदेशी भाषाओं का विश्वविद्यालय, प्राग
2. चार्ल्स विश्वविद्यालय, प्राहा

सोवियत संघ

1. इंस्टीच्यूट आफ ईस्टर्न लैंग्वेजेज
2. लेनिनग्राड स्टेट यूनिवर्सिटी
3. ताशकन्द स्टेट यूनिवर्सिटी
4. इंस्टीट्यूट आफ पोपुल्स आफ एशिया, एकादमी, आफ साइंसेस, मास्को
5. मास्को स्टेट यूनिवर्सिटी

पूर्वी जर्मनी

1. वर्लिन विश्वविद्यालय
2. हम्बोल्ट विश्वविद्यालय
3. लाइपजिग विश्वविद्यालय
4. कार्ल मार्क्स विश्वविद्यालय
5. मार्टिन किंग लूथर विश्वविद्यालय, हार्लेक

अन्य

1. यूनिवर्सिटी आफ रोम (इटली)
2. वारसा विश्वविद्यालय (पोलैण्ड)
3. पेकिंग विश्वविद्यालय (चीन)
4. अमेरिकन इंटरनेशनल स्कूल, काबुल (अफगानिस्तान)
5. उपरेस्ट विश्वविद्यालय, उपरेस्ट (नीदरलैण्ड)

प्रस्तोता : रंग-नाथ राकेश

बढ़ते कदम

वायुसेना कार्यालय, कानपुर में हिन्दी गोष्ठी

'हिन्दी के प्रगति के मार्ग में जो कठिनाइयां राजभाषा विभाग में अनुभव की जा रही हैं, उनको दूर करने के लिए हम सतत प्रयत्नशील हैं। वर्तमान समय में हिन्दी के विकास की दिशा में सभी प्रान्तों और वर्गों के लोगों का सहयोग अपेक्षित है। हिन्दी किसी प्रान्त अथवा क्षेत्र की भाषा न होकर सम्पूर्ण देश की सम्पर्क भाषा है यदि इसे सम्पर्क भाषा के रूप में विकसित नहीं किया गया तो एक प्रान्त के लोगों को दूसरे प्रान्त के लोगों से केवल इशारों में ही बात करने के लिए मजबूर होना पड़ेगा। उपर्युक्त विचार राजभाषा विभाग, गृह मन्त्रालय, के संयुक्त सचिव श्री हर्ष वर्दन गोस्वामी ने केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद, वायुसेना शाखा द्वारा "राज-काज में हिन्दी का प्रयोग—समस्यायें" विषय पर आयोजित विचार गोष्ठी में व्यक्त किए। श्री गोस्वामी जी ने आगे कहा कि हिन्दी के स्वरूप में निखार आ रहा है कर्मचारियों को चाहिए कि सरल एवं प्रचलित शब्दों का प्रयोग करें। इस सम्बन्ध में उन्होंने भारत सरकार की नीति को विस्तार से स्पष्ट किया।

उन्होंने कहा कि हिन्दी सन्तों और सूफियों की भाषा रही है उसमें कहीं भी कोई उग्र भाव निहित नहीं है इसलिए हिन्दी का लादने का प्रश्न ही खड़ा नहीं होता।

वायु सेना कार्यालय, कानपुर में हिन्दी गोष्ठी में विचार व्यक्त करते हुए राजभाषा विभाग के संयुक्त सचिव श्री हर्षवर्दन गोस्वामी।

डॉ० सूरज पाल शर्मा, महामन्त्री, केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद (नई दिल्ली) ने कहा कि प्रशासनिक कार्यों के लिए हिन्दी का प्रारम्भ आज से सैकड़ों वर्ष पूर्व अहिन्दी भाषी क्षेत्र कलकत्ता के फोर्ट विलियम कालेज में हुआ और अहिन्दी भाषियों ने इसके प्रचार-प्रसार और विकास का श्री गणेश किया। अतः वे लोग हिन्दी को पूरी तरह सम्पर्क भाषा के रूप में स्वीकार करने में निश्चय ही आगे आएंगे। किसी को अहिन्दी भाषी शब्द से सम्बोधित करना न्यायोचित नहीं है क्योंकि सम्पूर्ण भारत की राज-भाषा या सम्पर्क भाषा हिन्दी है। उन्होंने सभी भारतीय भाषाओं के समान शब्दों का उदाहरण देकर उल्लेख किया। किसी भी भाषा के विकास के लिए अन्य भाषाओं के शब्दों का ग्रहण कर लेना उसके विकास का लक्षण है और यह प्रक्रिया हिन्दी में भी शुरू हो गई है। उन्होंने कई स्थानों पर भिन्न-भिन्न प्रान्तों और भाषा वर्ग के लोगों में सम्पर्क भाषा के रूप में हिन्दी के उदाहरण भी दिए। उन्होंने यह भी कहा कि प्रादेशिक भाषाओं के विकास से हिन्दी को बहुत लाभ होगा।

नगर समन्वय समिति के प्रधान श्री विजय कुमार ने कहा कि हमारे देश में अंग्रेजी का दिखावा बहुत अधिक है। आज हम अपने देश की राष्ट्रभाषा में बातचीत करने या कार्य करने में हीनता का अनुभव करते हैं यह मानसिक विकार हमें दूर करना होगा। उन्होंने इस विषय में जापान व जर्मनी के लोगों से प्रेरणा लेने के लिए कहा क्योंकि जापान में तकनीकी व वैज्ञानिक शिक्षा उनकी अपनी मातृभाषा में होता है। हमें अपनी भाषा पर गर्व होना चाहिए।

ग्रुप कैप्टन एम० चटर्जी ने कहा कि हिन्दी के क्रियान्वयन के लिये वायुसेना केन्द्र में हम पूर्णरूपेण सजग हैं। हमारे यहां कर्म-चारियों को हिन्दी में कार्य करने के लिए पूरी छूट दी गई है। राजभाषा नियमों के क्रियान्वयन प्रगति का विवरण प्रस्तुत करते हुए उन्होंने कहा कि समीक्षा के लिए अध्ययन समिति का भी गठन कर दिया गया है तथा प्रत्येक बृहस्पतिवार को केवल हिन्दी में ही बोलने एवं कार्य करने का निश्चय किया गया है।

श्री मैयादीन सर्राफ, मन्त्री नगर समन्वय समिति ने सरकारी कार्यालयों में हिन्दी के प्रयोजन में आने वाली प्रमुख समस्याओं की ओर ध्यान आकृष्ट कराते हुए कहा कि हिन्दी टाइपराइटरों, टाइ-पिस्टों, स्टेनोग्राफरों, संदर्भ साहित्य व विभागीय नियमों के हिन्दी संस्करण सभी कार्यालयों में उपलब्ध न होना सबसे बड़ी बाधा है।

श्री पुत्तू लाल गुप्त (मन्त्री), ने बताया कि रक्षा मन्त्रालय में हिन्दी का प्रयोग काफी तेजी से बढ़ रहा है परन्तु मार्ग में आने वाली यांत्रिक बाधायें यथावत हैं जिनका निवारण होना अत्यावश्यक है।

इसके अतिरिक्त ग्रुप कैप्टन चिटनिस, स्क्वाड्रन लीडर महेश चन्द्र तथा रवीन्द्र नाथ पाठक ने अपने विचार व्यक्त किए आरम्भ में उपस्थित लोगों का स्वागत मुख्य प्रशासनिक प्रधान ग्रुप कैप्टन डी० चौधरी ने तथा आभार ग्रुप कैप्टन टी० के० शेषाचारी ने प्रकट किया।

प्रेषक—पुत्तू लाल गुप्त
मंत्री, केन्द्रीय सचिवालय,
हिन्दी परिषद, वायुसेना शाखा, कानपुर

महालेखाकार, उत्तर प्रदेश, इलाहाबाद के कार्यालय में हिन्दी

महालेखाकार, उत्तर प्रदेश (प्रथम) के कार्यालय की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की 30 सितम्बर 81 को समाप्त होने वाली तिमाही से सम्बन्धित बैठक श्री ए० एन० विश्वास, महालेखाकार, उत्तर प्रदेश (प्रथम) की अध्यक्षता में दिनांक 5 दिसम्बर 1981 को सम्पन्न हुई। बैठक में कार्यालय के कई वरिष्ठ अधिकारियों ने भाग लिया।

सर्वप्रथम बैठक में 30 सितम्बर 1981 को समाप्त तिमाही की अवधि में हिन्दी में प्राप्त पत्रों के हिन्दी में उत्तर देने की प्रगति का सिंहावलोकन किया गया। बैठक में इस बात पर अत्यन्त हर्ष व्यक्त किया गया कि कार्यालय में हिन्दी में प्राप्त सभी पत्रों का उत्तर हिन्दी में दिया जाता है। इस सम्बन्ध में यह निर्णय लिया गया कि इस प्रगति को सदैव बनाये रखा जायेगा।

2. कार्यालय से हिन्दी-भाषी क्षेत्रों में स्थित केन्द्रीय/राज्य सरकारों के कार्यालयों को मूल रूप में हिन्दी में भेजे गये पत्रों की प्रतिशतता में वृद्धि पर संतोष व्यक्त किया गया तथा इस बात पर जोर दिया गया कि इस दिशा में भी शत प्रतिशत का लक्ष्य शीघ्र प्राप्त करने की दिशा में प्रयास किये जाएं।

3. संघ के विभिन्न सरकारी प्रयोजनों के लिये हिन्दी के उत्तरोत्तर प्रयोग के सम्बन्ध में वर्ष 1981-82 के कार्य-क्रम के अधीन भारत सरकार, गृह मंत्रालय, राजभाषा विभाग द्वारा परिचालित ज्ञापन संख्या/13011/1/81-रा० भा० (क), दिनांक 2 जून 1981 के अन्तर्गत उल्लिखित विभिन्न जांच बिन्दुओं के प्रभावी ढंग से कार्य सम्पन्न करने पर विचार-विमर्श किया गया। (कार्यक्रम की प्रति कार्यालय आदेश संख्या हिन्दी अनु०/दो-20/115, दिनांक 12-10-81 को परिचालित) यह निर्णय लिया गया कि सभी सम्बन्धित, अपने दायित्व के अन्तर्गत आने वाले कार्यों का सम्पादन सावधानी पूर्वक करेंगे ताकि निर्धारित कार्यक्रम तथा लक्ष्य को पूर्ण किया जा सके।

4. बैठक में यह निर्णय लिया गया कि कार्यालय के समस्त रजिस्टरों एवं पत्रावलियों (फाइलों) पर उनके नाम एवं विषय द्विभाषी रूप में (हिन्दी-अंग्रेजी) में अंकित किये जाएं। इससे हिन्दी प्रयोग में एक उचित संकेत मिलेगा।

5. यह भी निर्णय लिया गया कि "क" क्षेत्र में स्थित कार्यालयों को प्रेषित किये जाने वाले तारों में कम से कम 25 प्रतिशत देवनागरी लिपि में हों।

6. निर्णय लिया गया कि कार्यालय के कल्याण विभाग द्वारा परिचालित परिपत्र (न्यूज रिपोर्ट) में हिन्दी से सम्बन्धित क्रियाकलापों का भी उल्लेख किया जाए।

7. निर्णय लिया गया कि कार्यालय में हिन्दी टिप्पण एवं आलेखन प्रतियोगिता के मूल्यांकन के उपरान्त एक उचित कार्यक्रम का आयोजन किया जाए।

आर्यमुनि माथुर
कल्याण अधिकारी

नागपुर नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति द्वारा आयोजित 'हिन्दी दिवस'

"हिन्दी दिवस" कार्यक्रम के समारोह के लिए, नागपुर के सभी केन्द्रीय सरकारी कार्यालय, बैंक, निगम और कम्पनियां जिनकी संख्या लगभग 123 है, को आमंत्रित किया गया था। इसके अतिरिक्त प्रान्तीय सरकार के वरिष्ठ अधिकारीवर्ग और हिन्दी से हमदर्दी रखने वाले स्थानीय नागरिकों को भी आमंत्रण दिया गया था तथा उनसे "हिन्दी दिवस" के उपलक्ष्य में कुछ कार्य क्रम प्रस्तुत करने के लिए भी योजना मांगी गई थी। नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति की सहयोगी संस्था मैंगनीज ओर (इण्डिया) लिमिटेड ने "हिन्दी दिवस" के लिए प्रहसन तथा अन्य विविध कार्यक्रम प्रस्तुत करने में अग्रणी स्थान प्राप्त किया।

स्थानीय 'धनवटे रंग मंदिर' में संध्या 5.30 बजे से "हिन्दी दिवस" के कार्यक्रम में उमड़ते-घुमड़ते बादलों के बीच, वर्षा की तेज तर्रार बूंदों की चिंता न करते हुए, कलाकार एवं दर्शक 'रंग मंदिर' में पहुंचते रहे तथा कार्यक्रम रात करीबन 9.00 बजे तक चलता रहा। नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति द्वारा पहली बार इस विशाल पैमाने पर "हिन्दी दिवस" के आयोजन पर नगर की विभिन्न हिन्दी प्रेमी संस्थाओं ने श्री अग्रवाल जी को धन्यवाद दिया तथा पुष्पमालाओं से अभिनन्दन किया। स्वागतकर्ताओं में, श्री पी० बी० चार्लस्, सचिव, केन्द्रीय सरकार कर्मचारी कल्याण समन्वय समिति, नागपुर, श्री सिद्दीकी, सचिव, आई० टी० रिक्रिएशन क्लब, श्री रा० ना० निखर, सचिव, केन्द्रीय सचिवालय, हिन्दी परिषद् (आयकर शाखा), श्री ज्ञान प्रकाश तिवारी, जीवन बीमा निगम एवं सचिव, केन्द्रीय सचिवालय, हिन्दी परिषद् नगर समन्वय समिति और श्री एम० एन० बारमासे, अध्यक्ष, राष्ट्रीय आई० टी० स्टेनोग्राफर्स असोसिएशन, नागपुर है।

आयकर विभाग, दिल्ली में हिन्दी समारोह

आयकर विभाग, दिल्ली के तत्त्वावधान में 15-9-81 को दोपहर बाद 1.30 बजे से 4.30 बजे तक प्यारे लाल भवन में एक विशाल हिन्दी समारोह का आयोजन किया गया। इस समारोह में केन्द्रीय प्रत्यक्ष कर बोर्ड के निर्देश के अनुसार तैयार की गई प्रत्यक्ष कर शब्दावली का विमोचन किया गया और विभाग के 65 अधिकारियों/कर्मचारियों को हिन्दी शिक्षण योजना के अंतर्गत विभिन्न परीक्षाओं के प्रमाण-पत्र वितरित किये गये।

इस समारोह में मुख्य अतिथि के रूप में वित्त राज्य मंत्री श्री सवाई सिंह सिसोदिया को आमंत्रित किया गया था किन्तु आने के लिए अत्यंत उत्सुक होने पर भी वे उस दिन संसद कार्य में अत्यधिक व्यस्त रहने के कारण समारोह में न आ सके। उन्होंने इस समारोह के लिए अपना जो संदेश दिया था उसे इस विभाग के निदेशक श्री टी० पी० झुनझुनवाला ने सबको सुनाया। वित्त राज्य मंत्री के न आने पर प्रत्यक्ष कर शब्दावली का विमोचन और प्रमाण-पत्र वितरण का कार्य श्री जगदीश चन्द, अध्यक्ष केन्द्रीय प्रत्यक्ष कर बोर्ड द्वारा सम्पन्न किया गया। शब्दावली का विमोचन और प्रमाण-पत्र वितरण के पश्चात इस विभाग के हिन्दी अधिकारी श्री रामशंकर सिंह ने कार्यालय में हुई हिन्दी की प्रगति का विवरण प्रस्तुत किया। इसके बाद श्री जगदीश चन्द, अध्यक्ष केन्द्रीय प्रत्यक्ष कर बोर्ड ने अपना अध्यक्षीय वक्तव्य दिया।

श्री जगदीश चन्द, अध्यक्ष' केन्द्रीय प्रत्यक्षकर बोर्ड द्वारा 'प्रत्यक्षकर' शब्दावली का विमोचन

समारोह के अन्त में एक कवि गोष्ठी का भी आयोजन किया गया जिसमें श्री सुरेन्द्र कुमार शर्मा, श्री संतोष आनन्द, श्री शैल चतुर्वेदी 'शैल', श्री जगदीश सोलंकी, काका हाथरसी और श्री वीरेन्द्र तरुण ने भाग लिया। कवियों ने अपने मधुर गीतों और हास्य-व्यंग्यमयी रचनाओं से श्रोताओं का मन मोह लिया। इस कवि गोष्ठी का प्रारम्भ श्री जगदीश चन्द, अध्यक्ष, केन्द्रीय प्रत्यक्ष कर बोर्ड ने अपनी उर्दू कविता से स्वयं किया। समारोह के आरम्भ में सर्वप्रथम श्री एन० एस० राघवन, आयकर आयुक्त, दिल्ली-1 ने अपना स्वागत भाषण पढ़ा और अंत में श्री प्रशांत कुमार मित्र, आयकर आयुक्त, दिल्ली-2 ने धन्यवाद ज्ञापन किया। इस पूरे समारोह का संचालन श्री टी० पी० झुनझुनवाला ने किया। समारोह में आयकर विभाग के अधिकारी/कर्मचारी बड़ी संख्या में शामिल हुए।

भारतीय खाद्य निगम, दिल्ली में हिन्दी का प्रगामी प्रयोग

हिन्दी भारत की राजभाषा है। खाद्य निगम में राजभाषा विभाग द्वारा समय-समय पर जारी अनुदेशों-निर्देशों का पालन इस निगम में किया जाता है। भारत सरकार द्वारा भेजे गए वार्षिक हिन्दी कार्यक्रम निर्धारित रूप से भारत में स्थित निगम के विभिन्न कार्यालयों को भेजे गये तथा निर्देश दिए गए कि इन कार्यक्रमों को निगम के कार्यालयों में अपनाया जाए तथा उनके अनुपालन तथा प्रगति पर नजर रखी जाये।

गृह मंत्रालय की हिन्दी शिक्षण योजना इस निगम में भी लागू है तथा निगम के सभी आंचलिक/क्षेत्रीय कार्यालयों में अहिन्दी भाषी अधिकारियों और कर्मचारियों के लिये हिन्दी शिक्षण की व्यवस्था की जा रही है।

हिन्दी शिक्षण योजना के अधीन चलने वाले विभिन्न प्रशिक्षण कोर्सों (पाठ्यक्रमों) को पास करने पर यहां कर्मचारियों/अधिकारियों को हिन्दी प्रोत्साहन दिये जाते हैं। ये प्रोत्साहन इस निगम में दिसम्बर 1978 से लागू किये गये हैं और इनकी विस्तृत रूप-रेखा निगम के विभिन्न कार्यालयों में वितरित कर दी गई है।

हिन्दी में नोटिंग एवं ड्राफ्टिंग को बढ़ावा देने, कर्मचारियों को हिन्दी में कार्य करने की प्रेरणा देने तथा हिन्दी में कार्य करने के प्रति उनकी झिझक दूर करने के लिए निगम के प्रधान कार्यालय में अब तक दो हिन्दी कार्यशालाएं आयोजित की जा चुकी हैं जिनमें विषय के विशेषज्ञों से भाषण दिलवाकर कर्मचारियों को लाभान्वित किया गया है। भविष्य में भी हिन्दी कार्यशालाओं का आयोजन किया जायेगा।

प्रधान कार्यालय में प्रत्येक महीने का दूसरा तथा चौथा सोमवार हिन्दी दिवस के रूप में मनाया जाता है जिसमें यह कोशिश रहती है कि इन दिनों में अधिकतम काम हिन्दी में ही किया जाए।

प्रधान कार्यालय में विभागीय राजभाषा कार्यान्वियन समिति का गठन किया गया है जिसकी बैठकें हर तीसरे माह निगम के प्रबंध निदेशक की अध्यक्षता में होती है। इनमें लिये गये निर्णयों का पालन करवाने के लिए विभिन्न प्रभागों/कार्यालयों को अनुदेश भेजे जाते हैं तथा उनकी अनुपालन रिपोर्ट निगम के प्रधान कार्यालय में मंगाई जाती है।

केन्द्रीय अनुवाद ब्यूरो (गृह मंत्रालय), नई दिल्ली द्वारा चलाये जा रहे अनुवाद प्रशिक्षण के लिए यहां के अनुवादकों को प्रशिक्षण हेतु भेजा जाता है। निगम के अन्य कार्यालयों के कर्मचारियों को भी यह प्रशिक्षण दिलाया गया है।

संसदीय राजभाषा समिति की दूसरी उपसमिति ने हिन्दी के संबंध में इस निगम के विभिन्न कार्यालयों का निरीक्षण किया जिनमें अनेक कार्यालयों का निरीक्षण बहुत ही संतोषजनक रहा है जिसके लिए समिति ने उन्हें प्रशंसापत्र दिए हैं। समिति को दिए गए आश्वासनों की अनुपालन रिपोर्ट विभिन्न कार्यालयों से मंगाकर समिति को भेजी जाती है। तथा इस संबंध में हिन्दी के प्रगामी प्रयोग को बढ़ाने के लिये प्रधान कार्यालय से आवश्यक अनुदेश भेजे जाते हैं। हिन्दी की त्रैमासिक रिपोर्टों का संकलन निगम के विभिन्न कार्यालयों से मंगाकर किया जाता है तथा निर्धारित समय पर यह रिपोर्ट राजभाषा विभाग को भेजी जाती है।

इस निगम के विभिन्न कार्यालयों को अधिसूचित कराने के लिए संबंधित कार्यालयों से सूचना मंगाई गई थी जिनमें अनेक कार्यालयों ने यह सूचना भिजवा दी है तथा जिन कार्यालयों के 80 प्रतिशत से अधिक कर्मचारियों को हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान है उनकी सूची खाद्य-विभाग, कृषि एवं सिंचाई मंत्रालय, नई दिल्ली को भेज दी गई है तथा 22 कार्यालय अधिसूचित किये जा चुके हैं।

इस निगम के प्रधान कार्यालय द्वारा अपने उपक्रम की वार्षिक रिपोर्ट तैयार की जाती है, जो हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में जारी की जाती है। इसी प्रकार इस कार्यालय से "फूडकार्य" नामक मैगजीन प्रतिमाह निकलती है जिसमें निगम से संबंधित सूचना, लेख तथा अन्य रचनाएं हिन्दी और अंग्रेजी में होती है। यह मैगजीन विभिन्न मंत्रालयों, विभागों, निगमों आदि को वितरित की जाती है।

निगम के प्रधान कार्यालय में हिन्दी कक्ष भारत भर में स्थित निगम के कार्यालयों को हिन्दी कार्यान्वियन के लिये आवश्यक मार्गदर्शन देता है तथा हिन्दी की प्रगति पर भी नजर रखता है। प्रभावी कार्यान्वयन के लिये सभी आंचलिक/क्षेत्रीय कार्यालयों के लिये हिन्दी अनुवादकों तथा हिन्दी टाइपिस्टों तथा टाइपराइटरों की व्यवस्था है। समय-समय पर उनके द्वारा की गई प्रगति की जांच की जाती है तथा हिन्दी में कार्य करने को बढ़ावा देने के लिये यहां से सुझाव दिये जाते हैं। द्विभाषी व्यवस्था का अनुपालन किया जा रहा है। चैक प्वाइंट्स बनाकर इस अनुदेश सहित सभी को जारी कर दिये गये हैं कि उनके यहां से जारी होने वाले सभी सामान्य आदेशों, परिपत्रों एवं बैठकों के कार्यवृत्तों को हिन्दी में भी तैयार किया जाये। हिन्दी में प्राप्त पत्रों का उत्तर अनिवार्यत: हिन्दी में ही दें। रबड़ की मोहरें, नामपट्ट एवं साइनबोर्डों आदि को हिन्दी में बनवा लिये गये हैं।

निगम में हिन्दी के प्रयोग की आवश्यकता को देखते हुए तथा गृह मंत्रालय के आदेशों के अनुसार अब निगम के प्रत्येक आंचलिक, क्षेत्रीय एवं बंदरगाह कार्यालयों में आवश्यक सुविधायें जुटाई जा रही है। धीरे-धीरे हिन्दी के प्रति एक जागृति एवं उत्साह पैदा हुआ है।

इस प्रकार इस निगम में हिन्दी का प्रगामी प्रयोग दिन-प्रतिदिन बढ़ रहा है। यहां के कर्मचारी और अधिकारी हिन्दी-कार्य में रुचि ले रहे हैं और वह दिन दूर नहीं जब हिन्दी इस निगम में अपना समर्थ स्थान ग्रहण करेगी।

सेंट्रल बैंक, चण्डीगढ़ में हिन्दी

"बैंक तब तक जनसाधारण की सेवा का दावा नहीं कर सकते जब तक कि वे उनकी भाषा को अपने व्यवहार में नहीं लाते।" फिर सेंट्रल बैंक ने तो "हर जगह हर मनुष्य की सहायता" का व्रत लिया हुआ है। हमारे बैंक ने हिन्दी को अपने कामकाज में इसलिए अपनाया है क्योंकि सरकारी राजभाषा नीति का पालन करने के साथ-साथ इसका मुख्य उद्देश्य है देश के उन करोड़ों किसानों, लघु उद्यमियों तथा श्रमकर्ताओं में अपनी सेवाओं का प्रसार करना।

हमारे बैंक में हिंदी के प्रयोग में वृद्धि के लिए भारतीय रिजर्व बैंक द्वारा दिए गए कार्यक्रमों को प्रभावी ढंग से लागू करने तथा हिन्दी के प्रयोग की स्थिति की समीक्षा के लिए केन्द्रीय, क्षेत्रीय, मंडलीय तथा शाखा स्तरों पर राजभाषा कार्यान्वियन समितियां बनी हुई हैं जो संबंधित कार्यालयों के प्रशासनिक प्रधान की अध्यक्षता में कार्य कर रही हैं। हमारे बैंक का भरसक प्रयत्न है कि जनता से अधिक से अधिक संपर्क के लिए हिन्दी के साथ-साथ क्षेत्रीय भाषाओं को भी अपनाया जाए। इसी उद्देश्य से बैंक की समस्त प्रचार सामग्री, प्रेस नोट, नियंत्रण-पत्र आदि हिन्दी, अंग्रेजी तथा क्षेत्रीय भाषाओं में छपने के लिए दिए जाते हैं। इसी प्रकार बैंक में साइनबोर्ड, नामपट्ट आदि द्विभाषिक/त्रिभाषिक रूप में लगवाए गए हैं। बैंक की समस्त स्टेशनरी द्विभाषिक रूप में छपवाई जाती है तथा जनसंपर्क के सभी फार्म पहले से ही द्विभाषिक रूप में उपलब्ध कराए जाते रहे। सभी शाखाओं में हिन्दी हस्ताक्षर से चेक स्वीकार किए जाते हैं और इस आशय का पोस्टर भी बैंक की सभी शाखाओं में लगाया गया है। बैंक में द्विभाषिक मुहरों का प्रयोग तो अब पुरानी बात हो चली है।

बैंक द्वारा हिन्दी में प्राप्त पत्रों/आवेदनों के उत्तर हिन्दी में देने के साथ-साथ भाषिक क्षेत्र "क" एवं "ख" में जनता तथा बैंक ग्राहकों से पत्राचार में हिन्दी को ही प्राथमिकता दी जाती है। इसी उद्देश्य से हमारे बैंक द्वारा एक सौ पत्रों के नमूनों की पुस्तिका तैयार की गई है जिसमें ऋण तथा वसूली से संबंधित तकनीकी बातों, कार्मिक मामलों तथा जन-संपर्क से संबंधित अन्य पत्रों का भी समावेश किया गया है। इस पुस्तिका के बारे में भारत सरकार के वित्त मंत्रालय (बैंकिंग प्रभाग) के संयुक्त सचिव श्री बलदेव सिंह जी का विचार है कि—यह पुस्तिका अन्य बैंकों के लिए भी सुलभ एवं उपयोगी होगी तथा इन पत्रों के उपयोग से बैंकों में हिन्दी पत्र व्यवहार बढ़ेगा और बैंक जनता के करीब आएंगे।

बैंक के चंडीगढ़ रीजन में तीनों भाषिक क्षेत्रों हरियाणा तथा हिमाचल प्रदेश, पंजाब एवं संघीय प्रदेश, चंडीगढ़ तथा जम्मू-कश्मीर की शाखाओं में जनता की सुविधानुसार बैंक कामकाज में हिंदी के प्रयोग को स्थान दिया जा रहा है। बैंक कर्मचारियों को हिंदी में काम करने का अभ्यास डालने के लिए प्रेषण विभाग, उपस्थिति एवं वेतन पंजिका आदि में हिंदी के प्रयोग के लिए जोर दिया जाता है। साथ ही इस क्षेत्र में छोटे छोटे कई प्रशिक्षण कार्यक्रम अमृतसर, लुधियाना, चंडीगढ़ रोहतक में चलाए गए जिसमें लगभग 100 अधिकारी एवं अन्य कर्मचारियों को हिंदी में टिप्पण एवं पत्र लेखन का अभ्यास कराया गया। इस क्षेत्र के सभी जिलों में मुख्यत: पंजाबी भाषा-भाषी लोग हैं फिर भी हमारे कर्मचारियों और जनता में हिंदी के प्रति काफी उत्साह है।

भारतीय कृषि सांख्यिकीय अनुसंधान संस्थान दिल्ली में हिन्दी की प्रगति

जिस प्रकार अन्य सरकारी कार्यालयों में हिन्दी एकक/अनुभाग इत्यादि खोले गये उसी प्रकार भारतीय कृषि सांख्यिकीय अनुसंधान संस्थान में भी हिन्दी एकक का निर्माण हुआ वर्ष 1980 तक हिन्दी प्रयोग की प्रगति में अनेक उतार-चढ़ाव आए। कभी-कभी तो यहां पर हिन्दी एकक के कर्मचारियों को ऐसा आभास हुआ कि इस संस्थान में हिन्दी का प्रयोग बढ़ाना अत्यन्त कठिन है क्योंकि यह संस्थान वैज्ञानिक विषयों से सम्बद्ध है। फिर भी हिन्दी एकक के कर्मचारियों ने हिम्मत नहीं हारी और उन्होंने अपने प्रयासों को जारी रखा। वर्ष 1979 के नवम्बर माह में हिन्दी अनुवादक की नियुक्ति हुई और तब से हिन्दी के बिखरे प्रयोग को एक निश्चित दिशा देने हेतु कुछ पुरानी नीतियों एवं कुछ नई नीतियों को एक सूत्र में बांधा गया और आरम्भ से उनको लागू किया गया। इस काम में उच्च प्राधिकारियों का पूरा सहयोग मिला।

हिन्दी एकक के कर्मचारियों ने संस्थान के अन्य कर्मचारियों के बीच अपना ताल-मेल बैठाया और व्यक्तिगत संपर्क एवं बड़े ही सद्भावपूर्ण वातावरण में संस्थान के कर्मचारियों को हिन्दी में कार्य करने के लिए प्रोत्साहित किया और उनके मार्ग में आने वाली कठिनाइयों को अच्छी तरह से समझा और दूर किया। संस्थान के विभिन्न अनुभागों/प्रभागों/एककों के उपयोग में आने वाले अनेक अंग्रेजी प्रपत्रों का अनुवाद हिन्दी में किया गया और उन्हें द्विभाषी रूप में तैयार कर शीघ्र ही उपयोग में लाया गया। इसी प्रकार संस्थान में लगे समस्त नाम पट्टों को भी द्विभाषी रूप यानि कि अंग्रेजी एवं हिन्दी में तैयार करवा कर लगवाया गया। फिलहाल कार्यालय के उपयोग में आने वाली समस्त रबड़ मोहरें अंग्रेजी एवं हिन्दी में दोनों ही भाषा में हैं।

भारतीय कृषि सांख्यिकीय अनुसंधान संस्थान का कार्य तीन भागों में बंटा हुआ है। एक प्रशासनिक कार्य, दूसरा अनुसंधान कार्य एवं तीसरा अध्यापन कार्य। वर्ष 1980 से पूर्व प्रशासनिक कार्य अधिकतर अंग्रेजी में ही होता था किन्तु 1980 से लेकर 1981 तक 90 प्रतिशत प्रशासनिक कार्य हिन्दी में हो रहा है। जहां तक शोध कार्य का प्रश्न है उसमें भी वैज्ञानिक पूरा प्रयास कर रहे हैं कि हिन्दी का प्रयोग अधिक से अधिक किया जाए। कुछ आरम्भिक कठिनाइयां हैं जिन्हें दूर करना है। इन्हें दूर करने के लिए संस्थान के वैज्ञानिक हर संभव प्रयास कर रहे हैं। संस्थान में अध्यापन कार्य के संबंध में यह कहना है "चूंकि यह संस्थान अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति का है और देश विदेश के छात्र इसमें अध्ययन करते हैं इसलिए अध्यापन का माध्यम हिन्दी रखना कठिन ही नहीं असंभव है।" किन्तु फिर भी वैज्ञानिकों से आग्रह किया गया है कि वे शोध कार्य में हिन्दी का प्रयोग अधिक से अधिक करें। हम कह सकते हैं कि वर्ष 1980 और 1981 में संस्थान में हिन्दी का बोल-बाला रहा।

वर्ष 1980 में कुछ नवीन नीतियां निर्धारित की गयीं और उन्हें शीघ्र ही कार्यान्वित करने के लिए सर्वप्रथम संस्थान के कर्मचारियों के उपयोग में लाये गये विभिन्न प्रपत्रों का जो केवल अंग्रेजी में थे द्विभाषी रूप में बनाने का अभियान चलाया गया जिसके अन्तर्गत विभिन्न अनुभागों/प्रभागों/एककों के लगभग 90 प्रतिशत प्रपत्रों का हिन्दी अनुवाद किया गया। इन प्रपत्रों में गोपनीय रिपोर्ट, अग्रिम धन लेने से संबद्ध समस्त प्रपत्र, अर्जित अवकाश के प्रपत्र, गेट पासों, गाड़ी की मांग के प्रपत्र इत्यादि शामिल हैं। इसी प्रकार हिन्दी एकक का दूसरा अभियान था हिन्दी रबड़ मोहरों का बनवाना। इस अभियान के आरम्भ होते ही बची-खुची अंग्रेजी की रबड़ मोहरें भी हिन्दी में बनवा ली गयीं। इस समय हमारे यहां शायद ही कोई ऐसी रबड़ मोहर बकाया है जो हिन्दी में न हो।

हमारा तीसरा अभियान था। सेवा पुस्तिकाओं में प्रविष्टियां केवल हिन्दी में ही की जाएं। इसके लिए संबद्ध लिपिकों को प्रोत्साहित किया गया और अब प्रविष्टियां केवल हिन्दी में ही होती है। इसके बाद हिन्दी एकक ने संस्थान में जारी होने वाले आदेशों/परिपत्रों/ज्ञापनों इत्यादि पर हिन्दी का प्रहार किया और परिपत्र निकाल-निकाल कर तथा व्यक्तिगत सम्पर्क द्वारा सम्बद्ध लिपिकों/सहायकों एवं अधीक्षकों को इनका हिन्दी रूपान्तर भी निकालने के लिए प्रोत्साहित किया गया। इसके परिणाम स्वरूप कुछ द्विभाषी और कुछ केवल हिन्दी, आदेश/ज्ञापन/परिपत्र इत्यादि जारी होने प्रारम्भ हो गये। हिन्दी एकक के आंकड़े बताते हैं कि आजकल 100 प्रतिशत अवकाश के आदेश केवल हिन्दी में ही निकलते हैं और इसी प्रकार चतुर्थ श्रेणी कर्मचारियों को दिये जाने वाले परिपत्र/ज्ञापन/आदेश इत्यादि में से

80 प्रतिशत केवल हिन्दी में और 20 प्रतिशत द्विभाषी रूप में जारी किये जाते हैं। जहां तक टिप्पणियां लिखने का प्रश्न है वह भी 75 प्रतिशत हिन्दी में ही लिखी जाती हैं।

इसके सम्बन्ध में यह भी निर्णय लिया गया कि जो भी परिपत्र/ज्ञापन/आदेश इत्यादि केवल अंग्रेजी में जारी होते हैं उनके जारी करने वाले कर्मचारी को ज्ञापन देकर स्पष्टीकरण मांगा जाये। इससे भी हिन्दी के प्रयोग में काफी प्रभाव पड़ा है।

संस्थान में कर्मचारियों को हिन्दी का प्रशिक्षण देने के लिए एक कार्यशाला का आयोजन किया गया। इसमें लगभग 50 प्रशिक्षार्थियों ने भाग लिया। यह कार्यशाला काफी सफल रही। कार्यशाला के अन्त में सामान्य हिन्दी की एक परीक्षा का आयोजन किया गया जिसमें 23 परीक्षार्थियों ने भाग लिया और सभी ने परीक्षा में सफलता प्राप्त की और तीन परीक्षार्थियों ने प्रथम, द्वितीय और तृतीय स्थान प्राप्त किया जिन्हें संस्थान में स्थापित केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद् की शाखा के वार्षिक महोत्सव पर पुरस्कार दिये गये। ये तीनों पुरस्कार अहिन्दी भाषी परीक्षार्थियों ने प्राप्त किये।

गत वर्ष संस्थान में राजभाषा कार्यान्वयन समिति को चार बैठकों का आयोजन किया गया जिसके अन्तर्गत संस्थान में हिन्दी प्रसार के विभिन्न पहलुओं पर विचार-विमर्श कर नीतियां बनाई गयीं और उनको लागू किया गया। इसी प्रकार हिन्दी के प्रयोग से सम्बन्धित तिमाही रिपोर्ट भी एकत्रित की गयी। निसंदेह इस तिमाही रिपोर्ट को संकलित करने में विलम्ब हो जाता है किन्तु यह कार्य पूर्णरूपेण किया जाता है। आगे प्रयास किये जा रहे हैं कि यह रिपोर्ट संकलित करने में विलम्ब न हो।

संस्थान में हिन्दी के बढ़ते चरणों को देखते हुए केन्द्रीय सचिवालय हिन्दी परिषद की शाखा खोलने की आवश्यकता महसूस की गयी ताकि संस्थान हिन्दी को प्रोत्साहन देने से सम्बद्ध विभिन्न नवीन नीतियों से अवगत रहे और संस्थान में हिन्दी के प्रसार में अधिक तीव्रता आ सके। संस्थान में शाखा के गठन से निसंदेह संस्थान को नवीन नीतियां मिली और उनको शीघ्र लागू भी किया गया। इसी वर्ष से संस्थान के कर्मचारियों के मार्ग में आने वाली कठिनाइयों को दूर करने के निमित्त 'हिन्दी प्रसारिका' नामक एक छमाही पत्रिका का प्रकाशन आरम्भ किया गया तथा हिन्दी में श्रेष्ठ कार्य करने वाले कर्मचारियों को पुरस्कार दिये गये। इसमें कोई शक नहीं कि हिन्दी में काम करने वाले कर्मचारियों को प्रोत्साहन पुरस्कार दिये जाने से उनमें हिन्दी में कार्य करने की उत्कण्ठा बढ़ेगी और उनके रास्ते में आने वाली कठिनाइयां हिन्दी प्रसारिका दूर करेगी।

आर्डनेंस फैक्टरी खमरिया, जबलपुर में वार्षिक राजभाषा समारोह

आर्डनैन्स फैक्टरी, खमरिया की राजभाषा कार्यान्वयन समिति के तत्वावधान में दिनांक 15/3/1982 को आठवें वार्षिक राजभाषा समारोह का आयोजन जबलपुर विश्वविद्यालय के हिन्दी विभागाध्यक्ष डा० त्रिलोचन पाण्डे के मुख्य अतिथि एवं आर्डनैन्स फैक्टरी खमरिया के अस्थायी प्रभारी अधिकारी श्री एस० आर० सभापति की अध्यक्षता में संपन्न हुआ। विविध प्रतियोगिताओं में पुरस्कृत प्रतियोगियों को पुरस्कार एवं प्रशस्ति-पत्र वितरित करते हुए डा० पाण्डे ने कहा कि सांस्कृतिक हिन्दी की अपेक्षा सामान्य बोल-चाल की भाषा का प्रयोग हिन्दी के विकास में अधिक सहायक हो सकता है।

समारोह के अध्यक्ष श्री एस० आर० सभापति ने राजभाषा कार्यक्रमों के कार्यान्वयन के बारे में हो रही प्रगति पर प्रकाश डालते हुए कहा कि कार्यालयों में अधिकाधिक कार्य हिन्दी में देवनागरी लिपि में हों, ऐसे प्रयास किये जाने चाहिये। हमें अपने दैनिक जीवन में सरकारी कामकाज के साथ-साथ निजी कार्यों में भी राजभाषा का अधिकाधिक प्रयोग करने का संकल्प लेना चाहिये। कार्यक्रम के द्वितीय चरण में हुआ कवि सम्मेलन समारोह का प्रमुख आकर्षण रहा। श्री ओंकार तिवारी का व्यंग्य महाभारत के पात्र आधुनिक परिवेश में, श्रीमती पूर्णिमा निगम की गज़लें जहां खूब सराही गई वहीं व्यंग्य-कवि श्री गंगा पाठक के हिन्दी के प्रचार-प्रसार के आडम्बर तथा रेल-दुर्घटनाओं पर तीखे व्यंगों ने बेहद वाहवाही लूटी। कवि-सम्मेलन का संचालन श्री ओंकार तिवारी ने किया।

श्री एस० आर० सभापति अध्यक्षीय भाषण देते हुए

आरंभ में राजभाषा कार्यान्वयन समिति के अध्यक्ष श्री गिरिराज अग्रवाल ने अतिथियों का परिचय एवं स्वागत करते हुए कहा कि जिस तरह संपूर्ण राष्ट्र को एकता के सूत्र में बांधने के लिए जितना एक झंडा और एक संविधान आवश्यक

है उतना ही एक राजभाषा भी आवश्यक है। राजभाषा कार्यान्वयन समिति के सचिव श्री दिनेश मोहन गुप्ता ने अपने प्रतिवेदन में कहा कि हम पिछले सात वर्षों से वार्षिक राजभाषा समारोह सफलता पूर्वक मनाते आ रहे हैं जिसका मुख्य उद्देश्य कर्मचारियों को अपना सरकारी काम-काज राजभाषा में करने के लिए प्रोत्साहित करना है जिसमें हमें आशातीत सफलता भी प्राप्त हुई है।

इंडियन फारमर्स फर्टिलाइजर कोआपरेटिव लिमिटेड में राजभाषा हिन्दी

इंडियन फारमर्स फर्टिलाइजर कोआपरेटिव लिमिटेड (इफको) देश के 16 राज्यों और तीन संघ शासित प्रदेशों में फैली 27750 सहकारी समितियों का एक महासंघ है। इसकी स्थापना मल्टीयूनिट कोआपरेटिव सोसायटीज ऐक्ट के अधीन की गयी है। और यह एक राष्ट्रीय सहकारी समिति है।

इसके सभी कार्यालयों में भारत सरकार की राजभाषा नीति, राजभाषा अधिनियम और राजभाषा नियमों के अनुसार हिन्दी का प्रयोग उत्तरोत्तर बढ़ाने की दिशा में निरन्तर प्रयत्न किया जा रहा है। समिति का कार्य तकनीकी और व्यवसायिक किस्म का होने के कारण इस विषय में सरकार द्वारा निर्धारित नीति को पूरी तरह लागू करने में कुछ व्यावहारिक कठिनाइयां हैं, फिर भी इफको के कामकाज में हिन्दी का प्रयोग बढ़ाने के लिए सभी सम्भव प्रयास किए जा रहे हैं।

इफको मुख्यालय में काम करने वाले कर्मचारियों की कुल संख्या 240 है, जिनमें से 55 कार्यपालक अधिकारी और 185 गैर कार्यपालक कर्मचारी हैं। हमारे कार्यालय में 55 कार्यपालक अधिकारियों में से 23 अधिकारियों को हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान है और 15 अधिकारियों को हिन्दी में प्रवीणता प्राप्त है। शेष 17 कार्यपालक अधिकारियों को हिन्दी का शिक्षण देना शेष है। 185 गैर कार्यपालक कर्मचारियों में से 93 कर्मचारियों को हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान है और 70 कर्मचारियों को हिन्दी में प्रवीणता प्राप्त है। शेष 22 गैरकार्यपालक कर्मचारियों को हिन्दी में शिक्षण देना शेष है।

इफको के मुख्यालय तथा कांडला और फूलपुर स्थित संयंत्रों में राजभाषा कार्यान्वयन समिति का गठन किया जा चुका है तथा कलोल स्थित संयंत्र और मंडलीय कार्यालयों को भी इसके गठन के लिए निर्देश दिये जा चुके हैं। जिन कार्यालयों में राजभाषा कार्यान्वयन समिति का गठन हो चुका है वहां यह समितियां बहुत प्रभावी ढंग से कार्य कर रही हैं तथा हिन्दी का प्रयोग बढ़ रहा है।

हिन्दी परीक्षाएं पास करने पर कर्मचारियों को नकद पुरस्कार, नकद प्रोत्साहन पुरस्कार और निजी प्रयत्नों से हिन्दी शिक्षण प्राप्त करने वालों के लिए एक मुश्त पुरस्कार आदि की एक आकर्षक योजना विचाराधीन है और शीघ्र ही लागू कर दी जाएगी। इस योजना में, हिन्दी में अपना कामकाज करने वाले सहायकों तथा टाइपिस्टों और स्टेनोग्राफरों को तीन वर्ष तक के लिए भी कुछ आर्थिक लाभ दिये जाने की व्यवस्था है।

वर्ष 1981 के दौरान मई मास तक तीन अधिकारियों को हिन्दी शिक्षण योजना के अधीन चलाये जा रहे केन्द्रों में हिन्दी प्रशिक्षण लेने के लिए भेजा गया और अन्य चार अधिकारियों/कर्मचारियों को हिन्दी शिक्षण के लिए मनोनीत कर दिया गया है। अंग्रेजी के टाइपिस्टों और आशुलिपिकों को हिन्दी आशुलिपि और टाइपराइटिंग प्रशिक्षण के लिए धीरे-धीरे भेजा जाएगा।

इफको के कार्यालयों में कहीं से भी प्राप्त हिन्दी पत्रों का उत्तर हिन्दी में ही दिया जाता है। 'हिन्दी भाषी क्षेत्रों में स्थित इफको के कार्यालयों से पत्र व्यवहार करते समय यथासंभव हिन्दी भाषा का प्रयोग करने का प्रयास किया जा रहा है। औद्योगिक स्थापना (स्थायी आदेश) अधिनियम 1946 और अन्य श्रम कानूनों के अधीन सभी आदेश, स्थायी प्रकृति के सभी अन्य नोटिस/परिपत्र और सभी फार्म और रजिस्टरों के शीर्ष आदि अंग्रेजी के साथ-साथ हिन्दी में भी जारी करने के प्रयास किए जा रहे हैं। सभी रबड़ की मोहरें, साइन बोर्ड, नामपट्ट आदि द्विभाषी करा लिये गये हैं और पत्र शीर्ष फाइल कवर, लिफाफे तथा अन्य लेखन सामग्री भी द्विभाषी छपवा ली गयी है। यह बड़े हर्ष का विषय है कि इफको कार्यालय के वरिष्ठतम अधिकारी भी हिन्दी की फाइलों पर केवल हिन्दी में टिप्पणियां लिखते हैं।

राजभाषा संसदीय समिति द्वारा इफको मुख्यालय कार्यालय और चंडीगढ़ स्थित मंडलीय कार्यालय का अभी हाल में निरीक्षण किया गया। कार्यालयों में हिन्दी की प्रगति पर समिति के सदस्यों ने सन्तोष प्रकट किया तथा कुछ बहुमूल्य सुझाव भी दिये जिनके लिए कार्यालय की ओर से उन्हें पूरी तरह व्यवहार में लाने का प्रयास किया जा रहा है। इफको के चंडीगढ़ कार्यालय का संसदीय राजभाषा समिति द्वारा निरीक्षण के समय यह स्पष्ट किया गया कि भविष्य में इफको उर्वरकों के बोरों पर एक तरफ हिन्दी और एक तरफ अंग्रेजी में छपाई होगी। इस प्रकार हिन्दी भाषा का प्रचार देश के कोने-कोने में होगा तथा इफको के इतिहास में यह निर्णय राजभाषा हिन्दी की प्रगति की दिशा में एक मील का पत्थर साबित होगा।

हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान रखने वाले अपने अधिकारियों और कर्मचारियों को हिन्दी में नोटिंग और ड्राफ्टिंग

का प्रशिक्षण देने के लिए नेहरू प्लेस में स्थित अन्य कार्यालयों द्वारा चलाई जा रही कार्यशालाओं में समय समय पर भेजा जाता रहा है। गत वर्ष इस प्रकार की हिन्दी कार्यशाला में चार कर्मचारियों को नामित किया गया था और इस वर्ष पैट्रोलियम और रसायन मंत्रालय द्वारा चलाई जा रही हिन्दी कार्यशाला में पांच कर्मचारियों को भेजा गया। निकट भविष्य में इफको के मुख्यालय में भी इसी प्रकार की कार्यशालाएं आयोजित करने का प्रस्ताव विचाराधीन है ताकि और अधिक से अधिक अधिकारियों/कर्मचारियों को हिन्दी में नोटिंग और ड्राफ्टिंग का प्रशिक्षण दिया जा सके।

सु० टी० खुशलानी, प्रबंधक
(सहकारिता संपर्क)

रूप अनेक : भाव एक

[पिछले अंक में एक विशेष मुहावरे को लेकर भारतीय भाषाओं की मूलभूत एकता का उदाहरण दिया गया था। इस बार एक बोलचाल के एक वाक्य को केन्द्र में रखकर विभिन्न भारतीय भाषाओं के उसी तत्व को आपके सामने उपस्थित किया जा रहा है। वाक्य है "देखिये बाहर कौन आया है" यहां संस्कृत मूल "पश्य, बहि: केनागतम्" को केन्द्र में रखकर इस तथ्य को देखा जाये। संस्कृत बहि: का पंजाबी में बाहर, कश्मीरी में नेबरु, सिंधी में बाहिरी रूप मिलता है। मराठी और गुजराती में क्रमश: बाहेर तथा बहार के रूप मिलते हैं। बांगला में बाहिरे, असमिया में बाहिरत तथा ओड़िया में बहारे मिलता है। दक्षिण की भाषाओं में तेलुगु में एव्वरो, तमिल में वासलिल्, मलयालम में वेलियिल, तथा कन्नड़ में होरगे के रूप दीख पड़ते हैं। इसी प्रकार केन, संस्कृत, शब्द से पंजाबी, कौण, काश्मीरी कुस, सिंधी केरु, मराठी कौण, गुजराती कौण, बांगला के, असमिया कोण, ओड़िया किए, के रूप देखे जा सकते हैं। आगतम् का रूपान्तरण पंजाबी में, आया है, काश्मीरी में ओभुत, सिंधी में आयो आ, मराठी में आहे पहा, गुजराती में "आव्यू छे" बांगला में 'एशेछे असमिया में' आसे, तथा ओड़िया में आँछि के रूप देखे जा सकते हैं।]

भाषायें	वाक्य
1. संस्कृत :	पश्य, बहि: केनागतम्?
2. हिन्दी :	देखिये, बाहर कौन आया है?
3. पंजाबी :	देखो बाहर कौण आया ए?
4. उर्दू :	देखिये, बाहर कौन् आया है?
5. कश्मीरी :	वुछिव् नेबरॅ कुसछु आमुत?
6. सिन्धी :	डिस्सु बाहिरि केरु आयो आ?
7. मराठी :	बाहेर कोण आल आहे पहा?
8. गुजराती :	जो तो, बहार कॉण् आव्यू छे?
9. बांगला :	देखुन तो, बाहिरे के एशेछे?
10. असमिया :	सोवासुन, बाँहिरॉट् कोन आसे?
11. ओड़िया :	देखाँ, बाहारे किए आछि?
12. तेलुगु :	चूडु बयटिकि एव्वरो वच्चारू?
13. तमिल :	पार, वेलियिल यारॅ वंदिरुक्किरार?
14. मलयालम :	नोक्कु, वेल्लियिल आराणु?
15. कन्नड़ :	नोडु, होरगे यारु बंदिद्दारे?

—(प्रस्तोता : रंग नाथ राकेश)
उपसंपादक

□ □ □

समीक्षा

(1) हिन्दी आन ट्रायल : लेखक—सुधाकर द्विवेदी

प्रकाशक—विकास पब्लिशिंग हाउस प्राइवेट लिमिटेड (पृष्ठ-संख्या 346)

हिन्दी के संबंध में अनेक विद्वानों ने समय-समय पर अपने विचार व्यक्त किए हैं। स्वतंत्रता संग्राम के दिनों में राष्ट्र भाषा के गौरव से मंडित इस भाषा के प्रचार-प्रसार के लिए हिन्दी भाषी क्षेत्रों के राष्ट्रीय मनीषियों से अधिक मुखर स्वर अहिन्दी भाषी क्षेत्रों के महापुरुषों का रहा है। लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक, राष्ट्रपिता महात्मा गांधी, गुरूदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर, स्वामी दयानन्द सरस्वती, नेताजी सुभाष चन्द्र बोस आदि सभी की मातृभाषा हिन्दी से भिन्न थी। किन्तु इन सभी महानुभावों ने हिन्दी को ही सारे राष्ट्र की राष्ट्रभाषा बनाने पर जोर दिया। भारत के जिस किसी चिंतक ने अखिल भारतीय स्तर पर किसी एक राष्ट्र-भाषा की कल्पना की, उसने हिन्दी को ही इसकी अधिकारिणी घोषित किया।

मनीषियों के इस चिंतन का प्रतिफल संविधान द्वारा 1950 में हिन्दी को संघ की राजभाषा घोषित किए जाने के रूप में प्राप्त हुआ। किन्तु सरकारी कर्मचारियों को, विशेषकर अहिन्दी भाषियों को हिन्दी का अपेक्षित ज्ञान प्राप्त करके राजभाषा के रूप में इसका प्रयोग करने के लिए 15 वर्षों की अवधि प्रदान की गई और 1965 से इसे पूर्णरूपेण संघ सरकार की राजभाषा स्वीकार किए जाने की प्रकल्पना की गई। किन्तु विभिन्न कठिनाइयों के कारण अभी तक ऐसा नहीं हो पाया है। फिर भी हिन्दी के विकास और प्रसार की प्रक्रिया सतत जारी है।

पिछले कई वर्षों में सरकारी स्तर पर हिन्दी के विकास, प्रचार, प्रसार, प्रयोग और नीति-निर्धारण से जिन वरिष्ठ अधिकारियों का घनिष्ठ संबंध रहा है, उनमें से एक हैं श्री सुधाकर द्विवेदी। वे सन 1970 से 1978 के बीच गृह मंत्रालय के राजभाषा विभाग में उपसचिव, निदेशक और संयुक्त सचिव के पद पर कार्य कर चुके हैं। वे केन्द्रीय अनुवाद ब्यूरो के निदेशक तथा संसदीय राजभाषा समिति के सचिव भी रह चुके हैं। विभिन्न मंत्रालयों में गठित हिन्दी सलाहकार समितियों, केन्द्रीय राजभाषा कार्यान्वयन समिति तथा प्रधान मंत्री जी की अध्यक्षता में गठित केन्द्रीय हिन्दी समिति से भी उनका घनिष्ठ संबंध रहा है। परिणाम-स्वरूप राजभाषा हिन्दी की सांविधानिक एवं कानूनी स्थिति के साथ-साथ उसके प्रयोग की सूक्ष्मतम प्रवृत्तियों का उन्हें गहरा अनुभव प्राप्त था। 'हिन्दी आन ट्रायल' नामक पुस्तक में उन्होंने अपने इसी विशाल अनुभव और सूक्ष्मग्राही दृष्टि से हिन्दी की समस्याओं को परत-दर-परत उभारा है, उनकी बेबाक विवेचना की है और एक जागरूक अन्वीक्षक की भांति उन्होंने हिन्दी की अनेक उलझी समस्याओं का समाधान प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

पुस्तक उठाते ही पाठक के सम्मुख हिन्दी का विशाल पट उन्मुक्त हो जाता है और चलचित्र की भांति एक-एक घटनाएं परदे पर स्पष्ट दृष्टिगोचर होने लगती हैं। लेखक ने कठिन स्थितियों का वर्णन करते हुए भी अपनी तटस्थता कायम रखी है और वह सदैव जलज की भांति पंक से ऊपर रहा है। इससे उसने हिन्दी की सुगंध तो सर्वत्र फैलाई ही है, उसका औदार्य भी उजागर किया है। इस पुस्तक में राष्ट्रीय जागरण काल से लेकर 1980 तक की राजभाषा से संबंधित घटनाओं और परिस्थितियों का विशद विवरण दिया गया है और हिंदी के थोपे जाने के संबंध में व्याप्त निर्मूल धारणाओं के निराकरण का भी प्रयास किया गया है।

सरकारी कार्यालयों में हिन्दी के प्रयोग संबंधी कार्यक्रमों का व्यापक चित्रण करने के साथ-साथ लेखक उसकी कमियों पर भी प्रहार करने से चूका नहीं है और इसकी सफलता के लिए अनेक नए सुझाव दिए हैं। इस कार्य का संचालन/पर्यवेक्षण करने वाले हिन्दी सलाहकारों के वैयक्तिक संपर्क और संस्पर्श की अच्छी झांकी भी इस पुस्तक में देखने को मिलती है।

हिन्दी की समस्याओं पर हिन्दी में अनेक पुस्तकें लिखी गई हैं, जिसका परिणाम यह हुआ है कि केवल हिन्दी भाषी ही उसका लाभ उठा सकें हैं। लेखक ने इस कमी को दूर करने के लिए इसे अंग्रेजी में लिखा है, ताकि वे लोग भी, जो हिन्दी की समस्याओं, उसकी समृद्धि, और उसके प्रयोग को दूर से देखते हैं और अपने अधकचरे ज्ञान के कारण उस पर झूठे आरोप लगाते हैं, वे भी इन्हें समझ सकें। हिन्दी प्रेमियों की इच्छापूर्ति के लिए लेखक ने निकट भविष्य में इसका हिन्दी संस्करण भी प्रकाशित करने की योजना बनाई है।

राजभाषा हिन्दी की समस्याओं से जूझने वाले विचारकों, पाठकों, सरकारी कर्मचारियों आदि के लिए यह पुस्तक अत्यन्त उपयोगी है। लेखक का विशद प्रयास सराहनीय है। आशा है, इससे पाठकों को हिन्दी की बहुमुखी प्रगति, समस्याओं, कठिनाइयों और समाधानों को समझने में अच्छी सहायता मिलेगी।

—राजमणि तिवारी
संपादक

(2) जर्नल आफ इंस्टिट्यूशन आफ इंजीनियर्स इण्डिया (जिल्द 62, खण्ड-28, गोखले रोड, कलकत्ता—20)

हिन्दी पर प्रायः यह आरोप लगाया जाता रहा है कि उसमें वैज्ञानिक और तकनीकी विषयों की अभिव्यंजना-शक्ति का अभाव है लेकिन "जर्नल आफ दि इंस्टिट्यूशन आफ इंजीनियर्स" कलकत्ता का "कृषि इंजीनियरी" विशेषांक देखकर यह अभियोग बिल्कुल गलत सिद्ध होता है।

विशेषांक के सम्पादक-मण्डल में कृषि मंत्रालय, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् के वरिष्ठतर अधिकारी और आधिकारिक विद्वान शामिल हैं। इंजीनियरी विषय से सम्बद्ध और उसके कई तकनीकी पहलुओं को यहां बड़ी सहजता और सरलता से स्पष्ट किया गया है। "हिन्दी में कृषि साहित्य" एक लघु किन्तु विशिष्ट लेख है। इस लेख में पं० वीरसेन वेदश्रमी ने वैदिक साहित्य से उचित उद्धरण देकर यह सिद्ध किया है कि यज्ञ एक अनुपम फर्टिलाइज़र है, सिंचाई का महान साधन है और फसलों को कीड़े-मकोड़ों से बचाने की जोरदार औषधि भी है।

ऐसे वैदिक उद्धरण जहां-तहां दीख पड़ते हैं जो उचित स्थानों पर दिए गए हैं। "पृथिवी च यज्ञेन कल्पन्ताम्" (यजुर्वेद 18/12) अर्थात् यज्ञ के माध्यम से पृथिवी को उपजाऊ और समर्थ बनाया जा सकता है। यह लेख विचारोद्रेककारी है। पृष्ठ 63-67 पर यंत्रीकरण द्वारा कपास की खेती में सुधार, नई जानकारी देता है। इसी प्रकार हार्वेस्टर (कटाई, गहाई, भूसी की सफाई वगैरह करने वाला यंत्र) ट्रैक्टर तथा कृषि में उपयोगी अन्य यंत्रों के बारे में भी इस विशेषांक में काफी महत्वपूर्ण सामग्री दी गई है।

भारतीय कृषि में अधिक उत्पादन के लिए यंत्रीकरण की प्रक्रिया अत्यन्त आवश्यक है। यह भी सच है कि भारत की कल्पना भारतीय गांव को अलग रखकर नहीं की जा सकती और गांव की कल्पना के साथ गाय, बैल, बछड़े कहीं-न-कहीं जुड़े हैं। बैल परंपरागत रूप से ऊर्जा का साधन रहा है। शिव के वाहन के रूप में बैल की ही सवारी का पौराणिक आख्यान इस बात को सिद्ध करता है कि कल्याण के वाहन पशुधन ही हैं। "शिव" का दूसरा अर्थ "कल्याण" होता है। शक्ति की उपयोगिता के बारे में स्मिति गुप्ता, मणिप्रभा तथा नन्दलाल मौर्य ने पशु-शक्ति के प्रभावशाली उपयोग पर बल दिया है। हमारे देश में जहां इतनी बेकारी है, इस यंत्रीकरण की होड़ में शामिल होना वहां सरासर नाजायज़ लगता है—ऐसी धारणा इन तीनों ने ही व्यक्त की है।

रासायनिक गैसों, बायोगैस प्लांट तथा सौर ऊर्जा पर (पृष्ठ 66-104) अच्छा प्रकाश डाला गया है। धान की भूसी का प्रयोग ईंधन के रूप में किसी मात्रा तक किया जा सकता है, इसे ऊर्जा के एक वैकल्पिक साधन के रूप में ग्रहण किया जा सकता है, ऐसा मत प्रभातकुमार श्रीवास्तव और रवीश चन्द्र माहेश्वरी का है। उन्नत कृषि यंत्र के रूप में बैलगाड़ियों की सुधरी हुई किस्म, जुताई के हल, निराई-गुड़ाई के यंत्र, बुवाई-खुदाई के यंत्र आदि पर भी इस अंक में अच्छी सूचनाएं तथा जानकारी मिलती है।

उपनिषदों में कहा गया है—'अन्नं वै प्राणाः।' भोजन की खोज ही सब खोजों का मूलाधार है। श्रीमती इंदिरा गांधी के शब्दों में—वर्तमान ऊर्जा-खपाऊ और श्रम-बचाऊ तकनीकों से, जिनका सूत्रपात विकसित राष्ट्रों ने कटाई उपरान्त तकनीकी के रूप में किया है, एक ओर जहां भारतीय ग्रामवासियों को बहुत हानि पहुंचा रही है, वहीं दूसरी ओर ऊर्जा की मांग भी बहुत जोरों से बढ़ा रही है।"

इस विशेषांक को देखकर निस्संकोच कहा जा सकता है कि हिन्दी इंजीनियरी विषय का माध्यम भी बन सकती है। इंजीनियरी के विश्वविद्यालयों तथा प्रौद्योगिक संस्थानों (आई०आई०टी०) में हिन्दी को भी अब शिक्षण और प्रशिक्षण का माध्यम बेझिझक बनाया जा सकता है। यह विशेषांक इस दृष्टि से एक ठोस सशक्त कदम का काम करेगा।

—रंगनाथ राकेश
उपसंपादक

भारतीय ज्ञानपीठ पुरस्कार विजेताओं की सूची

कृति–शीर्षक	कृतिकार	विधा	भाषा	पुरस्कार-वर्ष
1. ओटक्कुषल्	श्री जी० शंकर कुरुप	कविता	मलयालम	1965
2. गणदेवता	श्री ताराशंकर वन्द्योपाध्याय	उपन्यास	बांङला	1966
3. श्री रामायण दर्शनम्	डा० कु० वे० पुट्टप्पा	कविता	कन्नड़	1967 } सहविजेता
4. निशीथ	डा० उमाशंकर जोशी	कविता	गुजराती	1967 } सहविजेता
5. चिदम्बरा	श्री सुमित्रानन्दन पन्त	कविता	हिन्दी	1968
6. गुलेनग्मा	श्री फ़िराक़ गोरखपुरी	कविता	उर्दू	1969
7. रामायण कल्पवृक्षमु	डा० विश्वनाथ सत्यनारायण	कविता	तेलुगू	1970
8. स्मृति सत्ता भविष्यत्	श्री विष्णुदे	कविता	बांङला	1971
9. उर्वशी	डा० रामधारी सिंह 'दिनकर'	कविता	हिन्दी	1972
10. नाकुतन्ती	डा० द० रा० बेन्द्रे	कविता	कन्नड़	1973 } सहविजेता
11. माटीमटाल	श्री गोपीनाथ महान्ती	उपन्यास	ओड़िया	1973 } सहविजेता
12. ययाति	श्री वि० स० खाण्डेकर	उपन्यास	मराठी	1974
13. चित्तिरप्पावै	श्री पे० वे० अखिलण्डम्	उपन्यास	तमिल	1975
14. प्रथम प्रतिश्रुति	श्रीमति आशापूर्णा देवी	उपन्यास	बांङला	1976
15. मुकज्जिय कनसुगलु	डा० शिवराम कारंत	उपन्यास	कन्नड़	1977
16. कितनी नावों में कितनी बार	श्री स० ही० वा० अज्ञेय	कविता	हिन्दी	1978
17. मृत्युंजय	डा० वीरेन्द्र कुमार भट्टाचार्य	उपन्यास	असमिया	1979
18. ओरु देशत्तिन्ते कथा	एस० के० पोट्टेक्काट	यात्रा वृतान्त	मलयालम	1980
19. कागज़ और कैनवस	श्रीमति अमृता प्रीतम	कविता	पंजाबी	1981

राजभाषा विभाग का वर्ष 1982-83 का कार्यक्रम

सं० 1/13011/3/81—रा० भा० (क–1)

भारत सरकार, गृह मंत्रालय
राजभाषा विभाग

नई दिल्ली, दिनांक 15 मई, 1982

कार्यालय ज्ञापन

विषय—संघ के विभिन्न सरकारी प्रयोजनों के लिए हिन्दी के उत्तरोत्तर प्रयोग के संबंध में वर्ष 1982–83 (अप्रैल, 1 1982 से 31 मार्च, 1983 तक) के लिए कार्यक्रम

गृह मंत्रालय द्वारा 18 जनवरी, 1968 को जारी किए गए संकल्प (संख्या 5/8/65–रा० भा०) में की गई व्यवस्था के अनुसार संघ के विभिन्न सरकारी प्रयोजनों के लिए केन्द्रीय सरकार के मंत्रालयों/विभागों/कार्यालयों/उपक्रमों आदि में हिन्दी के उत्तरोत्तर प्रयोग के संबंध में राजभाषा विभाग हर साल एक वार्षिक कार्यक्रम तैयार करता है। इस सिलसिले में "क", "ख" तथा "ग" क्षेत्र में स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों के लिए वर्ष 1981–82 का वार्षिक कार्यक्रम इस विभाग के कार्यालय ज्ञापन संख्या 1/13011/1/81 रा० भा० (क–1) दिनांक 2 जून, 1981 द्वारा जारी किया गया था।

2. वर्ष 1982–83 के लिए वार्षिक कार्यक्रम तैयार करने के संबंध में इस विभाग के 22 दिसम्बर, 1981 के समसंख्यक कार्यालय ज्ञापन द्वारा सभी मंत्रालयों आदि से अपने सुझाव भेजने का अनुरोध किया गया था। अधिकांश मंत्रालयों/विभागों ने यह सुझाव दिया है कि क्योंकि वर्ष 1981–82 के कार्यक्रम में शामिल विभिन्न मदों के निर्धारित लक्ष्य अभी पूरे नहीं किए जा सके हैं, इसलिए यह उपयुक्त होगा कि पिछले वर्ष के कार्यक्रम में निर्धारित लक्ष्यों को इस वर्ष भी लागू रखा जाए। इस विभाग का भी मोटे तौर पर यही अनुमान है किन्तु राजभाषा नियम 1976 की अपेक्षाओं को देखते हुए इसमें कुछ साधारण परिवर्तन किए गए हैं। कृपया इन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए सघन उपाय किए जाएं। इस दृष्टि से "क", "ख" तथा "ग" तीनों क्षेत्रों में स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों के लिए 1982–83 के कार्यक्रमों की एक-एक प्रति संलग्न है।

3. अनुरोध है कि वर्ष के दौरान इन कार्यक्रमों में दिए गए लक्ष्यों को पूरा करने के लिए भरसक प्रयत्न किए जाएं और राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठकों में इसकी नियमित समीक्षा की जाए। यह भी अनुरोध है कि राजभाषा विभाग को भेजी जाने वाली तिमाही प्रगति रिपोर्टों में इस कार्यक्रम के कार्यान्वयन की स्थिति का पूरा विवरण भेजा जाए। यदि निर्धारित प्रपत्र में सभी सूचनाएं न आ सकें तो उन्हें विशेष टिप्पणी के रूप में अन्त में दे दिया जाए। सभी रिपोर्टें संबन्धित मंत्रालय/विभाग के राजभाषा के कार्य से संबंधित संयुक्त सचिव के हस्ताक्षर से भेजी जाएं। इसके अतिरिक्त दिसम्बर, 1982 की रिपोर्ट 31 जनवरी, 1983 तक अवश्य भेज दी जाए, जिससे रिपोर्ट के आधार पर प्रगति का मूल्यांकन करके उसे प्रधान मंत्री जी की अध्यक्षता में गठित केन्द्रीय हिन्दी समिति की बैठक में समय पर प्रस्तुत किया जा सके।

4. वित्त मंत्रालय आदि से अनुरोध है कि वे अपने सभी संबंधित विभागों, कार्यालयों, उपक्रमों आदि को आवश्यक अनुदेश जारी करें और संलग्न कार्यक्रम की प्रति भेजते हुए उनसे कार्यक्रम में निर्धारित लक्ष्यों को पूरा किया जाना सुनिश्चित करने का अनुरोध करें।

5. जारी किए गए अनुदेशों की एक प्रति सूचना के लिए इस विभाग को भी भेज दें।

देवेन्द्र चरण मिश्र
निदेशक, भारत सरकार
फोन—619521

सेवा में,

1. भारत सरकार के सभी मंत्रालय/विभाग।
2. संघ लोक सेवा आयोग।
3. भारत के नियंत्रक व महालेखा परीक्षक।
4. निर्वाचन आयोग
5. सतर्कता आयोग
6. राजभाषा विभाग और गृह मंत्रालय के सभी सम्बद्ध और अधीनस्थ कार्यालय।

I

"क" क्षेत्र अर्थात् उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश, राजस्थान, हरियाणा और हिमाचल प्रदेश राज्यों तथा संघ राज्य क्षेत्र दिल्ली में स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों के लिए 1982–83 का कार्यक्रम

निर्धारित प्रयोजनों के लिए हिन्दी का प्रयोग :

'क' क्षेत्र में स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालय और सरकारी कम्पनियों, निगमों, आदि के कार्यालय निम्नलिखित लक्ष्यों का अनुपालन सुनिश्चित करें :—

(क) "क" क्षेत्र में स्थित किसी राज्य, संघ राज्य क्षेत्र या कार्यालय (केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों

के अलावा) या व्यक्ति से पत्र व्यवहार के लिए केवल हिन्दी का ही प्रयोग किया जाए । यदि अपवाद स्वरूप कोई पत्र अंग्रेजी में जारी किया जाए तो उसके साथ ही उसका हिन्दी अनुवाद भी भेजा जाए ।

संदर्भ—राजभाषा (संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग) नियम, 1976 का नियम 3 (1)

(ख) केन्द्रीय सरकार के किसी मंत्रालय या विभाग और "क" क्षेत्र में स्थित किसी सम्बद्ध अथवा अधीनस्थ कार्यालय के बीच कम से कम दो तिहाई पत्र-व्यवहार अनिवार्य रूप से हिन्दी में किया जाए ।
नियम 4(ख)

(ग) "क" क्षेत्र में स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों के बीच (मंत्रालयों तथा विभागों को छोड़कर) सभी पत्र व्यवहार केवल हिन्दी में किया जाए ।
नियम 4 (ग)

(घ) "ख" क्षेत्र में स्थित किसी राज्य, संघ राज्य क्षेत्र या कार्यालय (केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों को छोड़कर) से सामान्यतः हिन्दी में ही पत्र व्यवहार किया जाए । यदि उन्हें कोई पत्र अंग्रेजी में भेजा जाता है तो उसके साथ उसका हिन्दी अनुवाद भी भेजा जाए । नियम 3(2)

(ङ) हिन्दी में प्राप्त सभी पत्रों के उत्तर अनिवार्य रूप से हिन्दी में दिए जाएं । नियम 5

(च) हिन्दी में लिखे या हस्ताक्षर किए गए सभी आवेदनों, अपीलों या अभिवेदनों के उत्तर अनिवार्य रूप से हिन्दी में दिए जाएं । नियम 7 (2)

(छ) (i) जिन कार्यालयों के 80 प्रतिशत या उससे अधिक कर्मचारियों ने हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त कर लिया है उन कार्यालयों के नाम राजपत्र में अधिसूचित किए जाएं । इस संबध में प्रत्येक मंत्रालय द्वारा एक सर्वेक्षण किया जाए और उसके परिणाम विभाग को सूचित किए जाएं ।
नियम 10(4)

(छ) (ii) ऐसे अधिसूचित कार्यालयों में कर्मचारियों को अपना मूल कार्य हिन्दी में करने के लिए प्रेरित किया जाए ।

(ज) जिन अधिसूचित कार्यालयों में हिन्दी में प्रवीणता प्राप्त कर्मचारी काफी संख्या में हैं उन्हें नोटिंग, ड्राफ्टिंग तथा अन्य सरकारी प्रयोजनों के लिए हिन्दी के प्रयोग के लिए विनिर्दिष्ट करने में तेजी लाई जाए । नियम 8(4)

(झ) "ज" में उल्लिखित कार्यालयों के अतिरिक्त, अन्य कार्यालयों में भी, अधिकारियों/कर्मचारियों को हिन्दी में नोटिंग/ड्राफ्टिंग करने के लिए प्रोत्साहित किया जाए ।

निर्धारित प्रयोजनों के लिए हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं का प्रयोग किया जाना :

(क) निम्नलिखित प्रयोजनों के लिए हिन्दी और अंग्रेजी दोनों का प्रयोग सुनिश्चित किया जाए :—

(1) संकल्प, सामान्य आदेश, नियम, अधिसूचनाएं, प्रशासनिक या अन्य प्रतिवेदन तथा प्रेस विज्ञप्तियां;

(2) संविदाएं, करार, अनुज्ञप्तियां, अनुज्ञापत्र, निविदा सूचनाएं और निविदा प्रारूप;

(3) संसद के किसी सदन या सदनों के समक्ष रख जाने वाले प्रशासनिक तथा अन्य प्रतिवेदन और राजकीय कागज-पत्र ।

संदर्भ—राजभाषा अधिनियम की धारा 3(3)

(ख) निम्नलिखित प्रक्रिया साहित्य तथा स्टेशनरी आदि के लिए हिन्दी व अंग्रेजी का द्विभाषिक प्रयोग सुनिश्चित किया जाए :—

(1) मैनुअलों, संहिताओं और अन्य प्रक्रिया साहित्य को हिन्दी और अंग्रेजी में द्विभाषिक रूप में मुद्रित/साइकलोस्टाइल किया जाए और प्रकाशित किया जाए । इस प्रकार का जो साहित्य अनूदित हो चुका है उसे प्रकाशित कराने के लिए विशेष प्रयत्न किए जाएं ।

(2) फार्मों और रजिस्टरों के शीर्ष हिन्दी और अंग्रेजी दोनों में ही मुद्रित/साइक्लोस्टाइल कराए जाएं ।

(3) नाम-पट्ट, सूचना-पट्ट, पत्र-शीर्ष और लिफाफों तथा स्टेशनरी की अन्य मदों पर छपे या उत्कीर्ण लेख हिन्दी और अंग्रेजी दोनों में हों ।

(4) सरकारी क्षेत्र के उपक्रमों द्वारा तयार किए गए सामान पर उनके नाम आदि हिन्दी और अंग्रेजी दोनों में लिखे जाएं । इसके अतिरिक्त उनसे संबंधित विवरण भी हिन्दी और अंग्रेजी दोनो में ही दिए जाएं ।

(ग) अखिल भारतीय स्तर के या "क" क्षेत्र में जारी किए जाने वाले विज्ञापन हिन्दी और अंग्रेजी में साथ-साथ जारी किए जाएं और उन्हें संबंधित भाषा के समाचार पत्रों में प्रकाशित कराया जाए । इस सम्बन्ध में निम्नलिखित व्यवस्था प्रस्तावित है :—

(1) विज्ञापन और दृश्य प्रचार निदेशालय "क" क्षेत्र में स्थित कार्यालयों से विज्ञान की सामग्री हिन्दी तथा अंग्रेजी दोनों भाषाओं में उपलब्ध कराए जाने का आग्रह करें ।

(2) अन्य क्षेत्रों में स्थित कार्यालयों से यदि, अपवाद के रूप में, विज्ञापन की सामग्री केवल अंग्रेजी में स्वीकार की जाती है, तो निदेशालय स्वयं उसका हिन्दी रूपांतर तैयार करे ताकि विज्ञापन हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में साथ-साथ जारी किए जा सकें।

(3) "क" क्षेत्र में स्थित कार्यालयों द्वारा सीधे प्रकाशन के लिए भेजे जाने वाले विज्ञापन हिन्दी और अंग्रेजी दोनों में तैयार किए जाएं और साथ-साथ संबंधित भाषाओं की पत्र-पत्रिकाओं को जारी किए जाएं।

3. "क" क्षेत्र में स्थित कार्यालयों के बीच तार देवनागरी में भेजना :

कार्यालयों से भेजे जाने वाले तार भी पत्र-व्यवहार की श्रेणी में आते हैं। इसलिए, पत्र व्यवहार के समान ही "क" क्षेत्र में उन्हें केवल हिन्दी में भेजा जाना अपेक्षित है। लेकिन, वर्तमान स्थिति को देखते हुए प्रस्ताव है कि वर्ष 1982–83 के दौरान "क" क्षेत्र में स्थित कार्यालयों के बीच भेजे जाने वाले कम से कम 25 प्रतिशत तार देवनागरी में हों।

4. हिन्दी (देवनागरी) टाइपराइटरों की व्यवस्था :

"क" क्षेत्र में स्थित कार्यालयों के संबंध में यह सुनिश्चित किया जाए कि :—

(क) जिन कार्यालयों में देवनागरी का एक भी टाइपराइटर नहीं है उन सभी कार्यालयों में देवनागरी का कम से कम एक टाइपराइटर खरीद लिया जाए। इसके लिए 1 जुलाई, 1982 तक आर्डर दे दिए जाएं।

(ख) जिन कार्यालयों में देवनागरी के एक या अधिक टाइपराइटर पहले से उपलब्ध हैं, वे वर्ष 1982–83 में खरीदे जाने वाले कुल टाइपराइटरों के कम से कम 50 प्रतिशत टाइपराइटर देवनागरी के खरीदें। इसमें पुराने टाइपराइटरों के स्थान पर खरीदे गए नए टाइपराइटर भी शामिल माने जाएं।

(ग) विभिन्न कार्यालय नए देवनागरी टाइपराइटर खरीदने के अतिरिक्त, शेष कमी को पूरा करने के उद्देश्य से, रोमन लिपि के टाइपराइटरों में से आवश्यकतानुसार कुछ को देवनागरी लिपि के टाइपराइटरों में बदलवा लें।

5. अधीनस्थ सेवाओं तथा पदों के लिए आयोजित भर्ती परीक्षाओं में वैकल्पिक माध्यम के रूप में हिन्दी का प्रयोग :

यह सुनिश्चित किया जाए कि "क" क्षेत्र में स्थित कार्यालयों द्वारा अधीनस्थ सेवाओं और गैर तकनीकी पदों के लिए ली जाने वाली परीक्षाओं में, अंग्रेजी का एक प्रश्न-पत्र अनिवार्य रहते हुए भी, शेष विषयों के प्रश्न-पत्रों के उत्तर हिन्दी में देने की छूट दी जाए। ऐसे प्रश्न पत्र हिन्दी और अंग्रेजी दोनों ही भाषाओं में उपलब्ध कराए जाएँ।

6. प्रशिक्षण केन्द्रों में हिन्दी माध्यम से प्रशिक्षण देने की व्यवस्था :

विभिन्न मंत्रालय, विभाग, निगम, उपक्रम आदि कर्मचारियों की भर्ती के बाद उनके लिए प्रशिक्षण पाठ्यक्रम चलाते हैं। ऐसे अधिकांश पाठ्यक्रमों में अभी अंग्रेजी माध्यम का ही प्रयोग किया जाता है। सरकार की राजभाषा नीति को ध्यान में रखते हुए ये संस्थाएं अपने "क" क्षेत्र में स्थित प्रशिक्षण केन्द्रों के पाठ्यक्रमों में हिन्दी माध्यम से प्रशिक्षण देने की भी व्यवस्था करें।

7. विभागीय परीक्षाओं में हिन्दी का वैकल्पिक प्रयोग :

यह सुनिश्चित किया जाए कि "क" क्षेत्र में स्थित कार्यालयों द्वारा ली जाने वाली विभागीय परीक्षाओं में जहां ऐसा प्रावधान हो, अंग्रेजी विषय के अतिरिक्त अन्य सभी प्रश्न-पत्रों के उत्तर हिन्दी में देने की छूट दें और ऐसे प्रश्न-पत्र हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में तैयार कराए जाएं।

8. कुछ विशिष्ट नगरों में हिन्दी का प्रयोग बढ़ाने के लिए सघन प्रयास :

दिल्ली, लखनऊ, कानपुर, इलाहाबाद, आगरा, वाराणसी, देहरादून, मेरठ, झांसी, अलीगढ़, इज्जतनगर, भोपाल, इंदौर, जबलपुर, रतलाम, ग्वालियर, जयपुर, जोधपुर, अजमेर, उदयपुर, बीकानेर, पटना, रांची, धनवाद, अम्बाला, हिसार, फरीदाबाद, रोहतक और शिमला में स्थित कार्यालयों के काम काज में हिन्दी का गहन प्रयोग करने के लिए पिछले वर्ष के कार्यक्रम में कहा जा चुका है। इन नगरों में स्थित कार्यालयों के कामकाज में हिन्दी का गहन प्रयोग किया जाए। इसके लिए प्राथमिकता के आधार पर सुविधाएं उपलब्ध कराई जाएं और इन नगरों में गठित नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों को अधिक सक्रिय बनाया जाए।

इस वर्ष करनाल में नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति के गठन किए जाने का प्रस्ताव है।

9. आदेशों, अनुदेशों, आदि का अनुपालन सुनिश्चित करने के लिए जांच बिन्दुओं (चैकप्वाइंटों) की स्थापना :

अक्सर देखा गया है कि, विभिन्न कार्यालयों में राजभाषा अधिनियम, राजभाषा नियम और इस सम्बन्ध में जारी किये गये आदेशों, अनुदेशों, आदि के उपबन्धों का ठीक-ठीक अनुपालन नहीं हो पाता। इस व्यवस्था पर निगाह रखने के लिये सभी कार्यालयों में यथावश्यक जांच-बिन्दु बनाये जाने चाहियें। उनकी सूची नमूने के लिये संलग्न है। अनुरोध है कि वर्ष के दौरान सभी कार्यालय इस प्रकार के जांच बिन्दु बनायें और उन्हें प्रभावी ढंग से लागू करें जिससे राजभाषा सम्बन्धी व्यवस्थाओं का उचित अनुपालन हो सके।

10. कार्यालयों का निरीक्षण :

ये निदेश दिये गये हैं कि अधिकारी जब भी दौरे पर जायें तो वे अन्य बातों के अलावा इस बात की भी जांच

करें कि राजभाषा सम्बन्धी नियमों अनुदेशों, आदि का पालन किस सीमा तक किया जा रहा है। यह देखने में आया है कि मंत्रालय और विभाग इस प्रकार के निरीक्षणों पर अधिक ध्यान नहीं देते। सुझाव है कि वर्ष 1982-83 के दौरान प्रत्येक मंत्रालय/विभाग "क" क्षेत्र के कम से कम पांच नगरों में स्थित अपने कार्यालयों का निरीक्षण कराने की व्यवस्था करें और वहां राजभाषा अधिनियम और उस के अधीन बनाये गये नियमों तथा वार्षिक कार्यक्रम के अनुपालन की समीक्षा करायें। इस कार्य के लिये मंत्रालयों/विभागों में आवश्कतानसार निरीक्षण दल गठित किये जायें।

निरीक्षण के समय अधिकारी यह भी देखें कि नियमों आदेशों, आदि के उपबन्धों के अनपालन पर निगाह रखने वाले जांच बिन्दु कितने सक्रिय हैं। निरीक्षण के दौरान पाई गई कमियों को दूर करने के लिये भी प्रभावी कदम उठाये जायें।

11. अन्तर्राष्ट्रीय संधियों और करारों का हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में तैयार किया जाना :

राजभाषा विभाग द्वारा समय-समय पर जारी किये गये निदेशों के अनुसार अन्तर्राष्ट्रीय संधियों और करारों के लिये हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं का प्रयोग किया जाना आवश्यक है। अब यह तय किया गया है कि वर्ष 1982-83 के दौरान नीचे लिखे अनुसार कार्रवाई की जाये:—

(क) भारत में हस्ताक्षर की जाने वाली सभी संधियों और करारों को हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में तैयार कराया जाये और दोनों पाठों पर संबंधित पक्षों के हस्ताक्षर कराये जायें।

(ख) विदेशों में सम्पादित संधियों और करारों के प्रमाणित हिन्दी अनुवाद तैयार कराकर अभिलेख के लिये फाइल में रखे जायें। यदि इन्हें पहले से हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में तैयार कराना संभव हो तो दोनों पाठों पर हस्ताक्षर कराये जायें।

12. हिन्दी कार्यशालाओं का आयोजन :

विभिन्न कार्यालयों में हिन्दी का कार्य साधक ज्ञान रखने वाले कर्मचारियों की हिन्दी में काम करने की झिझक दूर करने के लिये इस वर्ष कम से कम एक बार हिन्दी कार्यशाला का आयोजन अवश्य किया जाये।

राजभाषा संबधी आदेशों के कार्यान्वयन के लिए प्रस्तावित जांच बिन्दु :

राजभाषा नियम, 1976 के नियम 12 के अनुसार केन्द्रीय सरकार के प्रत्येक कार्यालय के प्रशासनिक अध्यक्ष की यह जिम्मेदारी है कि वह राजभाषा अधिनियम, 1963 और उसके अधीन बनाये गये नियमों के उपबन्धों के समुचित अनुपालन के लिये प्रभावी जांच बिन्दु बनाये। कुछ स्थानों पर तो पहले से ही जांच विन्दु स्थापित हैं किन्तु जहां उपयुक्त जांच बिन्दु नहीं बनायें गये हैं वहां पर उन्हें बनाने और पहले से स्थापित जांच बिन्दुओं को अधिक प्रभावी बनाने की आवश्यकता है।

इस समय जो जांच विन्दु काम कर रहे हैं अथवा जो और बनायें जा सकते हैं उनका विवरण निम्नलिखित हैं :—

(1) फार्मो, कोडों, मैनुअलों और गजट की सामग्री का द्विभाषी प्रकाशन :

निर्माण और आवास मंत्रालय के अधीन भारत सरकार के प्रेस इस बात का ध्यान रखते हैं कि (क) भारत के गजट में छपने वाली अधिसूचनायें, नियम, संकल्प, तथा (ख) कोड, मनुअल, फार्म तथा रजिस्टरों के शीर्ष आदि हिन्दी तथा अंग्रेजी दोनों भाषाओं में हों। जो सामग्री दोनों भाषाओं में नहीं भेजी जाती उसे मुद्रण निदेशालय संबंधित विभाग को वापस कर देता है। इस प्रकार के जांच विन्दु भारत सरकार के अन्य मंत्रालयों के अधीन स्थापित प्रेसों में भी वनाये जाने चाहिये, जिससे ऐसी सामग्री केवल अंग्रेजी में न छपे।

2. देवनागरी टाइपराइटरों की खरीद :

वार्षिक कार्यक्रम के अनुसार विभिन्न मंत्रालयों और उनके कार्यालयों के लिये यह आवश्यक है कि वर्ष में खरीदे जाने वाले कुल टाइपराइटरों में से निर्धारित प्रतिशत टाइपराइटर देवनागरी लिपि के खरीदे जाएं। पूर्ति और निपटान महानिदेशालय अपने यहां प्राप्त होने वाले इंडेंटों की जांच करके यह देखता है कि आर्डर में निर्धारित अनुपात में देवनागरी टाइपराइट शामिल हैं या नहीं। जो विभाग, कार्यालय या उपक्रम अपने टाइपराइटरों की खरीद पूर्ति तथा निपटान महानिदेशालय की मार्फत न करके सीधे ही करते हैं, उन्हें भी इस प्रकार के जांच विन्दु बना लेने चाहियें। उनका जो अधिकारी टाइपराइटर खरीदने के लिये आर्डर देता है उसे यह देख लेना चाहिये कि क्या वर्ष के दौरान निर्धारित प्रतिशत के अनुसार देवनागरी टाइपराइटर मंगाये जा रहे हैं।

3. सामान्य आदेश आदि को अनिवार्य रूप से द्विभाषी रूप में जारी करना :

राजभाषा अधिनियम की धारा 3(3) में उल्लिखित सभी सामान्य आदेश, आदि हिन्दी तथा अंग्रेजी दोनों भाषाओं में जारी होने चाहियें। इसके लिये उस अनुभाग को जहां परिपत्र आदि साइक्लोस्टाइल किये जाते हैं जांच बिन्दु बना दिया जाये और ऐसे परिपत्र जो सामान्य आदेश की श्रेणी में आते हैं तभी साइक्लोस्टाइल किये जायें जब उनका हिन्दी रूपान्तर भी साथ भेजा गया हो। साथ ही जो अनुभाग परिपत्रों, आदि के प्रेषण का काम करता है, वहीं यह सुनिश्चित करें कि सभी प्रकार के परिपत्र तथा अन्य सामान्य आदेश साथ साथ हिन्दी में भी जारी हो रहे हैं। समय बद्धता को देखते हुए कोई सामान्य आदेश केवल हिन्दी या अंग्रेजी में जारी करना आवश्यक हो तो उसके लिये पहले से निश्चित किसी उच्च अधिकारी की अनुमति प्राप्त की जाये। लेकिन ऐसे प्रलेखों का हिन्दी या अंग्रेजी रूपान्तर भी अधिक से अधिक तीन दिनों में जारी कर दिया जाये।

4. "क" तथा "ख" क्षेत्र की राज्य सरकारों को भेज जाने वाले पत्र :

प्रेषण अनुभाग को जांच बिन्दु बनाकर उनसे यह सुनिश्चित करने के लिये कहा जाये कि वे "क" क्षेत्र की राज्य सरकारों को जाने वाले पत्रों को प्रेषण के लिये तभी स्वीकार करें जब वे हिन्दी में हों या उनका हिन्दी अनुवाद साथ हो। इन राज्यों को अंग्रेजी में पत्र भेजने की अनुमति देने के लिये किसी उच्च स्तर के अधिकारी को नामित किया जाये और वे अधिकारी देखें कि इस प्रकार की अनुमति विशेष परिस्थितियों में ही दी जाये, सामान्य तौर पर नहीं ।

5. लिफाफों पर पते हिन्दी में लिखना

प्रेषण अनुभाग को जांच बिन्दु बनाया जाये और यह सुनिश्चित किया जाये कि "क" क्षेत्र को जाने वाले पत्रों के लिफाफों पर पते देवनागरी लिपि में ही लिखे जायें ।

6. रबड़ की मोहरें, नाम पट्ट, साइनबोर्ड आदि द्विभाषी रूप में बनवाना

जो अनुभाग इन वस्तुओं को तैयार कराने का काम देखता है, उसके प्रभारी अधिकारी की जिम्मेदारी होनी चाहिये कि वह यह सुनिश्चित करे कि राजभाषा नियम, 1976 के नियम 11 में उल्लिखित वस्तुयें हिन्दी और अंग्रेजी में द्विभाषी रूप में तयार कराई जाएं।

7. सर्विस बुक में प्रविष्टियां :

जिस अनुभाग में कर्मचारियों की सर्विस बुकों में प्रविष्टियां करने का काम होता है उसके प्रभारी अधिकारी की यह जिम्मेदारी होनी चाहिये कि "क" तथा "ख" क्षेत्रों में काम करने वाले समूह "ग" और "घ" कर्मचारियों की सर्विस बुकों में की गई प्रविष्टियां हिन्दी में की जायें। इस बात की पड़ताल सर्विस बुक में प्रविष्टि करते समय या उस पर हस्ताक्षर करते समय कर ली जाये।

8. हिन्दी में प्राप्त पत्रों के उत्तर हिन्दी में देना :

जिस अधिकारी के हस्ताक्षर के अधीन कोई पत्र जारी होता है, स्वयं उस की यह जिम्मेदारी होनी चाहिये कि यदि पत्र हिन्दी में प्राप्त हुआ है तो उसका उत्तर हिन्दी में ही दिया जाये ।

9. सामान्य जिम्मेदारी :

राजभाषा अधिनियम और उसके अधीन बनाये गये नियमों के अनुसार जो पत्र, परिपत्र आदि हिन्दी में या हिन्दी—अंग्रेजी में जारी होने चाहियें या जो प्रलेख हिन्दी तथा अंग्रेजी दोनों भाषाओं में तैयार किये गये हों वे उसी रूप में जारी होते हैं यह देखने की जिम्मेदारी पत्र या प्रलेख पर हस्ताक्षर करने वाले अधिकारी की है। अतः हस्ताक्षर करने से पूर्व ऐसे अधिकारियों को यह सुनिश्चित कर लेना चाहिये कि ऐसे पत्र/परिपत्र/प्रलेख आदि द्विभाषिक रूप में जारी किये जायें।

II

"ख" क्षेत्र, अर्थात् महाराष्ट्र, गुजरात, पंजाब राज्यों और चंडीगढ़ तथा अंडमान निकोबार द्वीप समूह संघ राज्य क्षेत्रों, में स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों के लिए 1982–1983 का कार्यक्रम

1. निर्धारित प्रयोजनों के लिए हिन्दी का प्रयोग :

"ख" क्षेत्र में स्थित केन्द्र सरकार के कार्यालयों और केन्द्र सरकार की कम्पनियों, निगमों, आदि के कार्यालय यह सुनिश्चित करें कि निम्नलिखित प्रयोजनों के लिये यथासंभव हिन्दी का प्रयोग किया जाये :

(क) केन्द्र सरकार के किसी मंत्रालय अथवा विभाग के साथ पत्र-व्यवहार।

(ख) केन्द्र सरकार के "क" अथवा "ख" क्षेत्र में स्थित किसी कार्यालय से पत्र व्यवहार।

(ग) "क" और "ख" क्षेत्र में स्थित किसी राज्य, संघ राज्य क्षेत्र या कार्यालय (केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों से भिन्न) के साथ पत्र व्यवहार।

इस वर्ष के लिये यह लक्ष्य है कि उपर्युक्त प्रयोजनों के लिये कम से कम 40 प्रतिशत मात्रा में हिन्दी का प्रयोग अवश्य किया जाये।

2. हिन्दी में प्राप्त पत्रों के उत्तर :

हिन्दी में प्राप्त सभी पत्रों के उत्तर केवल हिन्दी में दिये जायें। इसी प्रकार हिन्दी में दिये गये आवेदनों अपीलों या अभिवेदनों के उत्तर भी हिन्दी में ही दिये जायें।

3. निर्धारित प्रयोजनों के लिए हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं का प्रयोग :

राजभाषा अधिनियम, 1963 की धारा 3(3) के अनुसार कुछ प्रयोजनों के लिये हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं का प्रयोग किया जाना कानूनी आवश्यकता है यह तय किया गया है कि इस वर्ष के दौरान निम्नलिखित प्रयोजनों के लिये हिन्दी और अंग्रेजी दोनों ही भाषाओं का प्रयोग सुनिश्चित किया जाये।

(1) सामान्य आदेश;
(2) संकल्प, अधिसूचनायें, नियम और प्रेस विज्ञप्तियां,
(3) प्रशासनिक तथा अन्य रिपोर्ट, और
(4) संविदा, करार, टेंडर सूचना और टेंडर फार्म।

4. केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों को राजपत्र में अधिसूचित करना :

राजभाषा (संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिये प्रयोग) नियम, 1976 के नियम 10(4) के अनुसार केन्द्रीय सरकार के जिन कार्यालयों के 80 प्रतिशत या उससे अधिक कर्मचारियों/अधिकारियों ने (समूह "घ" के कर्मचारियों को छोड़ कर) हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त कर लिया है उनके नाम राजपत्र में अधिसूचित किये जाने अपेक्षित हैं। "ख"

क्षेत्र में स्थित सभी केन्द्रीय कार्यालयों से संबंधित स्थिति की समीक्षा की जाये और जो-जो कार्यालय ऊपर लिखी शर्तें पूरी करते हों उनके नाम राजपत्र में अधिसूचित किये जाएं। ऐसे अधिसूचित कार्यालयों में मूल कार्य हिन्दी में करने का प्रयास किया जाये।

5. हिन्दी (देवनागरी) टाइपराइटरों की व्यवस्था :

राजभाषा अधिनियम, 1963 तथा उसके अन्तर्गत जारी किये गये राजभाषा (संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिये प्रयोग) नियम, 1976 के अनुपालन के लिये यह आवश्यक है कि केन्द्रीय सरकार के हर कार्यालय में पर्याप्त मात्रा में हिन्दी टाइपराइटर उपलब्ध हों। वर्ष के दौरान इस सम्बन्ध में निम्नलिखित लक्ष्य प्राप्त किये जायें :—

(i) केन्द्रीय सरकार के जिन कार्यालयों में देवनागरी का एक भी टाइपराइटर नहीं है उन सभी कार्यालयों में देवनागरी का कम से कम एक टाइपराइटर खरीद लिया जाये।

(ii) "ख" क्षेत्र में स्थित केन्द्रीय सरकार के जिन कार्यालयों में देवनागरी का कम से कम एक टाइपराइटर पहले से उपलब्ध है, वे वर्ष के दौरान खरीदे जाने वाले कुल टाइपराइटरों के कम से कम 25 प्रतिशत देवनागरी टाइपराइटर खरीदें।

(iii) बहुत से कार्यालयों में पैसे की कमी या किसी अन्य कारण से पर्याप्त देवनागरी टाइपराइटर नहीं खरीदे जा पाते। अतः नये देवनगरी टाइपराइटर खरीदने के अलावा, ऐसे कार्यालय देवनागरी टाइप राइटरों की शेष कमी को पूरा करने के लिये रोमन लिपि के अतिरिक्त टाइपराइटरों को देव नागरी टाइपराइटरों में बदलवाने की व्यवस्था करें।

6. सरकारी विज्ञापन हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में जारी करना :

"ख" क्षेत्र में स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों द्वारा जारी किये गये सभी अखिल भारतीय स्तर के अथवा "क" तथा संबंधित विज्ञापन हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में साथ-साथ जारी किये जायें।

इस सम्बन्ध में निम्नलिखित व्यवस्था प्रस्तावित है:—

(1) विज्ञापन और दृश्य प्रचार निदेशालय को भेजी जाने वाली विज्ञापन सामग्री यथासंभव हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में होनी चाहिये।

(2) पत्र-पत्रिकाओं आदि को सीधे भेजे जाने वाले विज्ञापनों की सामग्री सम्बन्धित कार्यालय द्वारा या अपने मुख्यालय/मंत्रालय की सहायता से हिन्दी और अंग्रेजी दोनों में तैयार करा कर भेजी जानी चाहिये।

(3) हिन्दी और अंग्रेजी में जारी किये गये विज्ञापन यथासंभव संबंधित भाषा की पत्र-पत्रिकाओं में ही प्रकाशित कराये जायें।

7. कुछ प्रमुख नगरों में हिन्दी का प्रयोग बढ़ाने के लिए सघन उपाय-नगर राजभाषा कार्यान्वियन समितियों का गठन :

"ख" क्षेत्र में स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों में हिन्दी का प्रयोग बढ़ाने का एक उपयोगी तरीका यह है कि उस क्षेत्र के प्रमुख नगरों जैसे बम्बई, अहमदाबाद, चण्डीगढ़, आदि में—जहां अनेक कार्यालयों के मुख्यालय भी स्थित हैं—हिन्दी का प्रयोग बढ़ाने के लिये सघन प्रयास किये जायें। इसके लिये वहां प्राथमिकता के आधार पर हिन्दी, हिन्दी आशुलिपि और हिन्दी टाइपिंग के प्रशिक्षण, देवनागरी टाइपराइटरों की खरीद और हिन्दी स्टाफ की नियुक्ति की व्यवस्था की जानी चाहिये। इसी दृष्टि से यह निर्णय किया गया था कि "ख" क्षेत्र के जिन प्रमुख नगरों में केन्द्रीय सरकार के 10 या उससे अधिक कार्यालय हैं वहां नगर राजभाषा कार्यान्विन समितियां गठित की जायें। इस निर्णय के अनुसार अब तक बम्बई, नागपुर, नासिक, पुणे, अहमदाबाद, बड़ौदा, राजकोट, भावनगर, अमृतसर, जालन्धर, लुधियाना और चण्डीगढ़ तथा पोर्ट ब्लेयर में नगर राजभाषा कार्यान्वियन समितियों का गठन किया जा चुका है। प्रस्ताव है कि इस वर्ष पटियाला और सूरत में भी नगर राजभाषा कार्यान्वियन समितियों का गठन किया जाये।

इस वर्ष के दौरान उपर्युक्त नगरों में स्थित कार्यालयों में हिन्दी के प्रयोग में तेजी लाने तथा नगर राजभाषा कार्यान्वियन समितियों को अधिक सक्रिय बनाने के लिये प्रयत्न किये जाने चाहिये। इस दिशा में निम्नलिखित उपायों पर विशेष तौर पर ध्यान दिया जाये:

(1) विभिन्न कार्यालयों के हिन्दी का कार्य साधक ज्ञान रखने वाले कर्मचारियों को हिन्दी में काम करने के प्रति झिझक दूर करने के लिये इस वर्ष कम से कम एक बार हिन्दी कार्यशाला का आयोजन किया जाये;

(2) हिन्दी के प्रगामी प्रयोग और सांविधिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये आवश्यक हिन्दी पदों के सृजन के लिये प्राथमिकता के आधार पर कार्रवाई की जाये, इस सम्बन्ध में राजभाषा विभाग का 27-4-81 का कार्यालय ज्ञापन संख्या 13035/3/80-रा० भा० (ग) विशेष रूप से देख लिया जाये, और

(3) जिन प्रयोजनों के लिये केवल हिन्दी अथवा हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं का प्रयोग अनिवार्य है उनका अनुपालन सुनिश्चित करने के लिये आवश्यक जांच बिन्दु (चैक प्वाइंट) स्थापित किये जाएँ।

8. केन्द्रीय सरकार के स्वामित्व अथवा नियंत्रणाधीन कम्पनियों और निगमों में हिन्दी का प्रयोग :

राजभाषा (संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिये प्रयोग) नियम, 1976 के अनुसार सरकारी कम्पनियों और निगमों के कार्यालयों को भी केन्द्रीय सरकार का कार्यालय माना गया है। अतः इन पर भी संघ की राजभाषा नीति समान रूप से लागू होती है। "ख" क्षेत्र में स्थित सभी कम्पनियों, निगमों और उनके कार्यालयों को चाहिए कि वे इस कार्यक्रम में दी गई मदों का अनुपालन करें। तथापि, क्योंकि कम्पनियों, निगमों, आदि में राजभाषा नीति का कार्यान्वयन कुछ देरी से आरम्भ हुआ है इसलिये वे उपर्युक्त उपायों के अलावा निम्नलिखित उपायों पर विशेष रूप से ध्यान दें:—

(1) हिन्दी न जानने वाले कर्मचारियों के लिये हिन्दी प्रशिक्षण और आशुलिपिकों/टाइपिस्टों के लिये हिन्दी आशुलिपि/हिन्दी टाइपिंग के प्रशिक्षण की व्यवस्था करना।

(2) प्रत्येक कार्यालय में देवनागरी का कम से कम एक और आवश्यकतानुसार अधिक टाइपराइटर खरीदना।

(3) कर्मचारियों के लिये हिन्दी में संदर्भ साहित्य की व्यवस्था करना।

(4) जिन सरकारी उद्यमों में सौ से अधिक व्यक्ति काम करते हैं उनमें आवश्यक संख्या में देवनागरी टाइपराइटर खरीदा जाना और जरूरत के मुताबिक हिन्दी टाइपिस्ट, हिन्दी आशुलिपिक, हिन्दी अनुवादक, तथा हिन्दी अधिकारी नियुक्त किया जाना।

(5) सरकारी उद्यमों में इस्तेमाल किये जा रहे फार्मों आदि का हिन्दी में अनुवाद कराया जाना तथा उन्हें द्विभाषिक रूप में छपवाया जाना। ऐसा करते समय जनता द्वारा इस्तेमाल किये जाने वाले फार्मों को प्राथमिकता दी जानी चाहिये ताकि जनता को द्विभाषिक फार्म उपलब्ध हों।

9. अन्तर्राष्ट्रीय संधियों और करारों का हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में तैयार किया जाना :

राजभाषा विभाग द्वारा समय-समय पर जारी किये गये निदेशों के अनुसार अन्तर्राष्ट्रीय संधियों और करारों के लिये हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं का प्रयोग किया जाना आवश्यक है। अब यह तय किया गया है कि वर्ष 1982-83 के दौरान नीचे लिखे अनुसार कार्रवाई की जाये:—

(क) भारत में हस्ताक्षर की जाने वाली सभी संधियों और करारों को हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में तैयार कराया जाये और उनके दोनों पाठों पर संबंधित पक्षों के हस्ताक्षर कराये जायें।

(ख) विदेश में सम्पादित संधियों और करारों के प्रामाणिक हिन्दी अनुवाद तैयार करा कर अभिलेख के लिये फाइल में रखे जायें। यदि उन्हें पहले से हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में तैयार करना संभव हो तो दोनों पाठों पर हस्ताक्षर करायें जायें। X X X X

III

"ग" क्षेत्र अर्थात् "क" और "ख" क्षेत्र में शामिल न किये गये सभी राज्यों/संघ राज्य क्षेत्रों में स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों के लिये 1982-83 का कार्यक्रम

1. निर्धारित प्रयोजनों के लिए हिन्दी का प्रयोग :

"ग" क्षेत्र में स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालय नीचे लिखे अनुसार हिन्दी का प्रयोग सुनिश्चित करें:—

(क) राजभाषा अधिनियम की धारा 3(3) में उल्लिखित प्रयोजनों के लिये हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं का प्रयोग सुनिश्चित किया जाये। इनमें एक प्रमुख उपाय गृह मंत्रालय के 6-8-73 के पत्र सं० ई०-11015/17/73 रा० भा० एकक के अनुसार न्यूनतम हिन्दी पदों का सृजन होना चाहिये। इस सम्बन्ध में राजभाषा विभाग का 27-4-81 का कार्यालय ज्ञापन सं० 13035/3/80-रा० भा० (ग) भी देखें।

(ख) "ग" क्षेत्र में स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालय अपने मंत्रालयों और विभागों, "क" और "ख" क्षेत्र में स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों और "क" और "ख" क्षेत्र में स्थित राज्य सरकारों को कम से कम 10 प्रतिशत पत्र हिन्दी में भेजें।

2. हिन्दी में प्राप्त पत्रों के उत्तर :

हिन्दी में प्राप्त सभी पत्रों के उत्तर हिन्दी में ही देने की व्यवस्था की जाये। इसी प्रकार स्टाफ द्वारा हिन्दी में दिये गये आवेदनों, अपीलों, आदि के उत्तर भी हिन्दी में ही दिये जाएं।

3. केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों को राजपत्र में अधिसूचित करना :

राजभाषा (संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिये प्रयोग नियम, 1976 के नियम 10(4) के अनुसार केन्द्रीय सरकार के जिन कार्यालयों के 80 प्रतिशत या उससे अधिक कर्मचारियों/अधिकारियों ने (समूह "घ" के कर्मचारियों को छोड़ कर) हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त कर लिया है उनके नाम राजपत्र में अधिसूचित किये जाने अपेक्षित हैं। वर्ष के दौरान "ग" क्षेत्र में स्थित ऐसे कार्यालयों का पता लगाया जाये और उनके नाम राजपत्र में अधिसूचित किये जायें।

5. हिन्दी (देवनागरी) टाइपराइटरों की व्यवस्था :

राजभाषा अधिनियम, 1963 तथा उसके अन्तर्गत जारी किये गये राजभाषा (संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिये प्रयोग) नियम, 1976 के अनुपालन के लिये यह आवश्यक है कि केन्द्रीय सरकार के हर कार्यालय में पर्याप्त हिन्दी टाइपराइटर उपलब्ध हैं। वर्ष के दौरान इस सम्बन्ध में निम्नलिखित लक्ष्य प्राप्त किये जायें:—

(i) केन्द्रीय सरकार के जिन कार्यालयों में देवनागरी का एक भी टाइपराइटर नहीं है उन सभी कार्यालयों

में देवनागरी का कम से कम एक टाइपराइटर खरीद लिया जाये।

(2) "ग" क्षेत्र में स्थित केन्द्रीय सरकार के जिन कार्यालयों में पहले से ही कम से कम एक देवनागरी टाइपराइटर उपलब्ध है, वे वर्ष के दौरान खरीदे जाने वाले कुल टाइपराइटरों के कम से कम 10 प्रतिशत देवनागरी टाइपराइटर खरीदें।

6. सरकारी विज्ञापन हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में जारी करना :

वर्ष के दौरान "ग" क्षेत्र में स्थित केन्द्रीय सरकार के कार्यालयों और सरकारी कम्पनियों, निगमों, आदि द्वारा जारी किये गये सभी अखिल भारतीय स्तर के विज्ञापन हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में साथ-साथ जारी किये जायें। इस दृष्टि से विज्ञापन और दृश्य प्रचार निदेशालय को भेजी गई विज्ञापन सामग्री भी यथासंभव हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में होनी चाहिये।

6. केन्द्रीय सरकार के कर्मचारियों का हिन्दी प्रशिक्षण :

केन्द्रीय सरकार के कामकाज में हिन्दी का प्रयोग बढ़ाने की दृष्टि से यह आवश्यक है कि सभी हिन्दी न जानने वाले कर्मचारियों को हिन्दी में प्रशिक्षित कराया जाये। इसी प्रकार अंग्रेजी आशुलिपिकों और अंग्रेजी टाइपिस्टों को हिन्दी आशुलिपि/हिन्दी टाइपिंग में प्रशिक्षित किया जाना आवश्यक है। अतः वर्ष के दौरान हिन्दी न जाने वाले अधिक से अधिक कर्मचारियों को प्रशिक्षित कराया जाये। इसके लिये भारत सरकार, राजभाषा विभाग के अधीन संचालित हिन्दी शिक्षण योजना का पूरा-पूरा लाभ उठाया जाना चाहिये। जहां हिन्दी शिक्षण योजना के प्रशिक्षण केन्द्र नहीं हैं वहां केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, शिक्षा मंत्रालय, वेस्ट, ब्लाक 7, रामकृष्ण पुरम, नई दिल्ली द्वारा संचालित पत्राचार पाठ्यक्रम या अन्य स्थानीय व्यवस्था का लाभ प्राप्त करने के लिये कर्मचारियों को प्रोत्साहित किया जाना चाहिये। इसके अतिरिक्त विभिन्न कार्यालयों में हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान रखने वाले कर्मचारियों की हिन्दी में काम करने की झिझक दूर करने के लिये अलग-अलग या मिला कर हिन्दी कार्यशालाओं का आयोजन किया जाये।

7. केन्द्रीय सरकार के स्वामित्व अथवा नियंत्रणाधीन कम्पनियों और निगमों में हिन्दी का प्रयोग :

राजभाषा (संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिये प्रयोग) नियम, 1976 के अनुसार सरकारी कम्पनियों तथा निगमों के कार्यालयों को भी केन्द्रीय सरकार का कार्यालय माना गया है। अतः इन पर भी संघ की राजभाषा नीति समान रूप से लागू होती है। "ग" क्षेत्र में स्थित सभी कम्पनियों, निगमों और उनके कार्यालयों को चाहिये कि वे इस कार्यक्रम में दी गई मदों का अनुपालन करें। तथापि, क्योंकि कम्पनियों, निगमों आदि में राजभाषा नीति का कार्यान्वयन कुछ देरी से आरम्भ हुआ है इसलिये वे निम्नलिखित उपायों पर विशेष रूप से ध्यान दें:—

(1) हिन्दी न जानने वाले कर्मचारियों के लिये हिन्दी प्रशिक्षण की व्यवस्था और आशुलिपिकों/टाइपिस्टों के लिये हिन्दी आशुलिपि/हिन्दी टाइपिंग के प्रशिक्षण की व्यवस्था;

(2) प्रत्येक कार्यालय में देवनागरी का कम से कम एक और आवश्यकतानुसार अधिक टाइपराइटर खरीदना;

(3) कर्मचारियों के लिये हिन्दी में सन्दर्भ साहित्य की व्यवस्था;

(4) जिन सरकारी उद्यमों में सौ से अधिक व्यक्ति काम करते हैं उनमें आवश्यकतानुसार हिन्दी टाइपिस्ट, हिन्दी आशुलिपिक; हिन्दी अनुवादक तथा हिन्दी अधिकारी नियुक्त किये जायें।

8. नगर राजभाषा का कार्यान्वयन समितियों का गठन :

"क" और "ख" क्षेत्र के प्रमुख नगरों म जहां केन्द्रीय सरकार के 10 या उससे अधिक कार्यालय स्थित हैं, नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों के गठन से सरकार को राजभाषा नीति के अनुपालन और हिन्दी के प्रगामी प्रयोग में बहुत सहायता मिली है। संबंधित नगर के विभिन्न केन्द्रीय कार्यालयों में गठित राजभाषा कार्यान्वयन समितियों के अध्यक्ष इस समिति के सदस्य होते हैं और नगर के सबसे वरिष्ठ केन्द्रीय सरकार के अधिकारी इसके अध्यक्ष होते हैं।

अब यह तय किया गया है कि "ग" क्षेत्र के प्रमुख नगरों में भी नगर राजभाषा कार्यान्वयन समितियों का गठन किया जाये। तदनुसार श्रीनगर, कलकत्ता, मैसूर, कोचीन, बंगलौर, त्रिवेन्द्रम, हैदराबाद, विशाखापत्तनम, भुवनेश्वर, तथा गोहाटी में नगर राजभाषा कार्या[illegible] समितियां गठित की जा चुकी हैं। प्रस्ताव है कि इस वर्ष पणजी (गोवा), कटक, दार्जिलिंग, और गंगटोक (सिक्किम) में राजभाषा कार्यान्वयन समितियां गठित की जाएं।

9. अन्तर्राष्ट्रीय संधियों और करारों का हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में जारी किया जाना :

राजभाषा विभाग द्वारा समय-समय पर जारी किये गये निदेशों के अनुसार अन्तर्राष्ट्रीय संधियों और करारों के लिये हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं का प्रयोग किया जाना आवश्यक है। अब यह तय किया गया है कि वर्ष 1982-83 के दौरान नीचे लिखे अनुसार कार्रवाई की जाये :—

(क) भारत में हस्ताक्षर की जाने वाली सभी संधियों और करारों को हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में तैयार कराया जाये और उनके दोनों पाठों पर संबंधित पक्षों के हस्ताक्षर कराये जायें।

(ख) विदेश में सम्पादित संधियों और करारों के प्रामाणिक हिन्दी अनुवाद तैयार कराकर, अभिलेख के लिये फाइल में रखे जायें। यदि इन्हें पहले से हिन्दी और अंग्रेजी दोनों भाषाओं में तैयार कराना संभव हो तो दोनों पाठों पर हस्ताक्षर कराये जायें।

□ □ □

अतोत के झरोखे से :

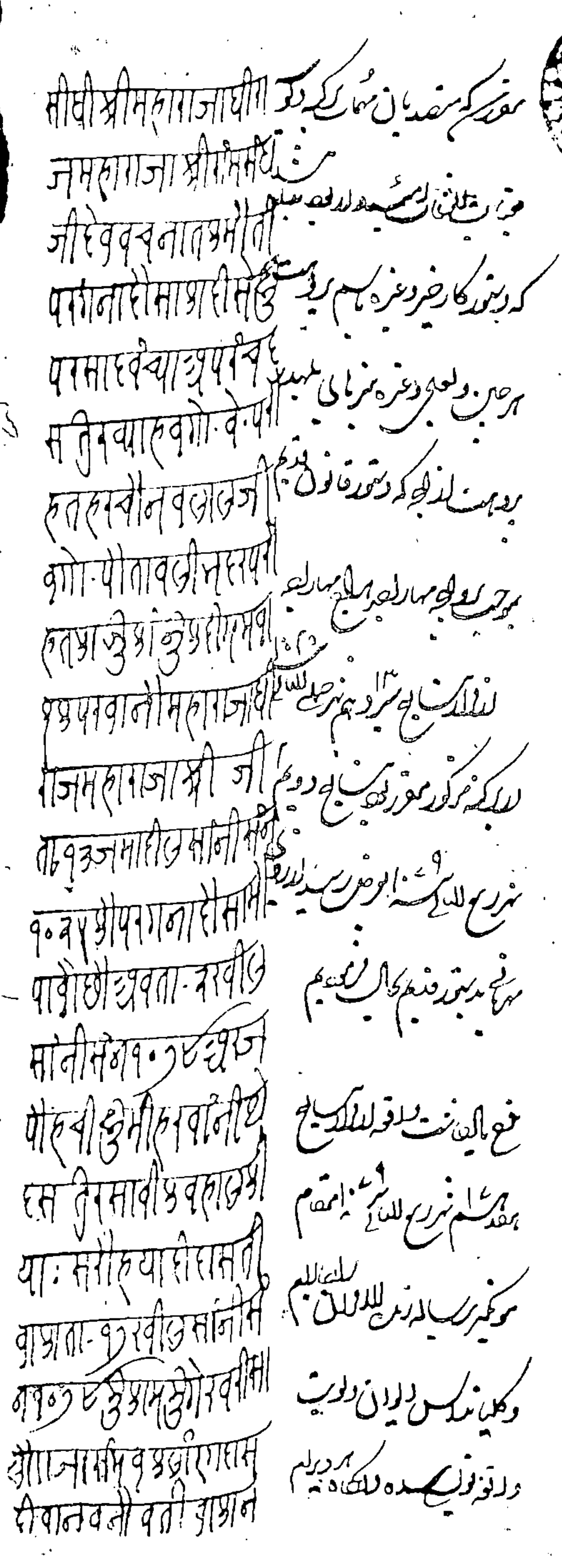

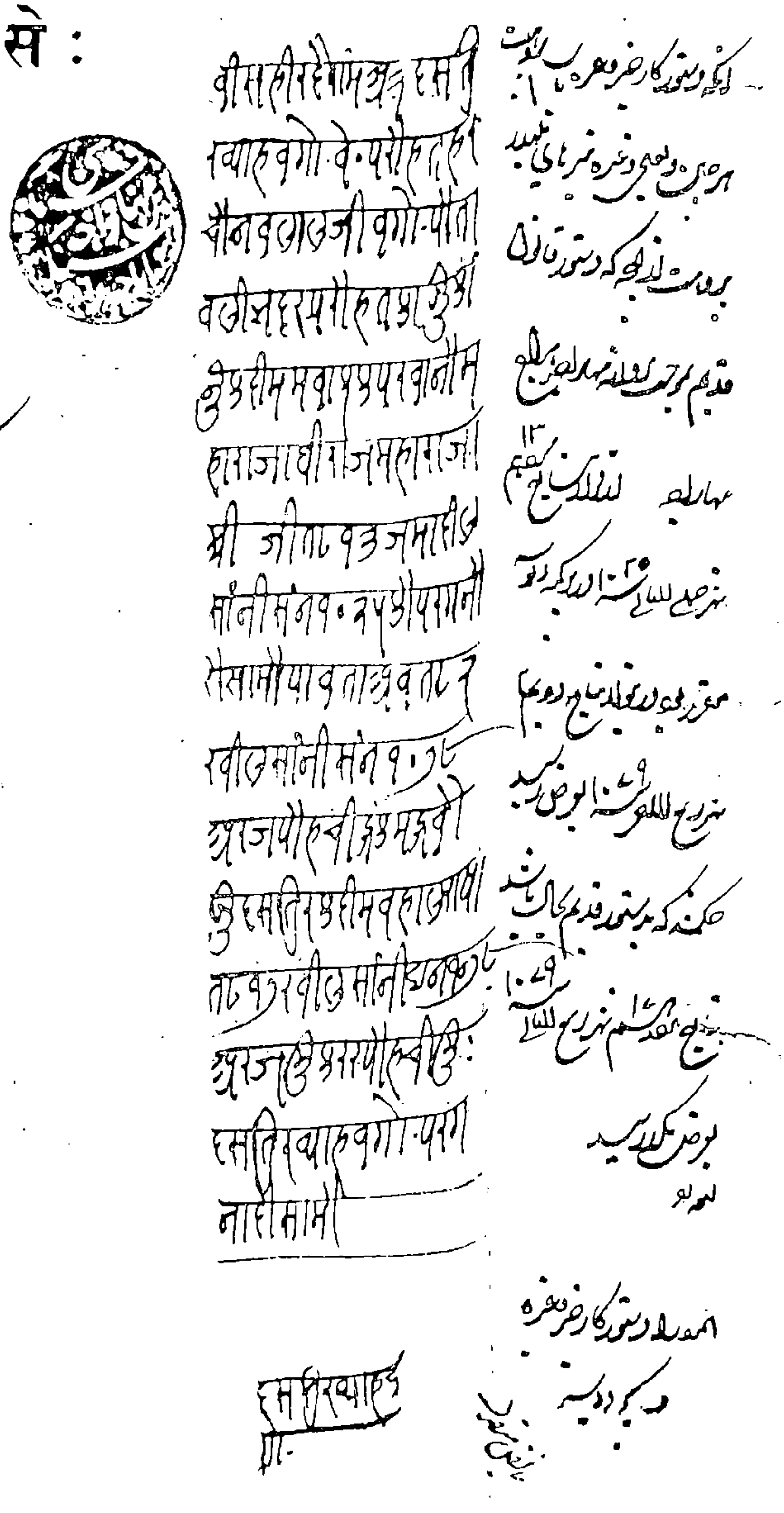

[जयपुर महाराजा श्री राम सिंह ने यह पट्टा अपने राज पुरोहित बलभद्र जी के बेटे के विवाह के अवसर पर सन् 1760 में उपहार स्वरूप दिया था । इसकी तिथि दो–रबीउल सन् एक हजार उन्नासी हिजरी हैं । पट्टे के जारी होने के बाद जिन-जिन विभागों से यह गुजरता था, वहां की मोहरें उस पर लगा दी जाती थीं । इस पट्टे के प्राप्तकर्ता के उत्तराधिकारी श्री गोपीवल्लभ जी हैं, जो आज भी जयपुर नरेश के राजघराने के राज पुरोहित हैं ।]

(प्रेषक : गोविन्ददास खण्डेलवाल, जयपुर)

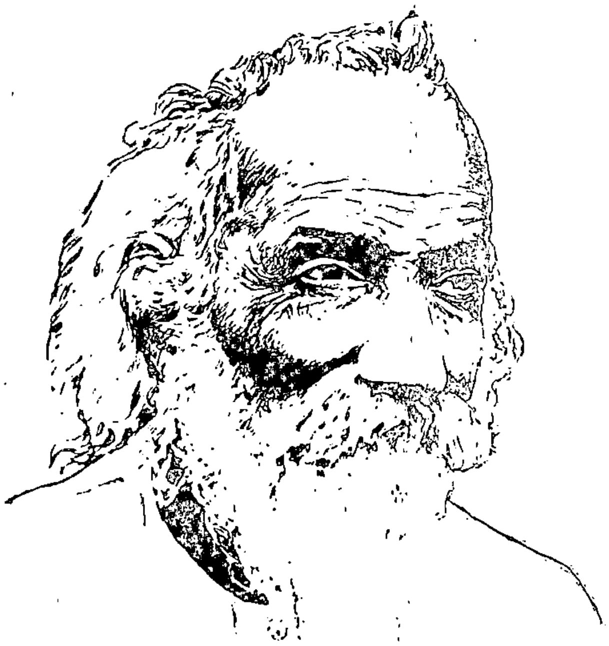

राष्ट्रीय जागृति मातृभाषा के प्रचार के बिना नहीं हो सकती । मातृभाषा के द्वारा कला-कौशल और साहित्य को पुनर्जीवित करना देश के शुभचिन्तकों का प्रधान कर्तव्य है । यदि हमें संसार में जीवित रहना है, यदि हमें अपनी पूर्व कीर्तियों की लाज रखनी है तो परमावश्यक है कि सबसे प्रथम हम अपनी मातृभाषा की उन्नति में संलग्न हों, उसे अपना सर्वस्व जानें और संसार में सर्वप्रिय वस्तु मानें और उसके उद्धार के लिए कटिबद्ध रहें ।

—राजर्षि पुरुषोत्तम दास टण्डन

राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार के लिए श्री रंगनाथ त्रिपाठी 'राकेश' द्वारा लोकनायक भवन, खान मार्केट, नई दिल्ली से प्रकाशित तथा प्रबन्धक, भारत सरकार मुद्रणालय, फरीदाबाद द्वारा मुद्रित ।